॥ श्रीः ॥

योगचिन्तामणि ।

श्रीमद्दिगम्बर श्रीहर्षकीर्ति निर्मित ।

अयोध्या मण्डलान्तर्वर्ति लखीमपुर खीरी
निवासि पंडित सीताराम कृत
भाषाटीका सहित ।

अथ च

केवल आवरणपृष्ठ

मूल्यम् २॥)

॥ श्रीः ॥

योगचिन्तामणि-

भाषा टीका सहित

टीकाकार—

पं० बुध सीताराम,

निवासी—लखीमपुर, खीरी।

प्रकाशक—

भार्गव पुस्तकालय, काशी।

मुद्रक—

शिवराम मालिक,

दी नेशनल प्रेस, बनारस कैण्ट।

१ ली बार] १९८१ वि० [मूल्य २॥)
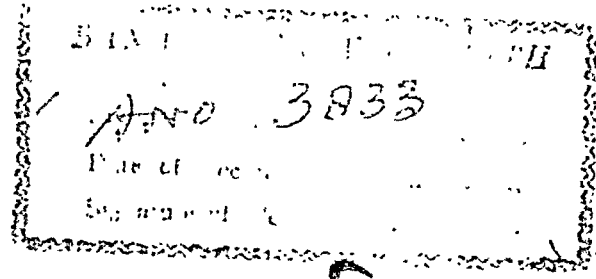
भूमिका।

इस संसार में प्राणीमात्र के घातक दुःख तीन प्रकार के हैं १ आध्यात्मिक २ आधिदैविक, ३ आधिभौतिक, इनमें आध्यात्मिक दुःख दो प्रकार के हैं १ शारीरक, २ मानसिक शारीरक दुःख वे हैं जो वातपित्तकफ इन तीनों के बिगड़ने से प्रगट हो जाते हैं और मानसिक दुःख वे हैं जो काम क्रोध लोभ मोह ईर्षा आदि के द्वारा होते हैं। आधिभौतिक दुःख वे हैं जो मनुष्य पशु पक्षी और सर्प आदि के द्वारा होते हैं। तथा आधिदैविक दुःख वे हैं जो ग्रह और यक्ष राक्षस आदि के द्वारा होते हैं। आध्यात्मिक दुःखों में मानसिक दुःखों का सामान्य उपाय नीतिशास्त्र है और श्रेष्ठ उपाय अध्यात्म शास्त्र का अभ्यास है। आधिभौतिक दुःखों के उपचार के निमित्त ज्योतिष शास्त्र है और शारीरिक दुःख जो वातपित्तकफ की विषमता से होते हैं और आधिदैविक दुःख जो सर्प आदि के काटने पशु आदि द्वारा घाव मारने और काँटा आदि के लगने से होते हैं उनके उपघात के उपाय के निमित्त वैद्यक शास्त्र उपकारक है। वैद्यक शास्त्र के सैकड़ों ग्रन्थ भाषाटीका सहित इस समय प्रचलित हैं, परन्तु उनमें बहुत से ग्रन्थ ऐसे हैं जो दूसरे ग्रन्थों से संग्रह किए गये हैं, यह योग-चिन्तामणि ग्रन्थ भिषक् शिरोमणि श्री हर्ष कीर्ति निर्मित प्राचीन और प्रसिद्ध है। अब तक केवल संस्कृत में होने से सर्व साधारण की समझ में नहीं आसकता था, इस कारण इसकी भाषा टीका सरलभाषा में किया है, इस ग्रन्थ के रचयिता ने इसमें रोगों के लक्षण इत्यादि नहीं लिखे पर अनेक साधारण तथा कष्ट साध्यरोगों की चिकित्सा विधि और उनकी औषधियों का एक भंडार एकत्रित किया है जो वास्तविक इस ग्रन्थ के नाम के अनुसार औषधियों में मणि ही है और आशा है कि इसके भाषाटीका हो जाने से सर्व साधारण का बहुत उपकार होगा।

यह ग्रन्थ वैद्यवर श्री हर्षकीर्ति जी ने आत्रेय, हारीत, सुश्रुत, चरक, वाग्भट, भेड, भाव मिश्र आदि आयुर्वेदाचार्यों के ग्रन्थों के आधार से निर्माण किया है। इसमें पहले मंगलाचरण फिर वैद्यलक्षण, रोगीलक्षण, नाडीपरीक्षा, मूत्रपरीक्षा, नेत्रपरीक्षा, मुखपरीक्षा, जिह्वापरीक्षा, मलपरीक्षा, शब्दपरीक्षा, स्पर्श-

परीक्षा कहकर आयुविचार, आयुलक्षण, और कालज्ञान, देशज्ञान तथा औषधियों के नाम की परिभाषा एवं शारीरक कथन किया है, अनन्तर सात अध्याय में सम्पूर्ण रोगों पर पाक, चूर्ण, गुटिका, क्वाथ, घृत, तैल, अवलेह, रसायन आदि वर्णन किये हैं। तहाँ पहले अध्याय में अनेक प्रकार के पाक कहे हैं, दूसरे अध्याय में अनेक प्रकार के चूर्ण कहें हैं, तीसरे अध्याय में अनेक रोगों पर अनेक प्रकार की गुटिका (पंचानन घोडाचोली आदि) वर्णन की हैं, चौथे अध्याय में अनेक रोगों पर अनेक क्वाथ वर्णन किये हैं, पाचवें अध्याय में अनेक प्रकार के घृत कहे हैं, छठे अध्याय में अनेक प्रकार के तेल हैं, सातवें अध्याय में अनेक गुग्गुल रस, आसव लेप आद कथन किये हैं, इस कारण यह ग्रन्थ समस्त मनुष्यों को अत्यन्त हितकारी है, इसके छापने का सर्वाधिकार भार्गव भूषण प्रेसाध्यक्ष के निमित्त सर्वदा को दे दिया है, यदि मनुष्य धर्मानुसार इसमें कहीं कुछ भूल रह गई हो उसे सज्जन जन क्षमा करें, द्वितीय आवृत्ति में भूल सुधर जायगी, शुभमित्यलम्।

सत्कृपाभाजन—

श्रधसीताराम—लखीमपुर खीरी।

योगचिन्तामणि की अनुक्रमणिका।

चूर्णाधिकारो नाम द्वितीयोऽध्यायः

गुटिकाधिकारोनामतृतीयोऽध्यायः

क्वाथाधिकारो नाम चतुर्थोऽध्यायः

घृताधिकारो नाम पंचमोऽध्यायः

योगचिंतामणिः समाप्तः।

शुभमिति ॥

॥ श्रीः ॥

योगचिन्तामणि ।

भाषाटीका सहित ।

मङ्गलाचरण

यत्र वित्र समायान्ति तेजांसि च तमांसि च ॥
महीयस्तदहं वन्दे चिदानन्दमयं महः ॥१॥

तेज (प्रकाश) और तम (अन्धकार) यह दोनों जिसमें लीन हो जाते हैं उस वड़े तेज-समूह चिदानन्दमय परमात्मा की मैं वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥

जगत्त्रितयलोकानां पापरोगापनुत्तये ॥
यद्वाक्यभेषजं भाति श्रीजिनः सः श्रियेऽस्तु वः ॥२॥

त्रिलोकी के मनुष्यों के पापरूपी रोगों को जिनका वचन औषधि के समान शोभा को प्राप्त होता है ऐसे श्रीजिन तीर्थंकर आप सबको कल्याणदायक होवें ॥ २ ॥

सिद्धौषधानि पथ्यानि रागद्वेषरुजो जयेत् ॥
जयन्ति यद्वचांस्यत्र तीर्थकृत्सोऽस्तु वः श्रियै ॥३॥

जिनका वचन सिद्ध औषध और पथ्यरूप से रागद्वेषरूपी रोगों को जीत लेता है एवं जिनके वचन से भक्तजन जय को प्राप्त होते हैं, ऐसे तीर्थंकर इस संसार में आप सबको लक्ष्मी देनेवाले होवें ॥ ३ ॥

अथ ग्रन्थारम्भः ।

श्रीसर्वज्ञं प्रणम्यादौ मानकीर्तिं गुरुं ततः ॥
योगचिन्तामणिं वक्ष्ये बालानां बोधहेतवे ॥४॥

अब ग्रन्थ के आरम्भ में श्री हर्ष कीर्ति कहते हैं कि प्रथम गुरुदेव श्रीमान कीर्ति सर्वज्ञ को प्रणाम करके बालबुद्धि जनों को बोध होने के निमित्त योग चिन्तामणि ग्रन्थ को हम वर्णन करते हैं ॥ ४ ॥

प्राप्ताः प्रसिद्धिं सर्वत्र सुखबोधाश्च ते यतः ॥
अतः पुरातनैरेव पाठः संगृह्यते मया ॥५॥

सब स्थानों में प्राप्त और प्रसिद्ध एवं सुखपूर्वक बोध होने के कारण पुरातन पाठ को मैं संग्रह करता हूं अर्थात् यह ग्रन्थ में प्राचीन ग्रन्थों से संग्रह कर के प्रसिद्ध करता हूं अपनी नवीन कल्पना इसमें कुछ नहीं है ॥ ५ ॥

नूतनपाठे विहिते नादरमिह पंडिता यतः कुर्युः ॥
तस्मादार्षवचोभिर्निबध्यते नत्वसामर्थ्यात् ॥६॥

ग्रन्थ में नवीन पाठ होने से कदाचित् पंडित जन आदर न करें इस कारण धन्वन्तरि, सुश्रुत, चरक, वाग्भट आदि प्राचीन आचार्यों के वचनों के अनुसार मैं यह ग्रन्थ रचता हूं कुछ असमर्थता से नहीं ॥ ६ ॥

अध्यायों के नाम तथा संख्या ।

पाकचूर्णगुटीक्वाथघृततैलाः समिश्रकाः ॥
अध्यायाः सप्त वक्ष्यन्ते ग्रन्थेऽस्मिन्सारसंग्रहे ॥७॥

इस सार संग्रहरूपी ग्रन्थ में १ पाक (पाग) २ चूर्ण (चूरन) ३ गुटिका (गोली) ४ क्वाथ (काढ़ा) ५ घृत (घी) ६ तैल (तेल) ७ मिश्र (गूगुल आदि) यह सात अध्याय वर्णन किये हैं ॥ ७ ॥

वैद्य लक्षण ।

स्थिरचित्तः प्रसन्नात्मा मनसा च विशारदः ॥
अंगुलीभिस्पृशेन्नाडीं जानीयाद्दक्षिणे करे ॥८॥

जिसका चित्त स्थिर हो अन्तःकरण में प्रसन्नता हो वह बुद्धिमान वैद्य मन से दाहिने हाथ की अंगुलियों कर के नाडी को भली भाँति देखकर जाने ॥८॥

नाड्या मूत्रस्य जिह्वाया लक्षणं यो न विन्दते ॥
मारयत्याशु वै जन्तून्स वैद्यो न यशो लभेत् ॥९॥

नाडी, मूत्र और जीभ के लक्षण जो वैद्य नहीं जानता है वह वैद्य प्राणियों को शीघ्र मारनेवाला होता है, उसको यश नहीं मिलता है ॥ ९ ॥

रोगी लक्षण ।

त्यक्तमूत्रपुरीपस्य सुखासीनस्य रोगिणः ॥
अन्तर्जानुकरस्यापि सम्यक् नाडीं परीक्षयेत् ॥१०॥

जो रोगी मूत्र और मल को त्याग कर चुका हो अर्थात् शौच से निपट आया हो, सुख से बैठा हो, जानु के बीच में हाथ रक्खे हो वैद्य जन ऐसे रोगी की नाडी की परीक्षा करे अर्थात् नाडी देखे ॥१०॥

नाडी परीक्षा ।

स्त्रीणां भिषग् वामहस्ते पुरुषाणां तु दक्षिणे ॥
शास्त्रेण संप्रदायेन तथा स्वानुभवेन च ॥११॥

वैद्यजन स्त्रियों के बायें हाथ की और पुरुषों के दाहिने हाथ की नाडी वैद्यक शास्त्र की रीति से तथा अपने अनुभव से विचार कर देखें ॥ ११ ॥

परीक्षेद्रत्नवत्तासावभ्यासादेव जायते ॥
वारत्रयं परीक्षेत धृत्वा धृत्वा विमुच्य च ॥१२॥

और परीक्षा करे जैसे जौहरी अपने अभ्यास से रत्नों की परीक्षा करता है उसी प्रकार तीन वार परीक्षा करे हाथ को नाडी पर रख २ कर छोड़ देवे ॥१२॥

विमृश्य बहुधा बुद्धया रोग व्यक्तिं विनिर्दिशेत् ॥
वातं पित्तं कफं द्वंद्वं त्रिदोषं सन्निपातकम् ॥ १३ ॥

जब अपनी बुद्धि से रोग भली भाँति समझ में आ जावे तब रोग को प्रगट करे, वात, पित्त, कफ, दो दोषों से उत्पन्न, त्रिदोष, सन्निपात ॥ १३ ॥

साध्यासाध्यविवेकं च सर्वं नाडी प्रकाशयेत् ॥
करस्याङ्गुष्ठमूले या धमनी जीवसाक्षिणी ॥ १४ ॥

साध्य और असाध्य इन सब के विवेक को नाडी प्रकाश करती है। हाथ के अँगूठे की जड़ में जीव की साक्षिणी धमनी नाम वाली नाडी है ॥ १४ ॥

तच्चेष्टया सुखं दुःखं ज्ञेयं कायस्य पंडितैः ॥
धत्ते नाडी मरुत्कोपे जलौकासर्पयोर्गतिम् ॥ १५ ॥
कुलिंगकाकमंडूकगतिं पित्तस्य कोपतः ॥
हंसपारावतगतिं धत्ते श्लेष्मप्रकोपतः ॥ १६ ॥
लावतित्तिरवर्तीनां गमनं सन्निपाततः ॥
कदाचिन्मन्दगमना कदाचिद्वेगवाहिनी ॥ १७ ॥

उस नाडी की गति से शरीर के सुख दुःख को पंडित जन जान लेवें, वात के कोप की नाडी जोंक और साँप की गति को धारण करती है अर्थात् जोंक और साँप की चालवाली होती है ॥ १५ ॥ और कुलिंग (चटक) पक्षी, कौआ, और मेंढक की चाल वाली नाडी पित्त के कोप से जानना, तथा कफ के कोप से नाडी हंस और कबूतर की चाल चलती है ॥ १६ ॥ एवं सन्निपात के कोप से नाडी लवा तीतर और बटेर की चाल चलती है और जो कभी धीमी चले और कभी वेग से चले ॥ १७ ॥

द्विदोषकोपतो ज्ञेया हन्ति च स्थानविच्युता ॥
स्थित्वास्थित्वा चलति या सा स्मृता प्राणघातिनी ॥ १८ ॥
अतिक्षीणा च शीता च जीवितं हन्त्यसंशयम् ।
ज्वरकोपेन धमनी सोष्णा वेगवती भवेत् ॥ १९ ॥

तो उसको दो दोष के कोप वाली नाडी जानना तथा जो नाडी अपने स्थान को छोड़ दे, अथवा ठहर ठहर कर चले तो वह नाडी प्राणघातिनी कहाती है अर्थात् वह प्राणों को नाश करती है ॥ १८ ॥ और जो नाडी बहुत धीमी और बहुत ठंढी चलती है वह अवश्य प्राणों को हरती है, ज्वर के कोप से नाडी गरम और जलदी जलदी चलती है ॥ १९ ॥

कामात्क्रोधाद्वेगवहा क्षीणा चिन्ताभयप्लुता ॥
मन्दाग्नेः क्षीणधातोश्च नाडी मन्दतरा भवेत्॥ २० ॥
असृक्पूर्णा भवेत्सोष्णा गुर्वी सामा गरीयसी॥
लघ्वी वहति दीप्ताग्नेस्तथा वेगवती मता ॥ २१ ॥

काम और क्रोध वाले की नाडी भी जलदी जलदी चलती है, और चिन्ता व भययुक्त पुरुष की नाडी धीमी चलती है। मन्दाग्नि और क्षीणधातु वाले की नाडी भी धीमी चलती है ॥ २० ॥ रुधिर विकार वाले की नाडी गरम चलती है और भारी होती है, एवं आँव विकारवाले की नाडी भारी होती है तथा तेज़ अग्निवाले की नाडी बहुत जलदी जलदी चलती है ॥ २१ ॥

सुखिनः सा स्थिरा ज्ञेया तथा बलवती मता ॥
चपला क्षुधितस्यापि तृप्तस्य वहति स्थिरा ॥ २२ ॥
अंगुष्ठमूलसंस्था दोषविशेषेण वहति या नाडी ॥
बहुधा सा सर्वाङ्गी पूर्वाचार्य्यैः समाख्याता ॥ २३ ॥

सुखी मनुष्य की नाडी स्थिर तथा बलवती जानिये, और भूखे मनुष्य की नाडी चंचल होती है तथा तृप्त मनुष्य की नाडी स्थिरतापूर्वक चलती है ॥ २२ ॥ अँगूठे की जड़ में विशेष दोष वाली जो नाडी चलती है वह बहुधा सब अंगों में व्याप्त होने वाली नाडी पूर्व आचार्यों ने कही है ॥ २३ ॥

वाताद्वक्रगतिर्नाडी चपला पित्तवाहिनी ॥
स्थिरा श्लेष्मवती प्रोक्ता सर्वलिंगेषु सर्वगा ॥ २४ ॥
स्निग्धा रसवती प्रोक्ता रक्ते मूर्च्छाभिघातिनी ॥
भाविरोगावबोधाय स्वस्थनाडीपरीक्षणम् ॥ २५ ॥

वात विकार वाली नाडी टेढ़ी चलती है, पित्त विकार वाली नाड़ी चंचल होती है, कफ विकार वाली नाडी ठहरी हुई (धीमी) चलती है और सब दोष वाली अर्थात् वात, पित्त, कफ तीनों दोष वाली नाडी पूर्वोक्त सब लक्षणों वाली होती है॥ २४॥ चिकनी नाडी रसवाली कही है अर्थात् रसों वाली नाडी चिकनी होती है और रुधिर विकार वाली नाडी मूर्च्छा से भरी हुई चलती है। आगे होने वाले रोग को जानने के निमित्त आरोग्य मनुष्य की नाडी की परीक्षा करे॥ २५॥

आदौ च वहते पित्तं मध्ये श्लेष्मा प्रकीर्तितः॥
अन्ते प्रभंजनः प्रोक्तस्त्रिधा नाडीपरीक्षणम्॥ २६॥
यथा वीणागता तंत्री सर्वान् रागान्प्रकाशयेत्॥
तथा हस्तगता नाडी विभक्तामयसंचयम्॥ २७॥

आदि में पित्त वाली नाडी चलती है मध्य में कफ वाली नाडी चलती है और अन्त में वात का नाडी चलती है ऐसे चलती हुई नाडी की तीन प्रकार से परीक्षा करे॥ २६॥ जिस प्रकार वीणा में के तार सब रागों को प्रगट करते हैं इसी प्रकार हाथ की नाडी सब रोगों का प्रगट कर देती है अर्थात् रोगों को बतला देती है॥ २७॥

मूत्र परीक्षा।

रात्रेश्चतुर्थयामस्य घटिकानां चतुष्टये॥
समुत्थाय परीक्षेत मूत्रं वैद्यस्तु रोगिणः॥ २८॥
पूर्वां धारां परित्यज्य गृहीत्वा काचभाजने॥
धारयेत्कांस्यपात्रे वा कृत्वा मूत्रं पटावृतम्॥ २९॥

रात के चौथे प्रहर की चार घड़ी रहे अर्थात् चार घड़ी रात रहने पर रोगी को उठा कर वैद्य उसके मूत्र की परीक्षा करे॥ २८॥ रोगी के मूत्र की पहली धारा को छोड़ कर शेष धारा को काच की शीशी में अथवा काँसे के पात्र में लेकर उस मूत्र को कपड़े से ढाँक देवे॥ २९॥

ततः सूर्योदये जाते प्रकाशे मूत्रभाजनम्॥
धृत्वा मूत्रं समालोक्य कुर्यात्तस्य परीक्षणम्॥ ३०॥

वाते तोयसमं मूत्रं रूक्षं बहुतरं भवेत् ॥
रक्तवर्णं भवेत्पित्ते पीतं वा स्वल्पमेव च ॥ ३१ ॥
कफे श्वेतं घनं स्निग्धं मूत्रं संजायते ध्रुवम् ॥
द्विदोषं द्वन्द्वचिह्नं स्यात्सर्वलिङ्गं त्रिदोषजे ॥ ३२ ॥

फिर सूर्य उदय होने पर उस मूत्र के पात्र को उजेले में रख कर मूत्र को भली भाँति देखकर उसकी परीक्षा करे ॥ ३० ॥ वात विकार में मूत्र का रंग निर्मल जल के तुल्य होता है, और रूखा तथा बहुत होता है और पित्त के प्रकोप में लाल रंग वाला और पीला तथा थोड़ा होता है ॥ ३१ ॥ कफ विकार में रोगी का मूत्र सफेद गाढ़ा और विशेष चिकना होता है, और दो दोषों के विकार में मूत्र दो दोषों के लक्षण वाला होता है तथा त्रिदोष में मूत्र तीनों दोषों के लक्षण वाला होता है ॥ ३२ ॥

प्रातःकाले गृहीतं यन्मूत्रं घर्मे निधापयेत् ॥
तैलबिन्दुं क्षिपेत्तत्र निश्चलं वैद्यसत्तमः ॥ ३३ ॥
यदा प्रकाशमाप्नोति तैलं क्षेम तदादिशेत् ॥
बिन्दुरूपं स्थितं तैलमसाध्यमविरोगिणः ॥ ३४ ॥

प्रातःकाल में लिये हुए रोगी के मूत्र को घाम में धरे फिर उसमें तेल की बूंद डाले निश्चल होने पर उत्तम वैद्य उसकी परीक्षा करे ॥ ३३ ॥ जो वह तेल का बूंद चमकता रहे तो रोगी कुशल से जानना और जो तेल की बूंद वहीं रह जाय फैले नहीं तो रोगी को असाध्य जानना ॥ ३४ ॥

निमज्जति यदा मूत्रे भ्रमन् वा नैव शाम्यति ॥
तदारिष्टं विजानीयाद्रोगिणां नात्र संशयः ॥ ३५ ॥
प्रभाते रोगिणां मूत्रं गृहीत्वा शुद्धभाजने ॥
तृणेनादाय तैलस्य बिन्दुं क्षिप्त्वा विचारयेत् ॥३६॥
यदा विकाशमाप्नोति तदा साध्यं वदेत्सुधीः ॥
बिन्दुरूपेण मध्यस्थमसाध्यं तु तलस्थितम् ॥ ३७ ॥

जो मूत्र में तेल की बूंद नीचे को बैठ जाय अथवा घूमने लगे ठहरे नहीं, तो रोगी को अरिष्ट जानना इसमें कुछ भी सन्देह नहीं ॥ ३५ ॥ प्रातःकाल में रोगी का मूत्र निर्मलपात्र में लेकर तिनके से तेल की बूंद उसमें डालकर परीक्षा करे ॥ ३६ ॥ जो बूंद प्रकाशित रहे तो उत्तम वैद्य उस रोगी को साध्य कहे और जो तेल की बूंद मूत्र के बीच नीचे को बैठ जाय तो रोगी को असाध्य कहे ॥ ३७ ॥

बिन्दुर्भ्रमति सर्वत्र मध्ये वा छिद्रसंयुतः ॥
खड्गदण्डधनुस्तुल्यस्तदा रोगी विनश्यति ॥ ३८ ॥
तडागहंसपद्मेभच्छत्रचामरतोरणैः ॥
तुल्यैस्तदा चिरायुःस्याद्बुद्बुदं दैवकोपतः ॥ ३९ ॥
पूर्वपश्चिमवायव्यनैर्ऋतोत्तरतः शुभः ॥
आग्नेयदक्षिणेशाने विस्तृतो न शुभप्रदः ॥ ४० ॥

जो तेल की बूंद मूत्र में सब ओर घूमने लगे अथवा बीच में छेद वाला हो जाय अथवा खड्ग (तलवार) दंड, धनुष, इनके समान आकार वाला हो जाय तो रोगी विनाश हो जाता है ॥ ३८ ॥ और जो तालाव, हंस, कमल, हाथी, छत्र, चँवर वन्दनवार, इनके आकार वाला हो जाय तो रोगी वहुत काल जीता है, तथा जो ववूला के आकार तेल का वूंद हो जाय तो रोगी को देवता के कोप से पीड़ित जानिये ॥ ३९ ॥ जो मूत्र में तेल की बूंद पूर्व, पश्चिम, वायव्य (पश्चिम उत्तर का कोण) नैर्ऋत (दक्षिण पश्चिम का कोण) और उत्तर से फैले तो शुभदायक जानिये, और जो आग्नेय (पूर्व दक्षिण कोण). दक्षिण और ईशान (पूर्व उत्तर कोण) से फैले तो शुभ नहीं जानना, वरावर वाली पृथ्वी में [illegible] यह परीक्षा करे ॥ ४० ॥

स्निग्धं सुरक्तकं श्यामं मूत्रं वातविकारजम् ॥
पीतं बुद्बुदसंयुक्तं विकारः स्यात्तु पित्तजः ॥ ४१ ॥

वातविकार वाला मूत्र चिकना, नीलवर्ण, अथवा काला होता है और पित्त विकार वाला मूत्र पीले रंग ववूला संयुक्त होता है ॥ ४१ ॥

मूत्रं श्लेष्मणि जायेत समं पल्वलवारिणा ॥
सिद्धार्थतैलसदृशं मूत्रं वै पित्तमारुतैः ॥ ४२ ॥

कृष्णं सबुद्बुदं मूत्रं सन्निपातविकारजम् ॥
पानीयेन समं मूत्रं परिपाकहितं भवेत् ॥ ४३ ॥

कफ विकार वाला मूत्र छोटे तालाव के जल के तुल्य होता है और वात-पित्त के कोप वाला मूत्र सरसों के तेल के समान होता है ॥ ४२ ॥ सन्निपात के कोप से मूत्र काले रंग का बबूलेदार होता है, परिपाक के समय मूत्र निर्मल जल के समान होता है ॥ ४३ ॥

श्वेतधारा महाधारा पीतधारास्तथा ज्वराः ॥
रक्तधारा महारोगी कृष्णा च मरणान्तिका ॥ ४४ ॥
अजामूत्रमिवाजीर्णे ज्वरे कुंकुमपिंजरे ॥
समधातोः पुनः कूपजलतुल्यं स जायते ॥ ४५ ॥

तथा ज्वर वाले का मूत्र सफेद धारा, वड़ी धारा और पीली धारा वाला होता है, बड़े रोगी का मूत्र लाल धारा वाला होता है, समीप मृत्यु वाले का मूत्र काली धारा वाला होता है ॥ ४४ ॥ अजीर्ण रोग वाले के मूत्र में बकरी के मूत्र की सी गंध होती है, ज्वर में मूत्र का रंग केशर के समान पीला होता है और समान धातु वाले का मूत्र कुवाँ के जल के तुल्य होता है ॥ ४५ ॥

नेत्र परीक्षा ।

रुद्रे रूक्षे च धूम्राक्षे नयने स्तब्धचंचले ॥
तथाभ्यन्तर कृष्णाभे भवतो वातरोगिणः ॥ ४६ ॥
पित्त रोगे तु पीते वा नीले वा रक्तवर्णके ॥
स तप्तो भवतो दीपं सहेते नावलोकितुम् ॥४७॥

जिस रोगी के नेत्र भयानक, रूखे, धुमैले, टेढ़े, चंचल, और बीच में काले रंग के हों तो वात विकार जानिये ॥ ४६ ॥ पित्त रोग वाले रोगी के नेत्र पीले वा नीले रंग के अथवा लाल रंग के होते हैं और अंगार तथा दीपक की ज्योति को नहीं देख सकते हैं ॥ ४७ ॥

ज्योतिर्हीने च शुक्लाभे जलपूर्णे सगौरवे ॥
मन्दावलोकने नेत्रे भवतः कफकोपतः ॥ ४८ ॥

तन्द्रामोहाकुले श्यामे निर्भुग्ने रूक्षरौद्रके ॥
रक्तवर्णे च भवतो नेत्रे दोषत्रयोदये ॥ ४६ ॥

जिस रोगी के नेत्र खुले तेज रहित, सफेद, जल से पूर्ण और भारी होवें तथा दृष्टि मन्द हो जाय तो कफ कोप से युक्त जानिये ॥ ४८ ॥ और जो आलस्य से युक्त, मोह से पीड़ित, श्यामवर्ण, फटे हुए, रूखे, भयानक, और लाल रंग के हों तो ऐसे नेत्र त्रिदोष (सन्निपात) वाले के होते हैं ॥ ४६ ॥

दोषत्रयं भवेच्चिह्नं नेत्रयोस्तु त्रिदोषजम् ॥
दोषद्वयप्रकोपे तु भवेद्दोषद्वयोदितम् ॥ ५० ॥
दोषत्रयभवे नेत्रे स्वाधीने न च रोगिणः ॥
उन्मूलिते च भवतः क्षणादेव निमीलति ॥ ५१ ॥

त्रिदोष वाले रोगी के नेत्रों में तीनों दोषों के लक्षण होते हैं और दो दोष वाले रोगी के नेत्रों में दो दोषों के लक्षण होते हैं ॥ ५० ॥ त्रिदोष (सन्निपात) वाले रोगी के नेत्रों में स्वाधीनता नहीं होती, वह कभी नेत्रों को खोल देता है, कभी बन्द कर लेता है, क्षण क्षण में खोलता मूंदता रहता है ॥ ५१ ॥

सततोन्मीलिते नेत्रे यद्वा नित्यं निमीलिते ॥
विलुप्तकृष्णतारे च भ्रमद्धूम्रोग्रतारके ॥ ५२ ॥
बहुवर्णे च भवतो विकृतानेकचेष्टने ॥
नेत्रे मृत्युं कथयतो रोगिणो नात्र संशयः ॥ ५३ ॥

जो सदैव नेत्र खुले रक्खे वा मूंदेही रक्खे और जिसकी काली पुतली दिखाई नहीं देवे एवं तारे घूमते हुए और उग्र (नहीं देखने योग्य) ॥ ५२ ॥ तथा अनेक रंग के विकार युक्त एवं अनेक चेष्टा वाले हो जाँय तो ऐसे नेत्र वाले रोगी की मृत्यु निस्सन्देह निकट है ऐसा कहा है ॥ ५३ ॥

सौम्यदृष्टिप्रसन्नाभे प्रकृतिस्थे मनोरमे ॥
नेत्रे कथयतः शीघ्रं रोगशान्तिं तु रोगिणः ॥ ५४ ॥

जिस रोगी की चितवनि अच्छी और प्रसन्न (सुखपूर्वक) होवे और नेत्र

यह प्राणी छः महीना जीवे, दक्षिण दिशा में छेद देख पड़े तो तीन महीना जीवे, और पश्चिम ओर छेद देख पड़े तो दो महीना जीवे, तथा उत्तर की ओर छेद देख पड़े तो एक महीना जीवे, तथा जो चन्द्रमा और सूर्य का प्रतिबिंब धुवाँ के आकार का देख पड़े तो वह दश दिन जीवे, एवं जो प्रतिबिंब में पश्चिम ओर ज्वाला (जलती हुई ज्योति देख पड़े तो तुरन्तही मृत्यु हो जावे) यह काल ज्ञानियों ने कहा है ॥ ७६ ॥

अरुन्धतीं ध्रुवं चैव विष्णोस्त्रीणि पदानि च ॥
आयुर्हीना न पश्यन्ति चतुर्थं मातृमण्डलम् ॥७७॥
अरुन्धती भवेज्जिह्वा ध्रुवो नासाग्रमेव च ॥
विष्णुस्तु भ्रुवयोर्मध्ये भ्रूद्वयं मातृमण्डलम् ॥७८॥
नासाग्रं भ्रूयुगं जिह्वां मुखं चैव न पश्यति ॥
कर्णघोषं न जानाति स गच्छेद्यममन्दिरम् ॥७९॥

अरुन्धती और ध्रुव तथा विष्णु के तीन पद (श्रवण नक्षत्र) चौथा मातृमण्डल अर्थात् कृत्तिका नक्षत्र इनको क्षीण आयु वाले नहीं देखते हैं ॥ ७७ ॥ यहाँ अरुन्धती जीभ होती है, और नाक का अग्रभाग ध्रुव है, दोनों भौंहों का बीच विष्णु का त्रिपद है और दोनों भृकुटियाँ मातृमण्डल हैं ॥ ७८ ॥ नासिका का अग्रभाग (नाक की नोक) दोनों भौंहें और जीभ, मुख, इनको नहीं देखता तथा कानों के मूंदने पर शब्द को नहीं सुनता है वह यमलोक को जाता है अर्थात् कुछ ही काल में मर जाता है ॥ ७९ ॥

अकस्माच्च भवेत्स्थूलो ह्यकस्माच्च कृशो भवेत् ॥
अकस्मादन्यथा भावे षण्मासैश्च विनश्यति ॥८०॥
रसनायाः कृष्णभावो मुखं कुंकुमसन्निभम् ॥
जिह्वा स्पर्शं न जानाति दुर्लभं तस्य जीवितम् ॥८१॥

जो अकस्मात् मोटा हो जावे अथवा दुबला हो जावे वा इकबारगी उलटे स्वभाव वाला हो जाय अर्थात् जिसका स्वभाव सहसा बदल जाय वह मनुष्य छः महीना में मर जाता है ॥ ८० ॥ तथा जिसकी जीभ काली हो जाय और मुख केसर के समान पीला हो जाय और जीभ में स्पर्श का ज्ञान न हो अर्थात् जीभ में कोई वस्तु छू जाय और नहीं जान पड़े तो उसका जीना कठिन है ॥ ८१ ॥

देश ज्ञान।

देशोऽल्पवारिद्रुनगो जाङ्गलः स्वल्परोगदः ॥
अनूपो विपरीतोऽस्मात्समः साधारणः स्मृतः ॥८२॥

जो देश थोड़े जल वाला, थोड़े वृक्षों वाला और थोड़े ही पर्वतों से युक्त हो वह थोड़े ही रोग वाला जांगल देश कहलाता है, और जो इससे विपरीत (उलटा) देश हो अर्थात् जिस देश में बहुत जल, वृक्ष और पर्वत (पहाड़) हों उसको अनूप देश कहा है, एवं जिस देश में जल वृक्ष और पर्वत सामान्य हों अर्थात् न बहुत हों न थोड़े हों तो वह साधारण देश कहा गया है, यहाँ मारवाड़ आदि देश जाँगल हैं, पूर्व के देश अनूप हैं, मध्य देश आदि साधारण देश हैं ॥८२॥

मान परिभाषा।

न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणां ज्ञायते क्वचित् ॥
अतः प्रयोगकार्यार्थं मानमत्रोच्यते मया ॥८३॥

मान अर्थात् तोल को विना जाने औषधियों के बनाने की युक्ति जानी जा सकती अतः प्रयोग कार्य के साधन निमित्त हम यहां तोल का प्रमाण कहते हैं ॥ ८३ ॥

जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः ॥
तस्य त्रिंशत्तमो भागः परमाणुः स उच्यते ॥८४॥
त्रसरेणुर्बुधैः प्रोक्तस्त्रिंशद्भिः परमाणुभिः ॥
त्रसरेणुस्तु पर्यायैर्नाम्ना वंशी निगद्यते ॥८५॥
षड्वंशीभिर्मरीचिः स्यात्ताभिः षड्भिस्तु राजिका ॥
तिसृभी राजिकाभिश्च सर्षपः प्रोच्यते बुधैः ॥८६॥

जाले अर्थात् झरोखे में से जो सूर्य की किरणों के द्वारा जो धूलि के छोटे छोटे कण दिखाई देते हैं उस एक कण के तीसवें हिस्से को परमाणु कहते हैं ॥ ८४ ॥ पंडितों ने उन तीस परमाणुओं का एक त्रसरेणु कहा है त्रसरेणु का दूसरा नाम वंशी भी कहा जाता है ॥ ८५ ॥ छः वंशी की एक मरीची होती है और छः मरीची की एक राई होती है, छः राई का एक सरसों बुध जनों ने कहा है ॥ ८६ ॥

यवोऽष्टसर्षपैः प्रोक्तो गुंजा स्यात्तच्चतुष्टयात् ॥
षड्भिस्तु रक्तिकाभिः स्यान्माषको हेमधान्यकौ ॥८७॥
माषैश्चतुर्भिः शाणःस्याद्धरणः स निगद्यते ॥
टंकः स एव कथितस्तद्द्वयं कोल उच्यते ॥८८॥
क्षुद्रभो वटकश्चैव द्रंक्षणस्स निगद्यते ॥
कोलद्वयं च कर्षः स्यात्स प्रोक्तः पाणिका बुधैः ॥८९॥

आठ सरसों का एक जौ कहा है और चार जौ की एक गुंजा (घुंघुची) अर्थात् रत्ती होती है, छः रत्ती का एक माशा होता है जिसे हेम और धान्यक भी कहते हैं ॥ ८७ ॥ चार माशे का एक शाण होता है जिसका धरण और टंक नाम भी कहा है, उन दो टंक का एक कोल कहा है ॥ ८८ ॥ उसीका क्षुद्रभ, वटक और द्रंक्षण नाम कहा है, दो कोल का एक कर्ष होता है; बुध जनों ने उसीका नाम पाणिका कहा है ॥ ८९ ॥

अक्षः पिचुः पाणितलं किंचित्पाणिश्च तिन्दुकात् ॥
बिडालपदकं चैव तथा षोडशिका मता ॥९०॥
करमध्यं हंसपदं सुवर्णं कवलग्रहम् ॥
उदुम्बरं च पर्यायैः कर्ष एव निगद्यते ॥९१॥

अक्ष, पिचु, पाणितल, किंचित्पाणि, तिन्दुक, बिडालपदक, षोडशिका, ॥ ९० ॥ करमध्य, हंसपद, सुवर्ण, कवलग्रह, उदुम्बर, ये कर्ष के ही दूसरे नाम कहे हैं ॥ ९१ ॥

स्यात्कर्षाभ्यामर्धपलं शुक्तिरष्टमिका तथा ॥
शुक्तिभ्यां च पलं ज्ञेयं मुष्टिराम्रं चतुर्थिका ॥९२॥
प्रकुंचः षोडशी बिल्वं पलमेवात्र कीर्त्यते ॥
पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया प्रसृतश्च निगद्यते ॥९३॥
प्रसृतिभ्यामंजलिः स्यात्कुडवोऽर्धशरावकः ॥
अष्टमानं च संज्ञेयं कुडवाभ्यां च मानिका ॥
शरावोऽष्टपलं तद्वज्ज्ञेयमत्र विचक्षणैः ॥९४॥

दो कर्ष का आधा पल कहा है जिसका नाम शुक्ति तथा अष्टमिका है, दो शुक्ति का एक पल जानो। जिसे मुष्टि, आम्र, और चतुर्थिका भी कहते हैं॥ ९२॥ और प्रकुंच, षोडशी, बिल्व, ये नाम पल के कहे हैं, दो पल की एक प्रसृति जानिये उसीको प्रसृत भी कहा है॥ ९३॥ दो प्रसृति की एक अंजली जिसे कुडव, अर्धशराव, अष्टमान भी कहते हैं। दो कुडव की एक मानिका जानिये, जिसको शराव और अष्टपल भी कहते हैं, इस प्रकार यहां पण्डितों को जानना उचित है॥ ९४॥

शरावाभ्यां भवेत्प्रस्थश्चतुःप्रस्थैस्तथाढकम्॥
भाजनं कंसपात्रं च चतुःषष्टिपलं च तत्॥ ९५॥
चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कलशो नल्वणोन्मनौ।
उन्मानश्च घटो राशिर्द्रोणपर्यायसंज्ञकाः॥ ९६॥

दो शराव का एक प्रस्थ, तथा चार प्रस्थ का एक आढक होता है जिसे भाजन और कंस पात्र भी कहते हैं, चौसठ पल का आढक होता है॥ ९५॥ चार आढक का एक द्रोण जिसे कलश, नल्वण, उन्मन, उन्मान, घट, राशि भी कहते हैं, ये छ नाम द्रोण के हैं॥ ९६॥

द्रोणाभ्यां शूर्पकुंभौ च चतुःषष्टिशरावकः॥
शूर्पाभ्यां च भवेद्द्रोणी वाहो गोणी च सा स्मृता॥९७॥
द्रोणीचतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः॥
चतुःसहस्रपलिका षण्णवत्याधिका च सा॥ ९८॥

दो द्रोण का एक शूर्प और कुंभ जानना, जो चौसठ शराव का होता है। दो शूर्प की एक द्रोणी जिसको वाह और गोणी भी कहते हैं॥ ९७॥ चार द्रोणी की एक खारी तत्वज्ञानियों ने कही है जो चार हजार छयानवे पल की होती है॥ ९८॥

पलानां द्विसहस्रं च भार एकः प्रकीर्तितः॥
तुला पलशतं ज्ञेया सर्वत्रैवैष निश्चयः॥ ९९॥
माषटंकाक्षबिल्वानि कुडवः प्रस्थमाढकम्॥
राशी गोणी खारिकेति यथोत्तरचतुर्गुणाः॥ १००॥

दो हजार पल का एक भार कहाता है, सौ पल की एक तुला जानना। सब परिभाषाओं में यही निश्चय जानिये ॥ ९९ ॥ माशा, टंक, अक्ष, बिल्व, कुडव, प्रस्थ, आढक, राशी, गोणी, और खारी यह एक से दूसरा चौगुना होता है ॥ १०० ॥

कलिंग परिभाषा।

स्थितिर्नास्त्येव मात्रायाः कालमग्निं वयो बलम् ॥
प्रकृतिं दोषदेशौ च दृष्ट्वा मात्रां प्रकल्पयेत् ॥ १०१ ॥
यतो मन्दाग्नयो ह्रस्वा हीनसत्त्वा नराः कलौ ॥
अतस्तु मात्रा तद्योग्या प्रोच्यते शास्त्रसंमता ॥१०२॥

मात्रा की कुछ ठीक मर्यादा नहीं है कि इतनी ही दी जाय, इसलिये वैद्य समय, अग्निबल, अवस्था और रोगी के बल, स्वभाव, दोष और देश को समझ कर मात्रा की कल्पना करे ॥१०१॥ कारण यह है कि इस कलिकाल में मनुष्य मन्दाग्नि, रोगी, छोटे शरीर के और निर्बल हैं, अतः शास्त्र के अनुसार उनके लिये मात्रा प्रमाण कहता हूँ ॥ १०२ ॥

यवो द्वादशभिर्गौरसर्षपैः प्रोच्यते बुधैः ॥
यवद्वयेन गुंजा स्यात्त्रिगुंजो वल्ल उच्यते ॥ १०३ ॥
माषो गुंजाभिरष्टाभिः सप्तभिर्वा भवेत्क्वचित् ॥
स्याच्चतुर्माषकैः शाणः स निष्कष्टंक एव च ॥ १०४ ॥

बारह सफेद सरसो का एक जौ बुधजनों ने कहा है। दो जौ की एक रत्ती, और तीन रत्ती का एक वल्ल कहा गया है ॥ १०३ ॥ आठ गुञ्जा का एक मासा होता है कहीं सात ही रत्ती का एक मासा होता है चार मासा का एक शाण जिसको निष्क और टंक भी कहते हैं ॥ १०४ ॥

गद्याणो माषकैः षड्भिः कर्षः स्याद्दशमाषकः ॥
चतुःकर्षैः पलं प्रोक्तं दशशाणमितं बुधैः ॥ १०५ ॥
चतुःपलैश्च कुडवः प्रस्थाद्या पूर्ववन्मताः ॥
एतन्मानं मया प्रोक्तं पूर्वाचार्येण सम्मतम् ॥ १०६ ॥

गद्याण छ मासा का होता है, और कर्ष दश मासा का होता है, चार कर्ष का एक पल कहाता है, उसी पल को पंडितों ने दश शाण कहा है ॥ १०५ ॥ चार पल का कुडव होता है, प्रस्थ आदि का मान पहले कहे अनुसार जानना। यहमान हमने प्राचीन आचार्यों के मत के अनुसार वर्णन किया है ॥ १०६ ॥

शारीरक ।

कलाः सप्ताशयाः सप्त धातवः सप्त तन्मलाः ॥
सप्तोपधातवस्सप्त त्वचः सप्त प्रकीर्तिताः ॥ १०७ ॥
त्रयो दोषाः नवशतं स्नायूनां सन्धयस्तथा ॥
दशाधिकं च द्विशतमस्थ्नां च द्विशतं मतम् ॥ १०८ ॥
सप्तोत्तरं मर्मशतं शिराः सप्तशतं तथा ॥
चतुर्विंशतिराख्याता धमन्यो रसवाहिकाः ॥ १०९ ॥
मांसपेश्यः समाख्याता नृणां पंचशतं बुधैः ॥
स्त्रीणां च विंशत्यधिकाः कण्डराश्चैव षोडश ॥११०॥

सात कला, सात आशय (स्थान), सात धातु, सात मल, सात उपधातु, और सात त्वचा कही हैं ॥ १०७ ॥ तीन दोष, नव सौ नाडियाँ तथा दो सौ दश उन नाडियों की संधियाँ और दो सौ हड्डियाँ कही हैं ॥ १०८ ॥ एक सौ सात मर्मस्थान कि जिनके टूट जाने से मनुष्य मर जाता है, तथा सात सौ शिरायें (नसें), रस बहाने वाली धमनी नाडी चौवीस कही हैं ॥ १०९ ॥ पाँच सौ मांस पेशी कही गई हैं, यह मनुष्यों का शारीरक बुध जनों ने कहा है। बीस मांस पेशी स्त्रियों के अधिक हैं और सोलह कंडरा हैं ॥ ११० ॥

नृदेहे दश रन्ध्राणि नारीदेहे त्रयोदश ॥
एतत्समासतः प्रोक्तं विस्तरेणाधुनोच्यते ॥ १११ ॥

मनुष्य के शरीर में दश छेद हैं और स्त्री के शरीर में तेरह छेद हैं यह शारीरक संक्षेप से कहा है अब विस्तार से कहते हैं ॥ १११ ॥

सप्तकला ।

मांसासृङ्मेदसां तिस्रो यकृत्प्लीह्नोश्चतुर्थिका ॥

पंचमी च तथांत्राणां षष्ठी चाग्निधरा स्मृता ॥
रेतोधरा सप्तमी स्यादिति सप्तकला मता ॥ ११२ ॥

मांस, रुधिर, मेद ये तीन, चौथे प्लीह (पिल्ही) पाँचवीं आंतों की, छठी जठराग्नि को धारण करने वाली और सातवीं वीर्य को धारण करने वाली यह सात कला कही हैं ॥ ११२ ॥

सप्तआशय।

श्लेष्माशयः स्यादुरसि तस्मादामाशयस्त्वधः ॥
ऊर्ध्वमग्न्याशयो नाभेर्वामभागे व्यवस्थितः ॥ ११३ ॥
तस्योपरि तिलं ज्ञेयं तदधः पवनाशयः ॥
मलाशयस्त्वधस्तस्माद्वस्तिर्मूत्राशयस्त्वधः ॥ ११४ ॥

उर (छाती) में कफ का आशय (स्थान) है, उसके नीचे आमाशय (आँव का स्थान) है, उसके ऊपर तोंदी के बायें भाग में अग्नि का स्थान है ॥ ११३ ॥ उसके ऊपर तिल है, उसको प्यास का स्थान जानो। उसके नीचे पवन का स्थान है, पवन के स्थान के नीचे मल का स्थान है, उसके नीचे वस्ति और मूत्र का स्थान है ॥ ११४ ॥

जीवरक्ताशयमुरो ज्ञेयाः सप्ताशयास्त्वमी ॥
पुरुषेभ्योऽधिकाश्चान्ये नारीणामाशयास्त्रयः ॥ ११५ ॥
धरा गर्भाशयः प्रोक्तः स्तनौ स्तन्याशयौ मतौ ॥ ११६ ॥

उर (हृदय) में जीव और रुधिर का स्थान है ये सात आशय (स्थान) जानिये, मनुष्यों से अधिक तीन और आशय स्त्रियों के हैं ॥ ११५ ॥ एक गर्भ स्थान और दो स्तन ये तीन आशय अधिक कहे गये हैं ॥ ११६ ॥

सप्तधातु।

रसासृङ्मांसमेदोस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः ॥
जायन्तेऽन्योन्यतः सर्वे पाचिताः पित्ततेजसा ॥ ११७ ॥

रस, रुधिर, मांस, मेद, हड्डी, मज्जा (चर्वी) वीर्य, यही सात धातु हैं, यह सब पित्त के तेज के द्वारा पचकर एक दूसरे से उत्पन्न होते हैं, अर्थात् पित्त के तेज से अन्न पचकर रस होता है, रस से रुधिर, रुधिर से मांस, मांस से मेद, मेद से हड्डी, हड्डी से चर्वी और चर्वी से वीर्य बनता है ॥ ११७ ॥

सप्तउपधातु ।

जिह्वानेत्रकपोलानां मलं पित्तं च रंजनम् ॥
कर्णविट्रसनादन्तकक्षामेढ्रादिजं मलम् ॥ ११८ ॥
नखनेत्रमलं वक्त्रे स्निग्धत्वं पिडिकास्तथा ॥
जायन्ते सप्तधातूनां मलान्येतान्यनुक्रमात् ॥ ११९ ॥

जीभ, आँख, गाल इनका मल रस धातु का मल जानना, पित्त रंजन रुधिर का मल है, कानों की ठेठी मांस का मल है, जीभ, दाँत, बगल और लिंगेन्द्रिय आदि से उत्पन्न मल मेद का मल कहा है ॥ ११८ ॥ नख हड्डियों का मल है, आखों का कीचड़ मज्जा का मल है और मुख में चिकनापन और मुहाँसे आदि वीर्य का मल है, क्रम से यह सात धातुओं के मल हैं इन्हींको उपधातु कहते हैं ॥ ११९ ॥

स्तन्यं रजश्च नारीणां काले भवति गच्छति ॥
शुद्धमांसभवस्नेहो वसा सा परिकिर्तिता ॥ १२० ॥
स्वेदो दन्तास्तथा केशास्तथैवौजश्च सप्तमम् ॥
ओजः सर्वशरीरस्थं स्निग्धं शीतं स्थिरं सितम् ॥ १२१ ॥
सोमात्मकं शरीरस्थं बलपुष्टिकरं मतम् ॥
इति धातुमला ज्ञेया एते सप्तोपधातवः ॥ १२२ ॥

स्त्रियों के कुचों में जो दूध होता है सो रस की उपधातु है और जो रज होती है सो रुधिर की उपधातु है, जो स्त्रियों के समय समय पर उत्पन्न होती है और समय पर ही दूर हो जाती है, शुद्ध मांस से देह में घी उत्पन्न होता है जिसको वसा (चर्वी) कहते हैं, सो मांस की उपधातु है ॥ १२० ॥ स्वेद (पसीना) मज्जा की उपधातु है, दाँत हड्डी की उपधातु है। इसी प्रकार ओज (तेजबल) वीर्य की उपधातु है, यह ओज सब देह में रहता है जो चिकना,

शीतल, स्थिर, और सफेद होता है, ॥ १२१ ॥ वही ओज सब शरीर में रहकर शरीर को बलवान् और पुष्ट करता है, यह धातुओं का मल जानो यही सात उपधातु हैं ॥ १२२ ॥

सप्तत्वचा ।

ज्ञेयावभासिनी पूर्वं सिध्मस्थानं च सा मता ॥
द्वितीया लोहिता ज्ञेया तिलकालकजन्मभूः ॥ १२३ ॥
श्वेता तृतीया संख्याता स्थानं चर्मदलस्य च ॥
ताम्रा चतुर्थी विज्ञेया किलासश्वित्र भूमिका ॥ १२४ ॥
पंचमी वेदनी ख्याता सर्वकुष्ठोद्भवास्ततः ॥
विख्याता लोहिता षष्ठी ग्रन्थिगंडापचीस्थितिः ॥ १२५ ॥
स्थूला त्वक् सप्तमी ख्याता विद्रध्यादिस्थितिस्तु सा ॥
इति सप्तत्वचः प्रोक्ताः स्थूला व्रीहिद्विमात्रया ॥
इति शारीरकं ज्ञेयं प्राचीनानां मतेन तत् ॥ १२६ ॥

पहिली त्वचा अवभासिनी जानो जो सिध्म अर्थात् विभूति नामक कुष्ट का स्थान है, दूसरी त्वचा लोहिता जानिये जो तिल और काले दाग को उत्पन्न करने वाली है ॥ १२३ ॥ तीसरी श्वेता है जो चर्मदल रोग का स्थान है, चौथी त्वचा ताम्रा जानना जो किलास और श्वित्र नाम वाले कुष्ट रोग का जन्म स्थान है ॥ १२४ ॥ पाँचवी वेदनी नाम वाली त्वचा है।जो सब प्रकार के कुष्ट रोगों को उत्पन्न करती है, छठी लोहिता त्वचा कही है जो गाँठ रोग, गलडमाला, अपची (फोड़ा आदि) को उत्पन्न करती है ॥ १२५ ॥ सातवीं त्वचा स्थूला नाम वाली है जो विद्रधि आदि रोगों की स्थिति का स्थान है, ये सात त्वचायें कही हैं जो दो जौ की मोटाई के तुल्य हैं, यह पुराने आचार्यों के मत के अनुसार शारीरक जानिये ॥ १२६ ॥

पाकाधिकार नाम प्रथमाध्याय प्रारम्भः ।

चिकित्सायां द्वयं सारं पाकविद्या रसायनम् ॥
पाकोऽवलेहभेदः स्यात्स मृदुः सघनः परः ॥ १ ॥

चिकित्सा में दो बातें सार हैं पाकविद्या और रसायन, पाक के दो भेद हैं, जो चाटने के योग्य पतला हो वह अवलेह कहाता है, और जो गाढ़ा हो उसें पाक कहते हैं ॥ १ ॥

काष्ठौषध्यः पृथक् पेष्याः सुगन्धादि पृथग्विधा ॥
सम्पेष्य वस्त्रसंपूतमुभयं स्थापयेद्भिषक् ॥ २ ॥
द्राक्षाश्रीफलवातामप्रभृति स्याद्यदात्र तु ॥
तन्न पेष्यं भिषग्वर्यैः किन्तु भूरि विखण्डयेत् ॥ ३ ॥

काठ वाली औषधि अलग पीसे और सुगन्धित औषधि लौंग आदि को अलग पीसे फिर कपड़े से छान वैद्यजन दोनों को अलग अलग रक्खें ॥ २ ॥ दाख, नारियल की गरी और बादाम आदि को वैद्य नहीं पीसे उनके अनेक टुकड़े कर लेवे ॥ ३ ॥

खसतंदुलचारस्य बीजानि तु तथास्थितिः ॥
पाकद्राक्षादिचारस्य मज्ञानं मात्रयाधिकम् ॥ ४ ।
पाकानुसारतो ग्राह्यं भक्षणे तत्सुखावहम् ।
पाके जाते क्षिपेत्तत्र काष्टौषधिभवं रजः ॥ ५ ॥
दर्व्या विघट्टयेत्सम्यक् क्वचिदुष्णे सुगंधि च ॥
मुहुर्विघट्टयन्पश्चाद् द्राक्षादीन्प्रक्षिपेन्मुहुः ॥ ६ ॥

खस और चिरौंजी आदि को जैसी की तैसी ही रहने दे कतरे पीसे नहीं, दाख आदि को मात्रा के प्रमाण भर अथवा कुछ अधिक ॥ ४ ॥ पाक के अनुसार डाल देवे तो पाक खाने में बहुत अच्छे स्वाद वाला होता है। जब पाक की चासनी हो जाय तब उसमें पिसी हुई काष्ट आदि औषधियों के चूर्ण को मिलावे ॥ ५ ॥ और कलछी से भली भाँति चलावे फिर काष्ठ आदि औषधियों का चूर्ण मिल जाने पर चासनी कुछ गरम रह जाय तब इलाइची, लौंग आदि सुगन्धित वस्तुओं को डाले फिर कलछी से चलावे तदनन्तर दाख आदि मेवा डाल देवे फिर ॥ ६ ॥

काश्मीरं घृतसंपिष्टं क्वचिद् घृष्टं विमिश्रयेत् ॥
अहिफेनं क्षिपेत्क्षीरे संपिष्टं पाककर्मणि ॥ ७ ॥

देया शक्राशना भृष्टा चूर्णिता मात्रयाथवा ॥
पुनः संघट्टयेत्सर्वमेकीभावं यथा व्रजेत् ॥ ८ ॥
ज्वालाग्निं वर्जयेद्वैद्यः प्रक्षेपसमये ध्रुवम् ॥
अन्यथा हीनवीर्याणि भेषजानि प्रतापतः ॥ ९ ॥

केशर को घी में पीस कर मिलावे, कोई आचार्य कहते हैं कि केशर को घी में घिस कर मिलावे, जो पाक में अफीम डालना हो तो दूध में पीस कर पाक में छोड़े ॥ ७ ॥ जो भाँग डालना हो तो उसे भूने और चूर्ण कर डाल देवे फिर सब को कलछी से चलावे जिससे सब एक में मिल जायँ ॥ ८ ॥ परन्तु वैद्य जन इस बात का ध्यान रक्खें कि औषधि डालने के समय पाक के नीचे अग्नि प्रज्वलित नहीं हो नहीं तो औषधियाँ तपने से बलहीन हो जाती हैं ॥ ९ ॥

अनुक्तमपि पाकादौ धात्वादि प्रक्षिपेत्सुधीः ॥
चन्द्रनाभ्यादि तद्वच्च यथाविभवमर्पयेत् ॥ १० ॥
नाभ्यांजिते तु संस्थाप्य संपुटे तन्महौषधम् ॥
यदि स्याद्राजदृग्योभग्यत्रमिति वैद्यवरा विदुः ॥ ११ ॥

पाक आदि में नहीं कहे हुए धातु (वंग अभ्रक) रस आदि को उत्तम बुद्धि वाला वैद्य अनुमान से डाले, इसी प्रकार कस्तूरी आदि सुगन्धित द्रव्यों को भी पाक में अपने ऐश्वर्य के अनुसार मिलावे ॥ १० ॥ पाक को नीचे उतार कर थाली में जमावे फिर सोने अथवा चाँदी के वर्क लगाय कतली काट कर रख छोड़े तो वह पाक राजाओंके देखने योग्य अथवा खाने योग्य होता है,ऐसा अच्छे वैद्य कहते हैं ॥ ११ ॥

सुगंधितैलांजितभाजने वै स्थाप्योऽवलेहः किल राजयोग्यः ॥
वर्षासु वैद्याः प्रवदन्ति पाकं लेहादिकं नो बहु तत्प्रकुर्यात् ॥१२॥
मितं कृतं द्वित्रिदिनान्तरालं स्थाप्यं सुघर्मे ह्यवलेहकादि ॥
वर्षाकृतौ यत्नविवर्जितं तद्भवेत्तु जुष्टं किल जन्तुकीटैः ॥१३॥

सुगंधियुक्त चिकने पात्र में राजाओं के योग्य अवलेह को रक्खे वर्षा के समय में पाक और अवलेह आदि बनाना हो तो बहुत नहीं बनावे ऐसा वैद्य

जन कहते हैं ॥ १२ ॥ प्रमाण के अनुसार बनाकर अवलेह आदि को दो तीन दिन तक घाम में रखकर फिर उसे भली भांति बांध कर रख छोड़े क्योंकि वर्षाकाल में विना यत्न के उसमें छोटे छोटे जीव और कीड़े प्रगट हो जाते हैं ॥ १३ ॥

पाके ग्राह्या सिता श्वेता विमला गुणकारिणी ॥
समला शोधयेद्यत्नाद्यावन्मलविनिर्गमः ॥ १४ ॥
समलां च सितां प्लाव्य कटाहे विरचेत्सुधीः ॥
प्रक्षिपेत्सर्वतस्तत्र गोदुग्धं सजलं मुहुः ॥ १५ ॥
वस्त्रपोतकयोगेन तदूर्ध्वस्थं मलं हरेत् ॥
एवं पुनः पुनः कुर्याद्यावन्मलविनिर्गमः ॥ १६ ॥
पश्चात्पाकत्वमानीय प्रक्षिपेदौषधानि तु ॥
इति प्रोक्तं मया किंचित्पाकशासनमुत्तमम् ॥
अन्यत्सर्वं भिषग्वर्यैर्लोकतो ज्ञेयमेव तत् ॥ १७ ॥

पाक में सफेद निर्मल और गुणकारी मिश्री अथवा शक्कर लेवे यदि उसमें मैल हो तो यत्न से उसका मैल निकाल कर ठीक कर लेवे ॥ १४ ॥ मैल वाली चीनी हो तो उसे कडाही में चढ़ाय जल डाल कर औटावे बुद्धिमान् वैद्य औटते समय उस में गाय का दूध और जल छोड़ कर शुद्ध कर लेवे फिर ॥ १५ ॥ उसका मैल जब चासनी पर आ जाय तब पात्र पर दो लकड़ी रख कर उस पर झाली रक्खे और उस पर वारीक कपड़ा विछाय चासनी को कड़ाही में से लेकर झाली में डाले तो चासनी में से रस निकल कपड़े में छनता हुआ नीचे के पात्र में जा गिरता है इसे हलवाई लोग वक्खर कहते हैं, चीनी का मैल कपड़े पर और झाली में रह जाता है इस प्रकार वारंवार करे जब तक मैल निकल नहीं जावे ॥१६॥ तदनन्तर उस शुद्ध चीनी की चासनी वनाकर पाक के काम में लावे इस प्रकार मैंने पाक वनाने की कुछ विधि वतलाई है और विशेष जानना हो तो अच्छे वैद्य लोगों से पाक वनाने की क्रियाओं को पूछ कर जान लेवे ॥१७॥

इति वल्लभ नामक पूगी (सुपारी) पाक विधि।

पूगं दक्षिणदेशजं दशपलोन्मानं भृशं कर्तयेत्
तत्क्लिन्नं जलयोगतो मृदुतरं संकुट्य चूर्णीकृतम् ॥

तच्चूर्णं पटशोधितं वसुगुणे गोशुद्धदुग्धे पचेत्
द्रव्याज्यांजलिसंयुतेऽतिनिविडे दद्यात्तुलार्द्धां सिताम् ॥१८॥
पक्वं तज्ज्वलनात्क्षितिं प्रतिनयेत्तस्मिन्पुनः प्रक्षिपेत्
तद्यावत्तदुदाहरामि बहुला दृष्ट्वादरात्संहिताः ॥
एला नागबला बला सचपला जातीफला लिंगिता
जातीपत्रकमत्र पत्रकयुतं तच्च त्वचा संयुतम् ॥१९॥
विश्वावीरण वारि वारिदवरा वांशी वरी वानरी
द्राक्षा सेक्षुरगोक्षुराथ महती खर्जूरिका क्षीरिका ॥
धान्याकं सकसेरुकं समधुकं शृंगाटकं जीरकम्
पृथ्वीकाथ यवानिका वरटिका मांसी मिसिर्मेथिका ॥२०॥
कन्देष्वत्र विदारिकाथ मुशली गन्धर्वगन्धा तथा
कर्चूरं करिकेशरं समरिचं चारस्यबीजं नवम् ॥
बीजं शाल्मलिसंभवं करिकणाबीजं च राजीवजं
श्वेतं चन्दनमत्र रक्तमपिच श्रीसंज्ञपुष्पैः समम् ॥२१॥
सर्वं चेति पृथक्पृथक् पलमितं संचूर्ण्य तत्र क्षिपेत्
सूतं वंगभुजंगलोहगगनं सन्मारितं स्वेच्छया ॥
कस्तूरीघनसारचूर्णमपिच प्रासं यथा प्रक्षिपेत्
पश्चादस्य तु मोदकान् विरचयद्बिल्वप्रमाणांस्तथा ॥२२॥

दशपल (४० तोला) दक्खिनी सुपारी लेके बारीक कतरे फिर जल में भिगोवे जब नरम हो जाय तब कूट कर चूर्ण कर लेवे और उसको कपड़े से छानकर गाय के अठगुणे दूध में पकावे गाढा हो जाने पर एक अंजलि (१६तोला) घी और आधातुला (२०० तोला) शक्कर मिला देवे ॥१८॥ फिर जब भली भाँति पक जाय तब आँच से उतार भूमि पर धरे और उसे देख कर यह औषधियाँ डाल देवे, इलायची, गुलशकरी, बरियरा, पीयरि, जायफल, शिवलिंगी, कैथा, जावित्री, तज, तेजपात, दालचीनी, ॥१९॥ सोंठ, खस,

सुगंधवाला, मोथा, त्रिफला, वंशलोचन, शतावरी, कौंवाच के बीज, दाख, तालमखाना, गोखरू, छुहारा, बड़ीखजूर, खिरनी, धनिया, कसेरू, मुलहठी, सिंघाड़ा, जीरा, कलौंजी, अजवायन, कमल का छत्ता, जटामासी, सौंफ, मेथी ॥२०॥ विदारीकन्द, मुशली, असगन्ध, कचूर, नागकेशर, मिर्च, चिरौंजी, सेमर के बीज, गजपीपर, कमलगट्टा, सफेद चंदन, लाल चन्दन, लौंग अथवा धाय के फूल इन सब औषधियों को समान भाग लेवे ॥२१॥ इन सब को एक एक पल (चारचार) तोला) प्रमाण अलग अलग ले के चूर्ण कर मिलावे और पारा, वंग, शीशा, लोहा, अभ्रक इनकी भस्म कस्तूरी, कपूर इन में जो जो द्रव्य मिल सके उनको अपनी इच्छा के अनुसार मिलावे तदनन्तर बेल के प्रमाण (चार चार तोला के) लड्डू बनावे ॥२२॥

पूगीपाक गुण ।

तान्भुक्त्वा च सदा यथानलबलं भुंजीत नाम्लं रसं
पूर्वस्मिन्नशिते गते परिणतिं प्राग्भोजनाद्भक्षयेत् ॥
नित्यं श्रीरतिवल्लभाख्यकमिमं यः पूगपाकं भजेत्
स स्याद्वीर्यविवृद्धिवृद्धमदनो वाजीव शक्तौ रतौ ॥२३॥
दीप्ताग्निर्बलवान्बली विरहितो हृष्टः सुपुष्टः सदा
वृद्धो योऽपि युवेव सोऽपि रुचिरः पूर्णेन्दुवत्सुन्दरः ॥२४॥

उन लड्डुओं को अपने जठराग्नि के बल के अनुसार सदैव सेवन करे खटाई नहीं खाय और इनको एक बार का किया हुआ भोजन जब पच जाय तब दूसरी बार के भोजन से पहले खावे जो नित्य प्रति इस रतिवल्लभ नामक सुपारी पाक को सेवन करता है तो उसका वीर्य बढ़ता है, कामदेव प्रबल होता है, रति समय घोड़े के समान पराक्रम होता है ॥२३॥ जठराग्नि प्रदीप्त होती है, निर्बल पुरुष बलवान हो जाता है, सदैव हृष्ट पुष्ट रहता है, वृद्ध मनुष्य भी जो इस सुपारी पाक का सेवन करता है वह युवा मनुष्य के समान कान्तिवान् और पूर्ण चन्द्रमा के समान सुन्दर हो जाता है ॥२४॥

कामेश्वर मोदक ।

एतस्मिन् रतिवल्लभे यदि पुनः सम्यक् खुरासानिका ।
धत्तूरस्य च बीजमर्ककरभः पाथोधिशोषस्तथा ॥

सन्याजूफलकं तथा खसफलं त्वक् चापि निक्षिप्यते
चूर्णार्द्धा विजया तथा सहि भवेत्कामेश्वरो मोदकः ॥२५॥

इसी रतिवल्लभ नामक सुपारी पाक में यदि खुरासानी अजवायन, शुद्ध धतूरे के बीज, अकरकरा, समुद्रशोष, शुद्ध माजूफल, पोस्त, तज, इन सब का चूर्ण कर के मिलावे फिर सब चूर्ण से आधी भाँग मिलाकर लड्डू बनावे यह कामेश्वर मोदक हैं अर्थात् कामदेव को बढ़ाने वाले लड्डू हैं ॥२५॥

लघुसुपारीपाक विधिः।

हेमाम्भोधरचन्दनं त्रिकटुकं जातीं प्रियालं कुहू
मज्जा त्रित्रिसुगन्धजीरयुगलं शृंगाटकं वंशजम् ॥
जातीकोशलवंगधान्यकयुतं प्रत्येककर्षद्वयम्
हैयंगो कुडवो सितार्द्धतुलया धात्री वरा द्व्यंजली ॥२६॥
पूगस्याष्टपलान्युलूखलवरे संकुट्य चूर्णीकृतं
क्षीरस्याढकसंयुतं कृतमिदं मन्दाग्निना संपचेत् ॥

नागरमोथा, सफेदचन्दन, त्रिकटु, (पीपर, सोंठ, मिर्च,) जावित्री, चिरोंजी, बेर की मींगी, तज, इलायची, तालीसपत्र, सफेदजीरा, स्याहजीरा, सिँघाड़े की सींगी, वंशलोचन, जायफल, लौंग, धनियाँ. यह औषध प्रत्येक दो कर्ष अर्थात् आठ आठ टंक प्रमाण लेवे और गाय का नैनू एक कुडव (६४ टंक) मिश्री आधा तुला (आठ सौ आठ टंक) प्रमाण लेवे, ॥२६॥ दक्खिनी सुपारी चिकनी आठ पल अर्थात् एक सौ अट्ठाईस टंक लेकर खरल में डाल करके कूटे जब चूर्ण हो जाय तब कपड़े से छान कर एक आढक अर्थात् आठ सौ आठ टंक दूध में धीमी आँच से पचाकर खोवा बना लेवे फिर उसे घी में भून कर पाक तैयार कर लेवे॥

लघुसुपारीपाक गुण।

खादेत्प्रातरिदं ज्वरामय हरं दाहं च पित्तं जयेत्।
नासाऽस्याक्षिगदं प्रवाहरुधिरं यद्रोमकूपच्युतम् ॥२७॥

यक्ष्मा क्षीणवलं चताग्निवलयं छर्दिप्रमेहार्शसाम्
रेतोवृद्धिकरं रसायनपरं गर्भप्रदं योषिताम् ॥
मूत्राघातविनाशनं बलकरं वृद्धांगपुष्टिप्रदं ।
पूगीपाकमिदं प्रशस्तदिवसे कार्यं च ग्राह्यं बुधैः ॥२८॥

यह लघु सुपारी पाक प्रातः समय खाय तो यह ज्वर रोग को दूर करता है, दाह को शान्त करता है, पित्त को जीतता है, और नासिका, मुख, और नेत्र इनके रोगों को रुधिर बहने को, तथा रोम कूपों से जो रुधिर बहता हो ॥२७॥ और यक्ष्मा, निर्वलता, उरक्षत, मन्दाग्नि, वमन, प्रमेह, बवासीर, इन सब रोगों को हरता है, वीर्य को बढ़ाता है, श्रेष्ठ रसायन है, स्त्रियों का गर्भ दाता है, मूत्राघात रोग को विनाश करता है, बल करता है, बूढ़े शरीर को पुष्ट करता है, बुद्धिमान जन इस सुपारी पाक का अच्छे दिन बनावे और अच्छे ही दिन से सेवन करे ॥ २८ ॥

विजयापाक विधि ।

विजयाया रसं शुद्धं तुलामात्रं प्रदापयेत् ॥
क्षीरं गव्यं तुलार्द्धं तु शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥२६॥
घनीभूतं तदुत्तार्य खंडायाः पलविंशतिः ॥
चातुर्जातं लवंगं च व्योषमाकलकं तथा ॥३०॥
जातीफलं जातिपत्री ह्यश्वगन्धा पुनर्नवा ॥
नागार्जुनी स्वगुप्तानां सकलानां पलार्द्धकम् ॥
सर्वं संचूर्ण्य संमिश्र्य पलार्धगुटिका भवेत् ॥ ३१ ॥

भांग का शुद्ध रस एक तुला सोलह सौ सोलह टंक लेवे गौ का दूध अथवा घी आधा तुला (आठ सौ आठ टंक) मिलावे और धीरे धीरे मन्द मन्द आँच से पचावे ॥ २६ ॥ गाढ़ा रस हो जाने पर उतार लेवे और बीस पल (३२० टंक) मिश्री की चासनी बनाय उसमें पूर्व कहे हुए भाँग के रस को डाल कर खोवा बना लेवे फिर चातुर्जात(तज पत्रज इलायची नागकेशर) लौंग व्योष (कालीमिर्च, सोंठ, पीपर) तथा अकरकरा ॥ ३० ॥ जायफल, जावित्री, असगन्ध, सोंठ, दुद्धी, कौंचाच के बीच, बरियरा, ये औषधं प्रत्येक आधा पल (आठ टंक) प्रमाण लेवे और सब का चूर्ण बनाय कपड़े से छान कर खोवा में मिला देवे फिर आधे पल (आठ आठ टंक) प्रमाण लड्डू बाँधे ॥ ३१ ॥

गुर्च का सत, अभ्रक, लोहसार, इलायची, मिश्री, पीपर, इन सबों को बराबर लेकर चूर्ण करे और शहत में मिला कर सेवन करे तो नपुंसक भी सौ स्त्रियों को भोग कर सकता है ॥ ३ ॥

गोक्षुरादि चूर्ण ।

गोक्षुरकःक्षुरकः शतमूली वानरिनागवलातिवला च ॥
चूर्णमिदं पयसा निशि पेयं यस्य गृहे प्रमदाशतमस्ति ॥४॥

गोखरू, तालमखाना, शतावरी, कौंच के बीज, गंगेरन की छाल, खरैटी, ये औषध लेकर चूर्ण करे और रात में खाकर ऊपर से मिश्री मिला दूध पीवे जिसके घर में सौ स्त्रियाँ हों वह इस चूर्ण का सेवन करे ॥ ४ ॥

कुंकुमं मन्दनी मुस्ता चातुर्जातं फलत्रिकम् ॥
आकल्लमभ्रकं धान्यं दाडिमं मरिचं कणा ॥५॥
यवानी तिंतिडीकं च हिंगुलं घनसारकम् ॥
तुम्बरुं तगरं तोयं लवंगं जातिपत्रिका ॥६॥
समांगा पुष्करं श्यामा पद्मबीजं तुगा शटी ॥
तालीसं चित्रकं मांसी जातीपत्रमुशीरकम् ॥७॥
बला नागवला मांसी कुष्टग्रन्थिकमाषकाः ॥
यावन्त्येतानि सर्वाणि तावन्मोचरसं ददेत् ॥८॥
सर्वतुल्या सिता योज्या कर्षमात्रं तु भक्षयेत् ॥
प्रभाते च निशादौ च भोजनान्ते विशेषतः ॥९॥
निशाकाले तथा भोज्यं वाजीकरणमुत्तमम् ॥

केशर, कस्तूरी, चतुर्जात, (इलायची नागकेशर दालचीनी तेजपात) त्रिफला (आँवला हड बहेडा) अकरकरा, अभ्रक, धनियाँ, अनारदाना, मिर्च, पीपर ॥ ५ ॥ अजवायन, तिंतिडीक (इमली) शिंगरफ, कपूर, तुंबरु, तगर, नेत्रवाला, लौंग, जावित्री ॥ ६ ॥ मजीठ, पुहकरमूल, मालकागनी का फूल, कमलगट्टा, वंशलोचन, कचूर, तालीसपत्र, चीता, छड, जायफल, खस ॥ ७ ॥ खरियरा, गंगेरन की छाल, सोनामक्खी, कूट, पिपलामूल, उडद, इन सबको

समान भाग लेकर सबकें बराबर मोचरस डाले ॥ ८ ॥ और फिर सबकी बराबर मिश्री मिला कर चूर्ण बनावे यह चूर्ण एक कर्ष (१६ माशे) भर सेवन करे प्रातः काल सायंकाल और भोजन के अंत में ॥ ९ ॥ तथा रात में खाय यह श्रेष्ठ वाजीकरण है ॥

अजीर्णं जरयत्याशु नष्टाग्नेश्चाग्निदीपनम् ॥१०॥
अशीतिर्वातजान्रोगांश्चतुर्विंशति पैत्तिकान् ॥
विंशतिः श्लेष्मजांश्चैव हृल्लासं छर्दरोचकम् ॥११॥
पंचैव ग्रहणीदोषानतिसारं विशेषतः ॥
क्षयमेकादशं श्वासं कासं पंचविधं तथा ॥१२॥
उदरं व्याधिनाशं च मूत्रकृच्छ्रं गलग्रहम् ॥
पुत्रं जनयते वन्ध्या सेव्यमाने तथौषधे ॥१३॥
सन्निपातातुरं चैव विस्फोटकभगन्दरम् ॥
नेत्ररोगं शिरोरोगं कर्णमन्याहनुग्रहम् ॥१४॥
हृद्रोगं कण्ठरोगं च जानुजंघागदं तथा ॥
सर्वरोगविनाशाय चरकेण प्रभाषितम् ॥१५॥

इस कुंकुमादि चूर्ण का गुण यह है कि यह चूर्ण अजीर्ण रोग को तुरंत दूर करता है जिसकी जठराग्नि मंद होगई हो तो अग्नि को प्रदीप्त कर देता है ॥१०॥ तथा अस्सी प्रकार के वातरोगों को और चौबीस प्रकार के पित्तरोगों को और बीस प्रकार के कफजनित रोगों को तथा हिचकी, वमन, अरुचि ॥ ११ ॥ एवं पाँच प्रकार की संग्रहणी और विशेष करके अतीसार को, ग्यारह प्रकार के क्षय रोग को, श्वास तथा, पांच प्रकार की खाँसी को ॥ १२ ॥ उदररोग, मूत्रकृच्छ्र (सुजाक) और गलग्रह को दूर करता है। इस औषध के सेवन से वाँझ स्त्री पुत्र उत्पन्न करती है और सन्निपातरोग, शीतला, भगन्दर, नेत्ररोग, सिररोग, कान के रोग, नाड़ी का जकड़ना और हनुग्रह (नखनखीरोग) ॥ १३-१४ ॥ हृदयपीडा, कंठरोग, और जानुरोग तथा जंघारोग इन रोगों को शान्त करने के निमित्त चरक ने कहा है ॥ १५ ॥

लवंगादि चूर्णविधि तथा गुण ॥

लवंगकंकोलमुशीरचन्दनं नतं सनीलोत्पलकृष्णजीरकम् ।

एला सकृष्णागरु नागकेशरं कणासविश्वानलदं सहांबुना १६
कर्पूरजातीफलवंशलोचना सिताऽर्द्धमात्रा समसूक्ष्मचूर्णितम्
सुरोचनं तर्पणमग्निदीपनं बलप्रदं वृष्यतमं त्रिदोषनुत् ॥१७॥
अर्शोविबन्धं तमकं गलग्रहं सकासहिक्कारुचियक्ष्मपीनसम् ॥
ग्रहण्यतीसारमथासृजःक्षयं प्रमेहगुल्मांश्च निहन्ति सत्वरम् १८

लवंगादि चूर्ण की विधि और गुण कहते हैं, लौंग, कंकोल, खस, सफेद चन्दन, तगर, नीलकमल, स्याहजीरा, सफेद इलायची, काला अगर, नागकेशर, पीपर, सोंठ, छड, नेत्रवाला ॥ १६ ॥ कपूर, जायफल, वंशलोचन, इन सबको बराबर लेके महीन चूर्ण करे चूर्ण से आधी मिश्री को चूर्ण करके डाले, यह लवंगादि चूर्ण रोचक है, तृप्तिकारक है, जठराग्नि को प्रदीप्त करता है, बल को देता है, वीर्य को बढाता है और त्रिदोष (वातपित्तकफजनित सन्निपात) को हरता है ॥ १७ ॥ और बवासीर, अफरा, तमकश्वास, गलग्रह, खाँसी, हिचकी, अरुचि, यक्ष्मा, पीनस, संग्रहणी, अतीसार, रुधिरविकार, क्षयी, प्रमेह और गुल्म (वायगोला) इन रोगों को शीघ्र नाश करता है ॥ १८ ॥

लवंगमेलातजपत्रजोत्पलं उशीरमांसीतगरं सवालकम् ॥
कंकोलकृष्णागरुनागकेशरं जातीफलं चन्दनजातिपत्रिका १९
द्विजीरकत्र्यूषणपुष्करं शटी फलत्रिकं कुष्ठविडंगचित्रकम् ॥
तालीसपत्रं सुरदारुधान्यकं यवानियष्टी खदिराम्लवेतसम् २०
तुंगाजमोदाघनसारमभ्रकं शृंगीवृषाग्रन्थिकमग्निमंथकम् ॥
प्रियंगुमुस्तातिविषाशतावरीःसत्वं गुडूच्याश्रिवृता दुरालभा २१
समानि सर्वैश्च समा सिता भवेद्बृहल्लवङ्गादिरयं निगद्यते ॥
सायंप्रगे खादति कर्षसम्मितं भवन्ति देहे बलवीर्यपुष्टयः २२
नियतं दीपयत्यग्निं तनुवर्णकरं परम् ॥
शतघ्नं लोचनहृदि कण्ठजिह्वाविशोधनम् ॥२३॥
प्रमेहकासारुचियक्ष्मपीनसक्षयासदाहग्रहणीत्रिदोषनुत् ॥
हिक्कातिसारप्रदरान्गलग्रहं निहन्ति पाण्डुं स्वरभङ्गमश्मरीम् ॥

अथ वृहल्लवंगादि चूर्ण।की विधि और गुण कहते हैं। लौंग, इलायची, तज, पत्रज, कमलगट्टा, खस, छड, तगर, नेत्रवाला, कंकोल, कालाअगर, नागकेशर, जायफल, सफेद चन्दन, जावित्री ॥१६॥ स्याह सफेद दोनों जीरा, त्र्यूषण (कालीमिर्च पीपर सोंठ) पुहकरमूल, कचूर, त्रिफला (हर्र बहेड़ा आँवला) कूट, वायविडंग, चीता, तालीसपत्र, देवदारु, धनियाँ, अजवाइन, मुलहठी, खैरसार, अम्लवेत ॥ २० ॥ नागकेशर, अजमोद, कपूर, अभ्रक, ककरासिंगी, अडूसा, पिपलामूल, अरनी, मालकागनी का फूल, मोथा, अतीस, शतावरी, गुर्च का सत, निसोत, जवासा ॥२१॥ इन सब औषधियों को समान भाग लेकर चूर्ण करे और चूर्णके बराबर मिश्री पीस कर मिलावे यह वृहल्लवंगादि चूर्ण कहा है इसको संध्या समय और प्रातः समय में एक कर्ष (१६ माशा) प्रमाण खाय तो देह में बल वीर्य बढ़ता है और शरीर पुष्ट होता है ॥२२॥ यह चूर्ण सेवन करने से नित्य जठराग्नि को प्रदीप्त करता है, शरीर की कान्ति को बढ़ाता है, वात विकार को दूर करता है। नेत्र, हृदय, कंठ, जीभ इनको शोधन करता है ॥२३॥ तथा प्रमेह, खाँसी, अरुचि, यक्ष्मा, पीनस, क्षयी, रुधिर विकार से उत्पन्न दाह, संग्रहणी और त्रिदोष (वात पित्त कफ जनित सन्निपात), इन सब रोगों को हरता है, एवं हिचकी, अतीसार (दस्तों का आना) प्रदर (स्त्रियों की योनि से धातु गिरना) गलग्रह, पांडुरोग, स्वरभंग, पथरी, ये सब रोग वृहल्लवंगादि चूर्ण के सेवन से नाश हो जाते हैं ॥२४॥

षट्कटु चूर्ण।

पिप्पली पिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ॥
मरिचेन समायुक्तं षट्कटुः कथ्यते बुधैः ॥२५॥

पीपर, पिपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ, कालीमिर्च, इन छः द्रव्यों को बुध जनों ने षट् कटु कहा है ॥ २५ ॥

शुंठ्यादि चूर्णविधि तथा गुण।

सविश्वसौवर्चलपुष्कराह्वयं सहिंगुमुष्णोदकपीतमेतत् ॥
हृत्कोष्ठपृष्ठान्तरवंक्षणान्तःशूलं जयत्याशुमरुत्कफोत्थम् २६

शुंठ्यादि चूर्ण कहते हैं। सोंठ, सोंचरनमक, पुहकरमूल, हींग, इन औषधियों के चूर्ण को गरम पानी के साथ खाने से हृदय रोग, कोष्ठगत विकार,

पट्ठी में पीड़ा, उरुसन्धि, उदरपीड़ा और वात कफ से उत्पन्न विकार यह सब रोग शीघ्र नाश हो जाते हैं ॥ २६ ॥

त्रिकटु आदि चूर्णविधि तथा गुण।

त्रिकटु ग्रन्थिकं ब्राह्मी रेणुकाकल्पपुष्करम् ॥
लवंगमश्वगन्धा च किराततं हवुषा शटी ॥२७॥
रास्ना श्वेता वचा भृङ्गं सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥
सन्निपाते महावाते चूर्णमेवं सदा हितम् ॥२७॥

त्रिकटु आदि चूर्ण कहते हैं। त्रिकटु (काली मिर्च सोंठ पीपर) पिपलामूल, ब्राह्मी, रेणुका, अकरकरा, पुहकरमूल, लौंग, असगंध, चिरायता, हाऊवेर, कचूर ॥ २७ ॥ रासन, सफेद वच, भाँगरा, इन सबको इकट्ठा करके चूर्ण बनावे यह चूर्ण सन्निपात, महावात विकार में सदैव हितकारी है ॥ २८ ॥

पिप्पल्यादि चूर्ण विधि तथा गुण।

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरम् ॥
मरिचं दीपकं चैव वृक्षाम्लं चाम्लवेतसम् ॥२६॥
अजमोदाऽजगन्धा च कपिकच्छुश्च कर्षिका ॥
सूक्ष्मैला केशरं भृंगं पत्रन्तालीसकं तुगा ॥३०॥
मृद्वीका दाडिमं धान्यं जीरके द्वे द्विकर्षिका ॥
अत्यन्तसुविशुद्धायाः शर्करायाश्चतुःपलम् ॥३१॥
चूर्णं सदा हितं पुंसां परमं रुचिवर्द्धनम् ॥
प्लीहकासामयार्शांसि श्वासं शूलं च सज्वरम् ॥३२॥
निहन्ति दीपयत्यग्निं बलवर्णकरं परम् ॥
वातघ्नं लोचनं हृद्यं कण्ठजिह्वाविशोधनम् ॥३३॥

पिप्पल्यादि चूर्ण कहते हैं। पीपर, पिपलामूल, चव्य, चीता सोंठ, मिर्च, अजवायन, तिंतिडीक, अमलवेत, ॥ २६ ॥ अजमोद, असगंध, कौंच के बीज इन

औषधियों को एक एक कर्ष अर्थात् चार चार टंक भर लेवे और छोटी इलायची, केशर, भँगरा, तालीसपत्र, वंशलोचन ॥ ३० ॥ दाख, अनारदाना, धनिया, स्याह जीरा, सफेद जीरा ये दो दो कर्ष प्रमाण लेवे और बहुत अच्छी सफेद शक्कर अथवा मिश्री चार पल मिला कर चूर्ण बना लेवे ॥ ३१ ॥ यह चूर्ण मनुष्यों को सदा हितकारी है, रुचि को बहुत बढ़ाता है और तिल्ली, खाँसी, बवासीर, श्वास, शूल तथा ज्वर इन रोगों को दूर करता है ॥ ३२ ॥ तथा जठराग्नि को प्रदीप्त करता है, शरीर में बल और कांति को बढ़ाता है, वातविकार को दूर करता है और नेत्र, हृदय, कंठ और जीभ का शोधन करता है ॥ ३३ ॥

लघुएलादि चूर्ण तथा गुण ।

त्रुटिलवंगविडंगकटुत्रिकं घनशिवाशिवपत्रजकं समम् ॥
त्रिगुणितात्रिवृताचसितासमाअदनमामपतिष्यति कामतः ३४

सफेद इलायची, लौंग, वायविडंग, त्रिकटु (मिर्च पीपर सोंठ) नागरमोथा, हर्र, आँवला, पत्रज इन औषधियों को बराबर लेकर इनके बराबर निसोत चूर्ण करके मिलावे और सबके बराबर मिश्री पीस कर मिलावे इस एलादि चूर्ण के खाने से आँव सब झर कर गिर जायगा और कोठा शुद्ध हो जायगा ॥ ३४ ॥

चातुर्जातकादि चूर्णविधि तथा गुण ।

चातुर्जाततुगाद्विजीरकघना तालीससारा दश
वृक्षाम्लं कपिकच्छुषट्क कटुवर्याम्लद्विदीप्याचषट् ॥
चूर्णं तुल्यसितं बलाग्निरुचिकृत्प्लीहशूलानिल—
श्वासार्शःकसनव्यथाज्वरवमीहृत्कंठजिह्वार्तिजित्३५

चातुर्जातादि चूर्ण की विधि और गुण कहते हैं । चातुर्जात (तज पत्रज इलायची नागकेशर) वंशलोचन, सफेद जीरा, स्याह जीरा, तालीसपत्र, अनारदाना इन द्रव्यों को दश कर्ष प्रमाण लेवे और तिंतिडीक, कैथा, षट्कटु (पीपर, पिपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ, मिर्च) अम्लवेत, अजमोद, अजवायन, इनको छः कर्ष भर लेवे इन सबके बराबर मिश्री पीस कर मिलावे यह चूर्ण बल, अग्नि और रुचि को बढ़ाता है और तिल्ली, वातरोग, श्वास, बवासीर, खाँसी, ज्वर, वमन, हृदय, कंठ, और जीभ इनकी पीड़ा को दूर करता है ॥ ३५ ॥

त्रिजातादि चूर्ण तथा गुण।

त्रिजातविश्वात्रिफलाविडंगं द्राक्षानिशायुग्मसरिष्टपत्रम् ॥
कृष्णा गुडूचीमिसिमेषशृंगी पुरातनाःषष्ठिकतन्दुलाश्च ॥३६॥
एतानि चूर्णानि समानि कृत्वा सिता प्रदेया तदनन्तरं समा॥
दिनोदये चूर्णमिदं हि खादेत्कुर्यान्नरं शीतरसापहारिणम्॥३७
दद्रूणि रक्तं कुपितं च पित्तं कुष्ठाम्लपित्तं सविसर्जिपामाम् ॥
विस्फोटकान्मण्डलकान्प्रदोषानाशुप्रकर्षं प्रशमं प्रयान्ति ३८

त्रिजातादि चूर्ण और उसका गुण कहते हैं। त्रिजात (सफेद इलायची, तज, तमालपत्र,) सोंठ, त्रिफला, वायविडंग, दाख, साठी के पुराने चावल ॥३६॥ इन सबको बराबर लेवे और चूर्ण कर सबके बराबर मिश्री पीस कर मिलावे इस चूर्ण को प्रातःकाल खाना चाहिये ॥ ३७ ॥ इसके सेवन से दाद, रुधिर का कोप, पित्तविकार, कोढ़, अम्लपित्त, खाज, खसरा, शीतलारोग और चकत्ता, ये सब रोग शीघ्र शान्त हो जाते हैं ॥ ३८ ॥

त्रिफलादि चूर्ण तथा गुण।

त्रिफलां त्रपुषीबीजं सैन्धवं च शिलाजतु ॥
बद्धमूत्रे हितं चूर्णं नात्र कार्या विचारणा ॥३९॥

त्रिफला (हर बहेड़ा आँवला) ककरी के बीज, सेंधा, शिलाजीत इन सब द्रव्यों का चूर्ण मूत्र बंध जाने पर हितकारी है इसमें कुछ भी शंका नहीं करना चाहिये ॥ ३९ ॥

तालीसादि चूर्णविधि।

तालीसोषणचव्यनागलवणैस्तुल्यांशकैर्द्विस्थितं
कृष्णग्रन्थिकतिंतिडीकहुतभुक्त्वग्जीरकौ तुर्यकौ ॥
विश्वैलाबदराम्लवेतसघनैर्धान्याऽजमोदान्विता–
स्तिसोदाडिमसारपादसहितः श्रेष्ठः सितापाण्डवः॥४०॥

तालीसादि चूर्ण की विधि कहते हैं। तालीस, कालीमिर्च, चव्य, नागकेशर, सेंधालवण ये सब समान भाग चार चार टंक भर लेवे और पीपर, पिपलामूल, तिंतिडी, चीता, तज, सफेद स्याह दोनों जीरे ये आठ आठ टंक भर लेवे तथा सोंठ, इलायची, बेर, अम्लवेत, नागरमोथा, धनियाँ, अजमोद ये बारह बारह टंक लेवे इन सबका चौथाई अनारदाना लेवे सबके बराबर मिश्री मिला कर चूर्ण बना लेवे ॥ ४० ॥

तालीसादि चूर्णगुण ।

कंठास्योदरहृद्विकारशमनः कामाग्निसन्दीपनो
गुल्माध्मानविषूचिकागुदरुजः श्वासं कृमिं छर्दितान् ॥
कासारुच्यतिसारगूढमरुतां हृद्रोगिणां कीर्तित—
श्चूर्णोऽयं भिषजामतीव दयितः ख्यातो महाखाण्डवः॥४१॥

इस चूर्ण के सेवन से कँठ मुख और हृदय के विकार नाश हो जाते हैं कामाग्नि प्रदीप्त हो जाती है, और वायगोला, अफरा, हैजा, बवासीर, दमा, कृमि-रोग और वमन तथा खाँसी, अरुचि, अतीसार (दस्त) गूढ़वात विकार, हृदय-रोग इन रोगों को नाश करने वाला यह चूर्ण वैद्य जनों को बहुत ही प्रिय महा खाण्डव नाम से विख्यात है ॥ ४१ ॥

द्वितीय तालीसादिचूर्णविधि तथा गुण ।

तुल्यं तालीसचव्योषणलवणगजाह्वैः कणाग्रन्थ्यजाजी
वृक्षाम्लाग्नित्वचघनबदरधान्यैलाजमोदाम्लविश्वम् ॥
सार्द्धं श्वेतार्द्धसारेऽतिसृतिकृमिवमौ खांडवोऽरुच्यजीर्णे
गुल्माध्मानानलास्योदरगलगुदमृद्धामृदश्वासकासे ॥४२॥

दूसरा तालीसादि चूर्ण कहते हैं। चव्य, मिर्च, सेंधा, नागकेशर, गज-पीपर, पिपलामूल, जीरा, तिंतिडीक, चीते की छाल, नागरमोथा, बेर, धनियाँ, इलायची, अजमोद, अमलबेत, सोंठ, अनारदाना, ये औषध बराबर लेवे इनसे आधी मिश्री पीस कर मिलावे और मिश्री को छोड़ और सब औषधियों का आधा सार उसमें मिलावे, यह चूर्ण कृमिरोग, कंठरोग, बवासीर, मिट्टी खाने से उत्पन्न रोग, उदररोग, दमा, खाँसी, इन रोगों में यह खांडव चूर्ण हितकारी है ॥ ४२ ॥

गगनाशय चूर्ण ।

त्रिकटु त्रिसुगंधं च लवंगं जातिकाफलम् ॥
तुगाक्षीरी शटी श्रृंगी वाजिगन्धा च दाडिमी ॥४३॥
एतानि समभागानि सर्व तुल्यमयोरजः ॥
आयसेन समं देयं गगनं च सुशोधितम् ॥४४॥
यावदेतानि चूर्णानि तावद्द्यात्सितोपला ॥
कर्षप्रमाणं दातव्यं खादयेच्च यथा बलम् ॥४५॥

त्रिकटु (काली मिर्च पीपर सोंठ) त्रिसुगन्ध (सफेद इलायची तज पत्रज) लौंग, जायफल, वंशलोचन, जवाखार, कचूर, ककरासिंगी, असगन्ध और अनारदाना ॥ ४३ ॥ इन सबको बराबर लेके चूर्ण करे सबके बराबर सार और सार के बराबर शुद्ध अभ्रक डाले ॥ ४४ ॥ जितना यह सब चूर्ण हो उतने प्रमाण मिश्री पीस कर मिलावे और एक कर्ष (१६ माशा) भर मात्रा बल के अनुसार खाने को देवे ॥ ४५ ॥

गगनाशय चूर्णगुण ।

अग्निसंजननं हृद्यं प्रमेहं हन्ति दारुणम् ॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च धातुस्थं विषमज्वरम् ॥४६॥
नाशयेच्च त्रिदोषं च राजयक्ष्मज्वरापहम् ॥
पीनसं कासश्वासघ्नं रुच्यं कासहरं परम् ॥४७॥

यह गगनाशय चूर्ण जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला, हृदयरोग को दूर करने वाला और दारुण प्रमेहरोग को नाश करने वाला है तथा पथरी, सुजाक, धातु में स्थित विषम ज्वर ॥ ४६ ॥ त्रिदोष (सन्निपात) राजयक्ष्मा एवं ज्वर को नाश करता है। पीनस, खाँसी, श्वास को शांत करता है, रुचि को बढ़ाता है और घोर खाँसी को दूर करता है ॥ ४७ ॥

सितोपलादि चूर्ण ।

सितोपला षोडश स्यादष्टौ स्याद्वंशलोचना ॥
पिप्पली स्याच्चतुःकर्षा एला च द्वयकर्षिका ॥४८॥

एककर्षा च त्वकार्या चूर्णयेत्सर्वमेकतः ॥
सितोपलादिकं चूर्णं मधुसर्पिर्युतं लिहेत् ॥४९॥

सोलह कर्ष मिश्री, आठ कर्ष वंशलोचन, चार कर्ष पीपर, दो कर्ष सफेद इलायची ॥ ४८ ॥ एक कर्ष दालचीनी इन सबको इकट्ठा कर इनका चूर्ण करे यह सितोपलादि चूर्ण प्रातः सायं बलानुसार मात्रा शहत और घी के साथ चाटे ॥४९॥

सितोपलादि चूर्णगुण ।

कासश्वासक्षयहरं हस्तपादांगदाहजित् ॥
मन्दाग्निं शुष्कजिह्वां च पार्श्वशूलमरोचकम् ॥५० ॥
ज्वरमूर्ध्वगतं रक्तं पित्तमाशु व्यपोहति ॥ ५१ ॥

सितोपलादि चूर्ण का गुण कहते हैं। यह चूर्ण खाँसी, श्वास, क्षयी इन रोगों को हरता है, हाथ पाँव और अंगों की जलन को शान्त करता है और मन्दाग्नि, जीभ का सूखना, कुक्षिपीड़ा और अरुचि को दूर करता है ॥ ५० ॥ एवं ज्वर, ऊर्ध्वगत (ऊपर को चढ़ा हुआ) रुधिर विकार, पित्तरोग इन सबको शीघ्र नाश करता है ॥ ५१ ॥

श्रीखंडादि चूर्ण ।

श्रीखंडं मरिचं लवंगफलजं द्राक्षा तजं पत्रजं
रक्तं चन्दनवालके मधुनिशाशुंठीकणाग्रन्थिकैः ॥
धान्या जीरककेशरं जलफलं खर्जूरसम्यक्सिता-
श्चूर्णं भेषजमिश्रितं समसितं मात्राविडालं पदम् ॥५२॥

सफेद चन्दन, काली मिर्च, लौंग, जायफल, दाख, तज, पत्रज, लालचन्दन, नेत्रबाला, मुलहठी, हल्दी, सोंठ, पीपर, पिपलामूल, धनियाँ, जीरा, केशर, सिंघाड़ा, छुहारा, इन सबको बराबर लेके चूर्ण करे चूर्ण के बराबर मिश्री पीस कर मिलावे एक कर्ष (१६ माशे) भर इसकी मात्रा है ॥ ५२ ॥

श्रीखंडादि चूर्णगुण ।

श्वासं शोषयुतक्षयज्वरहरं पित्तप्रमेहापहम्
रक्तं तापजडं च कासमरुचिं व्याधिं भगंद्रापहम् ॥

क्षीणे देहपतत्रयाप्युतवलं सर्वातिसारापहं
सर्वव्याधिविनाशनं निगदितं श्रीखंडचूर्णाभिधम्॥५३॥

श्रीखंडादि चूर्ण के गुण कहते हैं। सूखापन लिये हुए श्वास, (दमा) और क्षयरोग, ज्वर, पित्त तथा प्रमेह इन रोगों को यह चूर्ण हरता है एवं रुधिर विकार, ताप, जड़ता, खाँसी, अरुचि और भगन्दर इन रोगों को दूर करता है तथा क्षीण शरीर को पुष्ट करता है, सब प्रकार के अतीसार (दस्तों के रोग) को शान्त करता है, यह श्रीखंड नामक चूर्ण सब रोगों को नाश करने वाला कहा है॥५३॥

शंखादि चूर्ण।

शंख चूर्णं सलवणं सहिंगुव्योपसंयुतम्॥
उष्णोदकेन संपीतं हन्ति शूलं त्रिदोपजम्॥५४॥

शंख का चूरा, सेंधा नमक, हींग, व्योप (मिर्च पीपर सोंठ) इनका चूर्ण फाँक कर गरम जल ऊपर से पीवे तो त्रिदोष (वात पित्त कफ) से उत्पन्न पीड़ा को यह चूर्ण शान्त करता है॥५४॥

कायफलादि चूर्ण तथा गुण।

कट्फलं पुष्करं भार्ङ्गी शृंगी च मधुना सह॥
श्वासकासज्वरहरं कट्फलादि कफान्तकम्॥५५॥

कायफल, पुष्कर, भारंगी, ककरासिंगी इनका चूर्ण बना कर शहत के साथ चाटे तो खाँसी, दमा और ज्वर को हरता है यह कायफलादि चूर्ण कफ को दूर करता है॥५५॥

षड्योग चूर्ण तथा गुण।

चित्रकेन्द्रयवापाठा कटुकातिविषाभया॥
महाव्याधिप्रशमनो योगः षड्धरणः स्मृतः॥५६॥
मधुना भक्षिते हन्ति चूर्णमेकं हि निश्चितम्॥
भ्रमं दाहं शीतपीडां क्षयरोगं न संशयः॥५७॥

षड्योग चूर्ण और गुण कहते हैं। चीता, इन्द्रजौ, पाढ, कुटकी, अतीस, हर्र यह षट्चरणयोग महारोग नाशक कहा है ॥ ५६ ॥ शहत के साथ अकेला ही यह चूर्ण चाटने से निश्चय करके भ्रम, दाह, और शीतपीड़ा तथा क्षयरोग को नाश करता है ॥ ५७ ॥

कीलकादि चूर्ण तथा गुण।

गृहधूमो यवाक्षारं पाठाव्योषरसांजनम् ॥
तेजोह्वा त्रिफला लोध्रं चित्रकं चेति चूर्णितम् ॥५८॥
सक्षौद्रं धारयेदेतद्गलरोगविनाशनम् ॥
चूर्णन्तु भक्षयेद्धीमान् दन्तास्यस्य च रोगजित् ॥५९॥

कीलकादि चूर्ण और गुण कहते हैं। घर का धुआँ, जवाखार, पाढ, मिर्च, पीपर, सोंठ, रसौत, तज, दालचीनी, हर्र, बहेडा आँवला, लोध, चीता इन सबका चूर्ण बनावे ॥ ५८ ॥ और शहत के साथ यह चूर्ण चाटे तो गल (कंठ) रोग दूर होवे, जो बुद्धिमान् इस चूर्ण का सेवन करे तो दाँत और मुख का रोग शान्त हो जावे ॥ ५९ ॥

पंचनिम्ब चूर्ण तथा गुण।

मूलं पत्रं फलं पुष्पं त्वङ्निम्बस्य समाहरेत् ॥
सूक्ष्मचूर्णमिदं कुर्यात्पलैः पंचदशोन्मितैः ॥६०॥
लोहभस्महरीतक्यौ चक्रमर्दकचित्रकैः ॥
भल्लातकं विडंगानि शर्करामलकं निशा ॥६१॥
पिप्पली मरिचं शुंठी बाकुचीकृतमालकैः ॥
गोक्षुरं च पलोन्मानमेकैकं कारयेद्बुधः ॥६२॥
सर्वमेकीकृतं चूर्णं भृंगराजेन भावयेत् ॥
अष्टभागावशिष्टेन खादिरासनवारिणा ॥६३॥
भावयित्वा सशुष्कं च कर्षमात्रं ततः पिबेत् ॥
खादिरसारतोयेन सर्पिषा पयसाऽथवा ॥६४॥

मासेन सर्वकुष्ठानि विनिर्यान्ति रसायनम् ॥
पंचनिम्बमिदं चूर्णं सर्वरोगप्रणाशनम् ॥६५॥

पंचनिंब चूर्ण और गुण कहते हैं। निंबवृक्ष की जड़, पत्ता, फल, फूल और छाल यह निंबवृक्ष का पंचांग है इस पंचांग को लेकर इसका पन्द्रह पल प्रमाण चूर्ण बनावे ॥ ६० ॥ और लोहभस्म, हर्र, पँवार के बीज, चीता, भिलावा, बायविडंग, मिश्री, आँवला, हलदी ॥ ६१ ॥ पीपर, मिर्च, सोंठ, बकुची, अमलतास की गूदी, गोखरू यह सब औषधियां एक एक पल लेवे ॥ ६२ ॥ और सबको इकट्ठी कर चूर्ण बनाय भँगरा के रस की भावना देवे अर्थात् भँगरा के रस में तर करके सुखावे फिर आठवाँ भाग खैरसार और विजयसार की भावना देवे ॥ ६३ ॥ अनन्तर सुखा कर एक कर्ष (१६ माशे) प्रमाण मात्रा प्रतिदिन खैरसार के जल अथवा घी या दूध के साथ पान करे ॥ ६४ ॥ एक महीना तक सेवन करने से सब प्रकार के कुष्ठरोग (कोढ़) नाश हो जाते हैं। यह रसायन रूप पंचनिम्ब चूर्ण सब रोगों का नाश करने वाला है ॥ ६५ ॥

कुष्ठनाशक चूर्ण तथा गुण।

भल्लातकास्तिलैः सार्धमथवा शुंठितन्दुलैः ॥
खंडेन चूर्णितं कार्यं कुष्ठरोगनिवृत्तये ॥६६॥

कोढ़ रोग को नाश करने वाला चूर्ण कहते हैं। भिलावा को तिलों के साथ अथवा सोंठ, चावल व मिश्री के साथ इसका चूर्ण कुष्ठरोग की शान्ति के निमित्त सेवन करे ॥ ६६ ॥

सुदर्शन चूर्ण।

त्रिफला रजनीयुग्मं कंटकारीयुगं शटी ॥
चित्रकं ग्रन्थिकं व्योषं गुडूचीधन्वयासके ॥६७॥
कटुका पर्पटी मुस्ता त्रायमाणं च वालकम् ॥
निम्बं पुष्करमूलं च मधुयष्टी च वासकम् ॥६८॥
यवानीन्द्रयवा भार्ङ्गी शिग्रुबीजं सुराष्ट्रकम् ॥
वचा त्वक्पद्मकोशीरं चन्दनातिविषा बला ॥६९॥
शालिपर्णी पृष्ठिपर्णी विडंगं तगरं तथा ॥

तिक्तको देवदारुश्च चव्यं पत्रं पटोलजम् ॥७०॥
जीवकर्षभकौ चैव लवंगं वंशलोचनम् ॥
पुण्डरीकं च काकोली पत्रजं जातिपत्रकम् ॥७१॥
तालीसपत्रं च तथा समभागानि चूर्णयेत् ॥
सर्वचूर्णस्य चार्धांशं किरातं प्रक्षिपेत्सुधीः ॥७२॥

सुदर्शन चूर्ण कहते हैं । त्रिफला (आँवला हर्र बहेडा) दोनों हलदी, दोनों कटाई, कचूर चीता, पिपलामूल, व्योप (मिर्च पीपर सोंठ) गुर्च, धमासा ॥ ६७ ॥ कुटकी, पित्तपापडा, मोथा, त्रायमाण, नेत्रवाला, नीम की छाल, पुहकरमूल, मुलहठी, अडूसा ॥ ६८ ॥ अजवायन, इन्द्रजौ, भारंगी, सहजन के बीज, फिटकरी, वच, तज, पद्मकाष्ठ, खस, चन्दन, अतीस, वरियरा ॥ ६९ ॥ सरिवन, पिठवन, वायविडंग, तगर, चिरायता, देवदार, चव्य, पटोलपत्र ॥ ७० ॥ जीवक, ऋषभक, लौंग, वंशलोचन, कमलगट्टा, काकोली, पत्रज, जावित्री ॥ ७१ ॥ तालीसपत्र इन सब औषधियों को बराबर लेके चूर्ण बनावे सब चूर्ण से आधा चिरायता पीस कर मिलावे बुद्धिमान् वैद्य इस प्रकार सुदर्शन चूर्ण बनावे ॥ ७२ ॥

सुदर्शन चूर्णगुण ।

एतत्सुदर्शनं नाम चूर्णं दोषज्वरापहम् ॥
ज्वरांश्च निखिलान् हन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ ७३ ॥
सन्निपातोद्भवांश्चापि मानसानपि नाशयेत् ॥
शीतज्वरैकाहिकादीन्मोहं तन्द्रां भ्रमं तृषाम् ॥ ७४ ॥
श्वासं कासं च पाण्डुं च हृद्रोगं हन्ति कामलाम् ॥
त्रिकपृष्ठकटीजानुपार्श्वशूलनिवारणम् ॥ ७५ ॥
शीताम्बुना पिबेद्धीमान्सर्वज्वरनिवृत्तये ॥
यथा सुदर्शनं चक्रं दानवानां विनाशनम् ॥ ७६ ॥
तथा ज्वराणां सर्वेषामिदं चूर्णं प्रशस्यते ॥
नानादेशोद्भवांश्चैव नीरदोषान् व्यपोहति ॥ ७७ ॥

ऐसा यह सुदर्शन नामक चूर्ण वात आदि दोषों से उत्पन्न ज्वर को हरने वाला है। सब प्रकार के ज्वरों को नाश करता है इसमें कुछ सन्देह नहीं करना चाहिये ॥ ७३ ॥ सन्निपात से प्रगट हुए ज्वरों को और मन से उत्पन्न हुए ज्वरों को दूर करता है। शीतज्वर और एकतरा आदि ज्वर, मोह, तन्द्रा, भ्रम, प्यास ॥ ७४ ॥ श्वास (दमा) कास (खाँसी) और पांडुरोग, हृदयरोग, कामलारोग, त्रिकपीड़ा, पीठ, कमर, घुटना, कुक्षि इनकी पीड़ा को शान्त करता है ॥ ७५ ॥ सब प्रकार के ज्वरों को निवारण करने के अर्थ बुद्धिमान् जन इस चूर्ण को फांक कर ऊपर से शीतल जल पीवे। जैसे विष्णु भगवान् का सुदर्शन चक्र दानवों का विनाशक है ॥ ७६ ॥ इसी प्रकार यह सुदर्शन चूर्ण सब ज्वरों को नाश करने में उत्तम है। अनेक देशों के जल पीने से उत्पन्न दोषों को यह सुदर्शन चूर्ण दूर कर देता है ॥ ७७ ॥

षोडशांग चूर्ण तथा गुण।

किराततिक्तकं तिक्ता गुडूची चाभया घना।
धन्वयासकत्रायंती क्षुद्रा शृंगी महौषधम् ॥ ७८ ॥
पर्पटं च प्रियंगुं च पटोलं मागधी शठी।
षोडशांगमिति प्रोक्तं ज्वरशूलविनाशनम् ॥ ७९ ॥

चिरायता, नीम की छाल, कुटकी, गुर्च, हर्र, मोथा, धन्वयासक (जवासा) चिरायते का फल, कटेरी, ककरासिंगी, सोंठ ॥ ७८ ॥ पित्तपापड़ा, मालकागनी, परवर के पत्ते, पीपर, कचूर इन सोलह औषधियों का चूर्ण षोडशांग नाम से प्रसिद्ध है सो ज्वर की पीड़ाओं को विनाश करने वाला कहा है ॥ ७९ ॥

अरिष्टादि चूर्ण तथा गुण।

निम्बच्छदो दशपलं त्र्यूषणं च पलत्रयम्।
त्रिपलं त्रिफला चैव त्रिपलं लवणत्रयम् ॥ ८० ॥
द्वौ क्षारौ द्विपलं चैव यवानी पलपंचकम्।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं प्रत्यूषे भक्षयेन्नरः ॥ ८१ ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकं च त्रिदिनं च तथा ज्वरम्।
चातुर्थिकं महाघोरं सांत्वयेत्संततं ज्वरम् ॥ ८२ ॥

अरिष्टादि (निंबादि) चूर्ण और उसका गुण कहते हैं। नीम की छाल दश पल, त्र्यूषण (मिर्च, पीपर, सोंठ) तीन पल, त्रिफला (हर्र बहेड़ा आँवला) तीन पल और तीनों लवण (विड सेंधा सोंचर) तीन पल ॥ ८० ॥ दोनों खार (जवाखार सज्जीखार) दो पल एवं अजवायन पाँच पल, यह सब द्रव्य एकत्र कर चूर्ण बना कर मनुष्य नित्य प्रातःकाल भक्षण करे ॥ ८१ ॥ तो एकाहिक (एकतरा) दोतरा, तिजारी, चौथिया तथा निरन्तर इन महा कठिन ज्वरों की शान्ति इस चूर्ण से होती है ॥ ८२ ॥

शृंग्यादि चूर्ण तथा गुण ।

शृंगी कटुत्रिफलकत्रयकंटकार-
भार्ङ्गीसपुष्करजटालवणानि पंच ।
चूर्णं पिबेदशिशिरेण जलेन हिक्का-
श्वासोर्ध्ववातकसनारुचिपीनसेषु ॥ ८३ ॥

ककरासिंगी, त्रिकटु (मिर्च पीपर सोंठ) त्रिफला (हर्र बहेड़ा आँवला) कटाई, भारंगी, पुहकरमूल, पांचो नमक (विड, सोंचर, सेंधा, कचिया, समुद्र लवण) इन सबका चूर्ण बना कर फांके ऊपर से गरम जल पीवे तो हिचकी, दमा, ऊपर को चलने वाली श्वांस, वात, खाँसी, कफ, अरुचि, पीनस रोगों का नाश होवे ॥ ८३ ॥

लवणभास्कर चूर्ण तथा गुण ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं धान्यकं कृष्णजीरकम् ।
सैंधवं च विडंगं च पत्रं तालीसकेशरम् ॥ ८४ ॥
एषां द्विपलिकान्भागान् पंच सौवर्चलस्य च ।
मरिचं शुंठ्यजाजी स्यादेकैकं च पलं पलम् ॥ ८५ ॥
त्वगेला चार्द्धभागेन सामुद्रं च पलाष्टकम् ।
चतुःपलं दाडिमं च द्विपलं चाम्लवेतसम् ॥ ८६ ॥
एतच्चूर्णीकृतं सूक्ष्मं लवणं भास्कराभिधम् ।
गवां तक्रं सुरा सुष्ठु दाधिकांजिकयोजितम् ॥ ८७ ॥

वातश्लेष्मं वातगुल्मं वातशूलं च नाशयेत् ।
मन्दाग्निं ग्रहणीमर्शो हृद्रोगं प्लीहमेव च ॥ ८८ ॥

लवणभास्कर चूर्ण कहते हैं, पीपर, पिपलामूल, धनियां, स्याहजीरा, सेंधा नमक, वायविडंग, तालीसपत्र, केशर ॥ ८४ ॥ ये औषधियाँ दो दो पल लेवे और सोंचर नमक पाँच पल, काली मिर्च, सोंठ, सपेद जीरा, एक एक पल लेवे ॥ ८५ ॥ तज, इलायची आधा भाग अर्थात् आठ टंक, समुद्र लवण आठ पल, अनारदाना चार पल, अमलवेत दो पल ॥ ८६ ॥ यह औषधियां वारीक पीसे यह लवणभास्कर चूर्ण भास्कर वैद्यराज का कहा है । इस चूर्ण को गाय के मट्ठा के साथ अथवा अच्छी मदिरा वा दही अथवा काँजी के साथ सेवन करे॥ ॥ ८७ ॥ तो वातकफजनित विकार, वातगुल्म, वातपीड़ा इनका नाश होवे तथा यह चूर्ण मन्दाग्नि, संग्रहणी, एवं ववासीर,हृदयरोग, तापतिल्ली इन रोगों को नाश करता है ॥ ८८ ॥

भास्कर चूर्ण तथा गुण ।

सामुद्रं विश्ववरीोषणमथ रुचकं त्वक्त्रुटीदाडिमैस्तै-
स्तालीसग्रन्थिधान्यैर्लवणबिडकणाकृष्णजीरच्छदाम्लम् ।
विंशत्यष्टत्रिपंचैकचतुरवयवैर्भास्करोन्मंथवाम्लै-
र्गुल्मे सार्शोर्तिकासग्रहणिजठरहृत्वग्गदश्लेष्मवाते ॥८९॥

भास्कर चूर्ण कहते हैं । समुद्रलवण, सोंठ, जीरा, मिर्च, सोंचर नमक, इलायची सफेद, अनारदाना, तालीस, पिपलामूल, धनियाँ, विड नमक, पीपर, स्याहजीरा, अमलवेत यह औषधियाँ क्रम से बीस, आठ, तीन, पाँच, एक; चार भाग लेवे, अर्थात् पहले तीन औषध बीस भाग, फिर दो दो, आठ तीन, फिर तीन पांच भाग, फिर दो दो एक चार भाग लेवे और चूर्ण बना कर नीबू के रस की भावना देवे यह भास्कर चूर्ण वायगोला, ववासीर, खाँसी संग्रहणी, उदरपीड़ा, त्वचागत रोग कफ और वातविकार इन सब रोगों को नाश करता है ॥ ८९ ॥

वज्रक्षार चूर्ण ।

तालीसं सैन्धवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम् ।
टंकणं सर्जिकाक्षारं तुल्यं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ९० ॥

अर्कक्षारस्नुहीक्षीरैर्भावयेदातपे त्र्यहम्।
अर्कपत्रैर्लिपेत्तत्तु रुध्वा चांधपुटे पचेत् ॥ ९१ ॥
सकलं चूर्णयित्वाथ त्र्यूषणं त्रिफलारजः।
जीरकं रजनी वन्हिनिम्बकस्यरसम् समम् ॥ ९२ ॥
एकीकृत्य प्रयोगेण सूक्ष्मं चूर्णं तु कारयेत्।
वज्रक्षारमिदं चूर्णं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ ९३ ॥

वज्रक्षार चूर्ण कहते हैं, । समुद्र नमक, सैंधा नमक, कांचिया नमक, जवाखार, काला नमक, सोहागा, सज्जीखार, ये सब बराबर लेके चूर्ण बनावे ॥९०॥ और आक का दूध, थूहर का दूध इन दोनों में तीन तीन भावना देवे फिर उसको आकके पत्तों से लपेट अन्धपुट में रख कर फूंक देवे ॥९१॥ अनन्तर उस भस्म में त्र्यूषण (मिर्च पीपर सोंठ) त्रिफला (हर्र बहेड़ा आँवला) जीरा, हलदी, चीता इनके चूर्ण के समान नीबू के रस की भावना देवे ॥९२॥ फिर पूर्वोक्त भस्म और इस चूर्ण को एकत्र कर बारीक पीस कर मिला लेवे यह वज्रक्षार चूर्ण है, इसको श्री महादेवजी ने अपने मुख से वर्णन किया है ॥९३॥

वज्रक्षार चूर्णगुण।

सर्वोदरेषु गुल्मेषु शोफशूलेषु योजयेत्।
अजीर्णेऽनलमान्द्येषु भक्ष्यं निष्कद्वयं द्वयम् ॥९४॥

सब प्रकार के उदर रोगों में वायगोला में, सूजन, शूल, और अजीर्णरोग तथा मन्दाग्निरोग में यह वज्रक्षार चूर्ण दो दो टंक भक्षण करे ॥९४॥

प्लीह (तापतिल्ली) नाशक चूर्ण।

अर्कपत्रं सलवणं पुटदग्धे सुचूर्णितम्।
निहन्ति मधुना पीतं प्लीहानं च सुदारुणम् ॥९५॥

मदार के पत्ते लेके लवण से चुपड़े और गजपुट में फूंक कर उनका चूर्ण बना लेवे उस चूर्ण को शहत के साथ पीवे तो बहुत दारुण तापतिल्ली रोग का नाश होवे अर्थात् पुरानी तापतिल्ली को यह चूर्ण दूर कर देता है ॥९५॥

सामुद्रादि चूर्ण।

सामुद्रसौवर्चलसैंधवानां क्षारो यवानामजमोदभागम्।
हरीतकी पिप्पलिशृंगवेरं हिंगुर्विडंगानि समं च दद्यात्॥९६॥

सामुद्रादि चूर्ण कहते हैं। समुद्र नमक, सोंचर, सेंधा, जवाखार, अजमोद, हर्र, पीपर, अदरख, हींग, वायविडंग इन सब औषधियों को बराबर लेकर चूर्ण बनावे और घी के साथ भोजन करने से पहले पाँच ग्रास खावे॥९६॥

सामुद्रादि चूर्णगुणः।

अजीर्णवातं गुदगुल्मवातं वातप्रमेहं विषमं च वातम्।
विषूचिकां कामलपांडुरोगान्कासं च श्वासं हरते प्रवृद्धम्॥९७॥

यह सामुद्रादि चूर्ण अजीर्ण, वातविकार, गुदारोग, वायगोला, वात प्रमेह, और कठिन वातविकार, हैजा, कामला, पांडुरोग, खांसी, श्वास इन सब रोगों की वृद्धि को हरता है॥९७॥

बिडलवणादि चूर्ण तथा गुण।

बिडरुचकयवानी जीरके द्वे च पथ्या
त्रिकुटकहुतभुग्भ्यां वेतसाम्लाजमोदाः।
समविहितरजोभिर्धान्यकं तिन्तिडीकं
जरयति नगकूटं का कथा भोजनस्य॥९८॥

विडलवण आदि चूर्ण और उसका गुण कहते हैं। विड नमक सोंचर नमक, अजवायन, जीरा स्याह, जीरा सफेद हर्र, त्रिकुट (मिर्च पीपर सोंठ) चीता, अमलवेत, अजमोद, धनियाँ, तिंतिडीक इन सब औषधियों को बराबर लेकर चूर्ण बनावे यह चूर्ण नगकूट (पर्वत के खंडों को भी भस्म कर देने वाला) है। भोजन को भस्म कर देवे तो कहना ही क्या है॥९८॥

हिंग्वाष्टक चूर्ण तथा गुण।

त्रिकटुकमजमोदा सैंधवं जीरके द्वे
समचरणधृतानामष्टमो हिंगुभागः।
प्रथमकवलभुक्तं सर्पिषा चूर्णमेत-
ज्जनयति जठराग्निं वातगुल्मं निहन्ति ॥९९॥

हिंग्वाष्टक चूर्ण कहते हैं। त्रिकुट (मिर्च, पीपर, सोंठ) अजमोद, जीरा स्याहा, जीरा सफेद, इन सात औषधियों को समान भाग लेवे इनसे आठवाँ भाग हींग लेके घी में भून कर मिलावे यह हिंग्वष्टक चूर्ण है, इसको पहले कौर में घी के साथ खाय तो यह जठराग्नि को प्रबल करता है और वायगोला को नाश करता है ॥९९॥

हिंगुपंचक तथा गुण।

विश्वौषधेन रुचकेन सदाडिमेन
स्यादम्लवेतसंयुतं कृतहिंगुभागम्।
तद्धिंगुपंचकमिदं जठरामयघ्नं
भेडाभिधानमुनिना गदितं मुनिनाम् ॥१००॥

विश्व (सोंठ) रुचक (सोंचर नमक) अनारदाना, अम्लवेत, हींग ये औषधियाँ समान भाग लेकर चूर्ण करे यह हिंगुपंचक चूर्ण पेट के रोगों को दूर करता है भेढ मुनि ने इसको कहा है ॥ १०० ॥

हिंगुत्रयोविंशति चूर्ण तथा गुण।

हिंग्वग्निचव्यलवणत्रयवेतसाम्ल-
चारद्वयं त्रिकटुदाडिमाततिडीकम्।
सग्रन्थिकाग्निकशटीहपुषाजगन्धा-
पाठाभयाप्रसितजीरकपुष्कराह्वाः ॥१०१॥

सोग्रं सधान्याकमिति प्रविधाय चूर्ण
भूयः प्लुतं हि फलपूरफलद्रवेण ।
उष्णोदकेन परिपीतमिदं निहन्ति
शूलानि गुल्मगुदजान् ग्रहणीरुजश्च ॥१०२॥

हींग, चीता, चव्य, सेंधा, सोंचर ये तीनों नमक, अमलवेत, जवाखार, सज्जीखार, त्रिकटु (मिर्च पीपर सोंठ) अनारदाना, तितिडीक, पिपलामूल, चीता, कचूर, हाउबेर, असगन्ध, पाढ, हर्र, सफेद जीरा, पुहकरमूल ॥ १०१ ॥ वच, धनियां, इन सब औषधियों को बराबर लेके चूर्ण बनावे और बिजौरा नीबू के रस में भावना देवे इस चूर्ण को फाँक कर ऊपर से गरम जल पीवे तो शूल, वायगोला और गुदा के रोग तथा संग्रहणीरोग शान्त हो जाता है ॥१०२॥

तुंबरादि चूर्ण तथा गुण ।

तुंबराणि त्रिलवणं यवानी पुष्कराहूवयम् ॥
यवक्षाराभयाहिंगुविडंगानि समानि च ॥१०३॥
त्रिवृत् त्रिभागा विजया सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥
पिबेदुष्णेन तोयेन यवक्काथेन वा पिबेत् ॥
जयेत्सर्वाणि शूलानि गुल्माध्मानोदराणि च ॥१०४॥

तुंबुरुबीज, सोंचरा, सेंधा, बिड, तीनों नमक, अजवायन, पुहकरमूल, जवाखार, हर्र, हींग, वायविडंग इन औषधियों को समान भाग लेवे ॥ १०३ ॥ सबसे तिहाई निसोत और भाँग लेके बारीक पीस कर चूर्ण करे यह चूर्ण गरम पानी अथवा जौके काढा के साथ पीवे तो सब प्रकार के शूल, वायगोला, अफरा और उदररोग शांत हो जाता है ॥ १०४ ॥

अजमोदादि चूर्ण तथा गुण ।

अजमोदा विडंगं च सैंधवं देवदारु च ॥
चित्रकं पिप्पलीमूलं शतपुष्पा च पिप्पली ॥ १०५ ॥
मरीचं चेति कर्षांशं प्रत्येकं कारयेद्बुधः ॥
कर्षास्तु पंच पथ्याया दश स्युर्वृद्धिदारुकाः ॥ १०६ ॥

नागरा च दशैव स्युः सर्वानेकत्र चूर्णयेत् ॥
पित्वेकोष्णजलेनैतच्चूर्णं शोफविनाशनम् ॥ १०७ ॥
आमवातरुजं हन्ति सन्धिपीडांच गृध्रसीम् ॥
कटिपृष्ठगुदस्थां च जंघयोश्च रुजं जयेत् ॥ १०८ ॥
तूनीप्रतूनीवातांश्च कफवातामयान् जयेत् ॥
समेन वा गुडेनास्य वटिकां कारयेद्बुधः ॥ १०९ ॥

अजमोदादि चूर्ण और उसका गुण कहते हैं । अजमोदा, वायविडंग, सेंधा नमक, देवदारु, चीता, पिपलामूल, सौंफ, पीपर ॥ १०५ ॥ मिर्च इन औषधियों को एक एक कर्ष प्रमाण लेवे और पाँच कर्ष हर्र तथा दश कर्ष विधारा ॥ १०६ ॥ दश कर्ष सोंठ इन सबको लेके इकट्ठा करे और चूर्ण बनावे । इस चूर्ण को फाँक कर ऊपर से गुनगुना जल पीवे यह चूर्ण सूजन को दूर करता है ॥ १०७ ॥ और आमवातरोग को हरता है, संधियों की पीड़ा और गृध्रसी जो एक प्रकार का वातरोग होता है उसको दूर करता है तथा कमर, पीठ, गुदा और जंघा इनमें उत्पन्न हुए रोग को शान्त करता है । इसको चूर्ण रक्खे वा बुध जन इसको गुड़ में मिला कर गोली बना लेवे ।

विजयचूर्ण तथा गुण ।

श्रीदीप्योग्राग्निहिंगुद्विविषमिशिवृकीचव्यतिक्तापटनि
ग्रन्थिक्षारेन्द्रजत्रित्रिकमिति विजयासोष्णकैरण्डतैलम् ॥
हन्त्यर्शःकासगुल्मग्रहणिकृमिरुजापाण्डुरुग्भूतशूलः
श्वासं प्लीहं प्रमेहं ज्वरमरुचिमुदावर्तघर्मामवातान् ॥११०॥

विजय चूर्ण और उसका गुण कहते हैं । अजमोद, वच, चीता, हींग, अतीस, सोया का साग, पाढ, चव्य, कुटकी, पाँचो नमक, पिपलामूल, जवाखार, इन्द्रजौ, मिर्च पीपर सोंठ, त्रिसुगन्ध इन सब औषधियों को बराबर लेवे और चूर्ण करे गरम जल में अथवा अंडी के तेल के साथ इसको सेवन करे तो यह चूर्ण बवासीर, वायगोला, संग्रहणीरोग, कृमिरोग, पांडुरोग, कठिन शूल, श्वास, तिल्ली, प्रमेह, ज्वर, अरुचि, उदावर्त, अफरा, आमवात इन रोगों को नाश करता है ॥ ११० ॥

नारायण चूर्ण।

द्वौ क्षारौ लवणानि पंच हपुषा धान्याजमोदा शटी ॥
व्योषाजाज्युपकुंचिकाकृमिजितः कंकुष्ठकुष्ठाग्नयः ॥
उग्राग्रन्थिककारवीमिसियुतं योज्यं फलानां त्रयं ॥
मूलं पुष्करजं यवान्परिभवेदेतानि तुल्यान्यथा ॥१११॥
त्रिवृद्धिशाले द्विगुणाऽथ दन्तिनी त्रिसगुणस्यादथ तिक्तका भवेत्॥
चतुर्गुणंचूर्णमुदाहृतं जनैरिदंहि नारायणमौषधं बुधैः॥११२॥

नारायण चूर्ण और उसका गुण कहते हैं। सज्जीखार, जवाखार, पाँचो नमक (विड, कचिया, समुद्र, नमक, सेंधा, सोचर,) हाऊवेर, धनियाँ, अजमोद, कचूर, मिर्च, पीपर, सोंठ, स्याहजीरा, सफेदजीरा, वायविडंग, कंकोल, कूट, चीता, बच, पिपलामूल, सोया के बीज, त्रिफला, पुहकरमूल, आजवायन, इन औषधियों को समान भाग लेवे ॥ १११ ॥ और निसोत, इन्द्रायन की जड़ यह प्रत्येक दूनी लेवे, दात्यूणी एक औषधी से तिगुनी लेवे, कुटकी चौगुणी लेवे इन सबको कूट पीस कर चूर्ण बना लेवे बुध जनों ने मनुष्यों के हितार्थ यह नारायण औषध कथन किया है ॥ ११२ ॥

नारायण चूर्णगुण।

उष्णोदकेन यवकोलकुलत्थतोयै-
स्तक्रेण मद्यदधिमस्तुसुरासवैर्वा ॥
नारायणं प्रपिबतः सकलोदराणि
नश्यन्ति विष्णुमिव दैत्यगणा द्विषन्तः ॥११३॥

यह नारायण चूर्ण गरम जल से वा जौ के काढ़ा से किंवा कुलथी के काढ़ा से, मठा से, मदिरा से, दही से अथवा आसव के साथ पीवे इसके पीने से सब उदर रोग ऐसे नाश हो जाते हैं जैसे विष्णु भगवान् करके दैत्य गणों का नाश हो जाता है ॥ ११३ ॥

लाही चूर्ण तथा गुण ।

त्रिजातकव्योषवरारसेन्द्रगन्धाजमोदामिरिवेल्लरात्र्यः ॥
बिल्वानलाजाजिलवंगधान्यगजोपकुल्यासधुकं पटूनि ।११४।
हिंगुः (१) कुबेराहवयमोक्षसारौ क्षारौ जया सर्वचतुर्थभागा ॥
इदं हि चूर्णं विनिहन्ति तूर्णं प्रसूतिकासंग्रहणीविकारम् ॥११५॥
समस्तरोगान्तकमग्निकारि भ्राजिष्णुताकारि सुतक्रपीतम् ॥
इमं प्रयोगं बहुधानुभूतं चकार धात्रीकिल कापिलाही ॥११६॥

लाही चूर्ण और उसका गुण कहते हैं । त्रिजातक (तेजपात, दालचीनी, इलायची) व्योष (मिर्च, पीपर, सोंठ) त्रिफला, पारा, असगन्ध, अजमोद, सौंफ, हलदी, बेलगिरी, जीरा, लौंग, धनियाँ, गजपीपर, मुलहठी, पाँचो नमक ॥११४॥ भुनी हींग, सागरगोटा की गूदी, सेमर का गोंद, सज्जीखार, जवाखार ये सब बराबर लेवे सबसे चौगुनी शुद्ध भाँग लेवे सबको लेके महीन पीस कर चूर्ण करे यह चूर्ण प्रसूतिरोग और संग्रहणीरोग को शीघ्र ही नाश कर देता है ॥ ११५ ॥ उत्तम मठा के साथ इस चूर्ण का सेवन करे अर्थात् चूर्ण फाँक कर मठा पी लेवे तो यह चूर्ण सब रोगों को नाश करता है, जठराग्नि और तेज को बढ़ाता है, इस चूर्ण रूप प्रयोग को लाही नामक धाय ने बहुत वार बना कर इसका अनुभव किया है ॥ ११६ ॥

क्षारामृत ।

क्षारं किंशुकमुष्ककार्जुनधवापामार्गरम्भातिला
जीवन्ती कनकाहवका रजनी कूष्माण्डवल्ली तथा ॥
वासासूरणकात्रिवृद्दहनकैः प्रज्वाल्य भस्मीकृतं
तोयेन प्रतिशोध्य निःसृतपयः पानं विधेयं सकृत् ॥११७॥

क्षारामृत कहते हैं । खार, ढाक, स्याह, पाढरि, कत्था सफेद, ओंगा, केला की फली, तिल, जीवंती, धतूरे का फल, हलदी, कुम्हेड़ा, अडूसा, जिमीकन्द, निसोत इन सबकी भस्म बनावे उस भस्म को जल के साथ आँच पर चढ़ा कर खार विधि से उसका खार निकाले वह खार जल में मिला कर पीवे ॥ ११७ ॥

(१) एक प्रकार की बेलि जिसमें सुपारी के तुल्य सफेद चिकना फल होता है इसे सागर गोटा भी कहते हैं ।

क्षारामृत गुण।

शूलानाहविबन्धगुल्मकफजान् रोगान् जयेत्कामलां
वायुं विद्रधिशूलपांडुग्रहणीशोफार्शसंपीडनम् ॥
मन्दाग्निं जठरस्य पीनसगुरुप्लीहातिमेहादिकान्
पाषाणा उदरे भवन्ति बहुधा भस्मीभवन्ति क्षयात् ॥११८॥

यह क्षारामृत शूल, आनाह (अफरा) मलबन्ध, वायगोला, कफजनित रोग, मला, विद्रधि, हृदयशूल, पांडु, संग्रहणी, सूजन, बवासीर की पीड़ा, मन्दाग्नि, उदररोग, पीनस, दारुण तिल्ली, प्रमेह आदि रोगों को दूर करने वाला है और उदर में जो पत्थर के तुल्य गुल्म उत्पन्न हो जाते हैं वे इस क्षार से क्षण मात्र में भस्म हो जाते हैं ॥ ११८ ॥

अम्लवेतस चूर्ण तथा गुण।

कत्यम्लवेतसफलानि विदारितानि
सिंध्वादिपंचलवणेन सुपूरितानि ॥
हिंग्वादिजेन पटुभास्करजेन चाथ
तालीसपुष्पजनितेन विभाव्य युक्त्या ॥११६॥
संशोष्य तीव्रकिरणैरवितापतप्तैः
सिद्धानि तत्सकलमेव सुभक्षितं च ॥
गुल्मेऽरुचौ यकृति दुष्पवनाग्निमांद्य-
प्लीहामयेषु जठरेषु गुदोद्भवेषु ॥ १२० ॥

अम्लवेतस चूर्ण और उसका गुण कहते हैं। कुछ अम्लवेत के फल चीर कर उनके भीतर सेंधा आदि पाँचों नमक भरे अथवा हिंग्वष्टक चूर्ण वा लवण भास्कर किंवा तालीसादि चूर्ण भर देवे ॥ ११६ ॥ फिर उन फलों को सूर्य की तेज धूप से सुखा कर एक टंक (४ माशा) भर अथवा बल के अनुसार सेवन करे तो वायगोला, अरुचि, हृदयपीड़ा, दुष्ट वात, मन्दाग्नि, तिल्ली, उदररोग, गुदारोग ये रोग नाश हो जाते हैं ॥ १२० ॥

लघु गंगाधर चूर्ण (अतीसारनाशक)

अजमोदा मोचरसं सशृंगवेरं च धातकीकुसुमम् ॥
गोमथिततक्रपीतं गंगामपि वेगवाहिनीं रुंध्यात् ॥ १२१ ॥

अतीसार पर लघु गंगाधर चूर्ण कहते हैं। अजमोदा, मोचरस, अदरख, धाय के फूल, इन औषधियों को समान भाग लेके चूर्ण बनावे इसको फाँक कर ऊपर से गाय का मठा पीवे तो गंगा के समान प्रवाह वाला अतीसार (दस्त रोग) रुक जाता है ॥ १२१ ॥

बृहद्गंगाधर चूर्ण (अतीसारनाशक)

अरलुकघनशुंठीधातकीबिल्वलोध्रं
कुटजपलसमेतं मोचनिर्यासयुक्तम् ॥
अतिविषजलपाठासाहकारंडबीज-
मसृण मधुविमिश्रं तंदुलांबुप्रपीतम् ॥ १२२ ॥
कफोद्भवं मारुतपित्तसंभवं जयेदतीसारपुराणमामजम् ॥
प्रसिद्ध गंगाधर नाम चूर्णं तथाहि रोगे ग्रहणीगदे च ॥ १२३ ॥

अब बृहद्गंगाधर चूर्ण कहते हैं। अरलू की छाल, नागरमोथा, सोंठ, धाय के फूल, बेल की गूदी, लोध, कुडे की छाल, इन्द्र जौ, मोचरस, अतीस, सुगन्ध वाला, पाढ, आम की गुठली इन औषधियों को लेके चूर्ण बनावे और शहत मिलाय चावलों के जल के साथ पीवे ॥ १२२ ॥ तो कफ विकार से उत्पन्न और वातपित्त से उत्पन्न पुराना अतीसार (दस्तरोग) आम तथा संग्रहणीरोग को शान्त कर देता है ॥ १२४ ॥

अष्टौ भागाः कपित्थस्य षड्भागा शर्करा मता ॥
दाडिमं तिंतिडीकं च श्रीफलं धातकी तथा ॥ १२४ ॥
अजमोदा च पिप्पल्याः प्रत्येकं स्युस्त्रिभागकम् ॥
मरीचं जीरकं धान्यं ग्रन्थिकं वालकं तथा ॥ १२५ ॥

सौवर्चलं यवानी च चातुर्जातं सचित्रकं ॥
नागरं चैकभागाः स्यु प्रत्येकं सूक्ष्मचूर्णिताः ॥ १२६ ॥
कपित्थाष्टकसञ्ज्ञं स्याच्चूर्णमेतज्जलामयान् ॥
निहन्ति ग्रहणीरोगानतिसारं व्यपोहति ॥ १२७ ॥

कपित्थाष्टक चूर्ण कहते हैं। आठ भाग कैथ फल, छः भाग मिश्री और अनारदाना, तितिडीक, वेल की गूदी, तथा धाय के फूल ॥ १२४ ॥ अजमोद, पीपर, ये तीन तीन भाग लेवे; एवं मिर्च, धनियाँ, पिपलामूल, सुगन्धवाला ॥ १२५ ॥ सोंचर नमक, अजवायन, चातुर्जात; (तज पत्रज इलायची नागकेशर) चीता, सोंठ ये औषध एक एक भाग लेवे और महीन पीस कर चूर्ण बनावे ॥ १२६ ॥ यह कपित्थाष्टक नाम चूर्ण होता है यह चूर्ण जल के विकारों को संग्रहणी और अतीसार रोगों को शान्त करता है ॥ १२७ ॥

यवान्यादि चूर्ण तथा गुण।

यवानीपिप्पलीमूलचातुर्जातकनागरैः ॥
मरिचेन्द्रयवाजाजी धान्यसौवर्चलैः समैः ॥ १२८ ॥
वृक्षाम्लं धातकी कृष्णा बिल्वदाडिमदीपकैः ॥
त्रिगुणैः षड्गुणैः सिद्धैः कपित्थोऽष्टगुणः स्मृतः ॥१२९॥
संग्रहणीमतीसारं क्षयगुल्मगलामयान् ॥
कासश्वासाग्निमन्दार्शपीनसारोचकान् जयेत् ॥ १३० ॥

यवान्यादि चूर्ण कहते हैं। अजवायन, पिपलामूल, चातुर्जातक, सोंठ, काली मिर्च, इन्द्र जौ, जीरा, धनियाँ, सोंचर ये सब बराबर लेवे ॥ १२८ ॥ तथा अमलवेत, धाय के फूल, पीपर, वेल की गिरी, अनारदाना, अजमोद ये प्रत्येक तिगुने लेवे मिश्री छ गुणी और कैथ अठगुणा लेवे ॥ १२९ ॥ यह चूर्ण संग्रहणी, अतीसार, क्षय, गुल्म, गलरोग, खाँसी, श्वास, मन्दाग्नि, बवासीर, पीनस और अरुचि इन रोगों को दूर करता है ॥ १३० ॥

दाडिमाष्टक चूर्ण और गुण।

दाडिमस्य पलान्यष्टौ शर्कराया पलाष्टकम् ॥
पिप्पलीं पिप्पलीमूलं यवानीं मरिचं तथा ॥ १३१ ॥

धान्यकं जीरकं शुंठी प्रत्येकं पलसम्मितम् ॥
कर्षमात्रा तुगाक्षीरी त्वक् पत्रैलाश्च केशरम् ॥ १३२ ॥
प्रत्येकं कोलमात्रं स्यात्तच्चूर्णं दाडिमाष्टकम् ॥
अतिसारं क्षयं गुल्मं ग्रहणीं च गलग्रहम् ॥
मन्दाग्निं पीनसं कासं चूर्णमेतत् व्यपोहति ॥ १३३ ॥

दाडिमाष्टक चूर्ण कहते हैं। अनारदाना आठ पल, मिश्री आठ पल, पीपर, पिपलामूल, अजवायन, काली मिर्च ॥ १३१ ॥ धनियाँ, जीरा, सोंठ, ये औषधियाँ प्रत्येक एक एक पल लेवे और वंशलोचन एक कर्ष (४ टंक) तथा तेजपात, तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर ॥ १३२ ॥ ये प्रत्येक एक एक कोल (२॥ टंक) लेके चूर्ण बनावे यह दाडिमाष्टक चूर्ण है। यह चूर्ण अतीसार, क्षयी, वायगोला, संग्रहणी और गलग्रह, मन्दाग्नि, पीनस, खाँसी इन रोगों को हरता है ॥ १३३ ॥

वचादि चूर्ण (उदरकृमि रोग पर।)

वचाजमोदाकृमिहृत्पलाशबीजं शटी रामठकं त्रिवृच्च ॥
जलेन तप्तेन तु पेष्य पेयं पतंति शीघ्रं कृमयः समूलाः ॥१३४॥

वचादि चूर्ण कहते हैं। वच, अजमोद, वायविडंग, ढाँक के बीज, कचूर, हींग, निशोथ ये औषधि लेके चूर्ण करे और जल के साथ पीवे तो पेट के सब कीड़े मर कर मल के साथ गिर जाते हैं ॥ १३४ ॥

तथाच।

वचं चैव विडंगं च क्षारं सैंधवमेव च ॥
पिष्ट्वा तक्रेण पातव्यं नित्यं कृमिविनाशनम् ॥ १३५ ॥

वच और वायविडंग, जवाखार, सेंधा इन चार औषधियों को पीस कर चूर्ण बनावे, इस चूर्ण को फाँक कर ऊपर से मठा पीवे इस प्रकार नित्य पीने से पेट के कीड़े मर जाते हैं ॥ १३५ ॥

एलादि चूर्ण-(प्रमेहपर।)

एलाश्मभेदकशिलाजतुपिप्पलीनां
चूर्णानि तंदुलजलैर्लुलितानि पीत्वा ॥

यद्वा गुडेन सहितान्यवलिह्यमान
आसन्नमृत्युरपि जीवति मूत्रकृच्छ्री ॥ १३६ ॥

इलायची छोटी, पाषाणभेद, शिलाजीत, पीपर ये औषधियाँ लेके चूर्ण करे और साठी के चावलों के जल के साथ पीवे अथवा गुड़ मिला कर अवलेह बनावे और सेवन करे तो जो सुजाक रोग वाला मरण समीपी हो गया हो तो भी जी जाता है ॥ १३६ ॥

तथाच।

लाजकपित्थमधुमागधिकोषणानां
क्षुद्राभयात्रिकटुधान्यकजीरकाणाम् ॥
पथ्यामृतामरिचमाक्षिकपिप्पलीनां
लेहास्त्रयः सकलवम्यरुचिप्रशान्त्यै ॥१३७॥

धान की खील, कैथ, मुलहठी, पीपर, मिर्च, और दोनों कटेरी, हर्र, त्रिकटु, धनियाँ, जीरा, तथा, पथ्या, हर्र, गुर्च, और शहत पीपर यह तीन प्रकार के अवलेह सब प्रकार के वमन और अरुचि रोग की शान्ति के निमित्त जानिये ॥ १३७ ॥

तथाच।

कोलामलकमज्जानौ मक्षिका विट् सिता मधु ॥
सकृष्णातंदुलो लेहः श्रेष्ठश्छर्दिनिवारणः ॥१३८॥

बेर और आँवले की मींगी, मक्खी की बीट, मिश्री, शहत, पीपर यह औषधियाँ पीस कर चावलों के पानी के साथ पीवे तो यह लेह सब प्रकार के वमन रोग को शान्त करता है ॥ १३८ ॥

वटप्ररोहं मधुकुष्टमुत्पलं सलाजचूर्णैर्गुटिकांप्रकल्पयेत् ॥
सशर्करा सा वदने च धारिता तृषां प्रवृद्धामपि हंति सत्वरम् १३९

वटवृक्ष (बड) की जटा, शहत, कूट, कमलगट्टा और धान के लावा,

इन सबका चूर्ण कर गोली बना लेवे उसको मिश्री के साथ मुख में रक्खे तो बहुत बढ़ी हुई प्यास भी शान्त हो जाती है ॥ १३६ ॥

जातीपत्रपुनर्नवागजकणाकोरंडकुष्ठावचा
शुंठीदिव्यशतावरीसमघृतं चूर्णं मुखे धार्यते ॥
वातघ्नं कफनाशनं कृमिहरं दुर्गंधिनिर्णाशनम्
वक्त्रस्यापि समस्तदोषहननं दन्तश्च वज्रायते ॥१४०॥

जावित्री, सांठी की जड़, बड़ी पीपर, कोरंड के फूल, कूट, वच, सोंठ, लौंग, शतावरी, इन सबको बराबर लेके चूर्ण करे और सब के बराबर घी लेकर मिलावे, इसको मुख में रक्खे तो बातविकार और कफविकार का नाश हो जाता है, यह औषध कृमिरोग को हरता है, दुर्गन्धि को दूर करता है और मुख के सब विकारों को हरता है। इसके सेवन से दांत वज्र के तुल्य दृढ़ हो जाते हैं ॥ १४० ॥

कुष्ठं दार्वी लोध्रमब्दं समङ्गा पाठातिक्तातेजनीपीतिका च ।
एतच्चूर्णं घर्षणं तद्द्विजानां रक्तस्रावं हन्ति कण्डूरुजं च ॥१४१॥
फलान्यम्लानि शीताम्बुरूक्षान्नं दन्तधावनम् ॥
तथातिकठिनान्भक्ष्यान्दन्तरोगी विवर्जयेत् ॥१४२॥

कूट, दारूहलदी, लोध, मोथा, मजीठ, पाढ, कुटकी, तेजनी लता, हलदी, इनका चूर्ण कर दांतों में मंजन करे तो रक्त बहना और खुजली रोग का नाश हो जाता है ॥ १४१ ॥ दांत के रोगी को खट्टे फल, शीतल जल, रूखा अन्न चबेना आदि, दातून, बहुत कठोर वस्तु का भोजन नहीं चाहिये अर्थात् दांत का रोगी इन सब वस्तुओं को त्याग कर देवे ॥ १४२ ॥

दन्तमसी (मिस्सी)

कासीसं त्रिफला माजूफलं जंगी हरीतकी ॥
कर्पूरं खदिरं तार्प्यं लोहचूर्णं च विद्रुमम् ॥ १४३ ॥
दाडिमत्वक् च मंजिष्ठा लोध्रं तुत्थं सुराष्ट्रजा ॥
मस्तंगी च तिलं पूगं सर्वं सूक्ष्मविचूर्णितम् ॥१४४॥

दन्तशूलहरं चाम्लं दन्तकृष्णीकरं तथा ॥

दांतों की मिस्सी कहते हैं। कसीस, त्रिफला, माजूफल, जंगी हर्र, कपूर, कत्था, सोनामक्खी, लोहचूर्ण, मूँगा ॥ १४३ ॥ अनार का वक्कल, मजीठ, लोध, नीला थोथा, फिटकरी, मस्तगी, चिकनी सुपारी इनको लेके महीन पीस कर चूर्ण बनावे ॥ १४४ ॥ यह चूर्ण-रूप मिस्सी दांतों की पीड़ा को हरती है तथा खटाई व दांतों को काला करती है।

भृङ्गराज चूर्ण (कायाकल्पपर)।

समूलं भृङ्गराजं च छायाशुष्कं तु कारयेत् ॥ १४५ ॥
तत्समं त्रिफलाचूर्णं सर्वतुल्या सिता भवेत् ॥
पलैकं भक्षयेच्चैतदल्पमृत्युज्वरापहम् ॥ १४६ ॥

भृङ्गराज चूर्ण कायाकल्प पर कहते हैं। जड़ समेत भँगरा वृक्ष लेके छाया में सुखावे ॥ १४५ ॥ फिर उसके बराबर त्रिफला का चूर्ण कर उस चूर्ण के बराबर मिश्री पीस कर चूर्ण बनावे यह चूर्ण एक पल प्रमाण सेवन करे तो अल्पमृत्यु और ज्वर नाश हो जाता है ॥ १४६ ॥

तथाच।

सूक्ष्मीकृतं भृंगनृपस्य चूर्णैः कृष्णैस्तिलैरामलकैश्च सार्धम् ॥
सितायुतां भक्षयतां नराणां न व्याधयो नैव जरा न मृत्युः ॥ १४७ ॥

भँगरा वृक्ष, काले तिल और आंवला इनको लेके बहुत बारीक पीस कर चूर्ण करे इस चूर्ण में मिश्री मिलाय इसे सेवन करे तो मनुष्यों को रोग नहीं होता, बुढ़ापा नहीं घेरता और अकाल मृत्यु भी नहीं होती है ॥ १४७ ॥

आमलकादि चूर्ण तथा गुण।

आमलं चित्रकं पथ्या पिप्पली सैन्धवं तथा।
भेदी रुचिकरः श्लेष्मा जेता पाचनदीपनः ॥ १४८ ॥

आमलकादि चूर्ण कहते हैं। आंवला, चीता, हर्र, पीपर, सेंधा नमक इन सबका चूर्ण बनावे यह चूर्ण भेदी, रुचिकारक, कफविकार को दूर करने वाला, पाचन और जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला है ॥ १४८ ॥

सारस्वत चूर्ण तथा गुण।

कुष्ठाश्वगन्धे लवणाजमोदे द्वे जीरके त्रीणि कटूनि पाठा।
मांगल्यपुष्पा च समानचूर्णं कृत्वा च चूर्णेन वचोद्भवेन॥१४६॥
तुल्येन युक्तं बहुशो रसेन तद्भावितं ब्रह्मविनिर्मितायाः॥
सर्पिर्मधुभ्यां च ततोऽक्षमात्रं लिह्यादिनान्सप्तगुणांश्च सप्त॥१५०
सारस्वतमिदं चूर्णं ब्रह्मणा निर्मितं स्वयम्॥
जगद्धिताय लोकानां दुर्मेधानामचेतसाम्॥ १५१॥

सारस्वत चूर्ण और उसके गुण कहते हैं। कूट, असगन्ध, सेंधा नमक, अजमोद, दोनों जीरे, तीनों कटु (मिर्च पीपर सोंठ) पाढ, शंखाहुली, इन सबको बराबर लेवे सबके बराबर वच लेकर चूर्ण बनावे॥१४६॥ और ब्राह्मी के रस की भावना देवे घी और शहत के साथ एक टंक प्रमाण उनचास दिन पर्यन्त सेवन करे॥१५०॥ यह सारस्वत नाम चूर्ण है इसको स्वयं ब्रह्मा जी ने रचा है संसार के कल्याण निमित्त मूर्ख जनों की बुद्धि को बढ़ाने वाला यह चूर्ण है॥१५१॥

तथा च—

गुडूच्यपामार्गविडंगशंखिनीब्राह्मीवचाशुंठिशतावरी च॥
घृतेन लीढा प्रकरोति मानवाँस्त्रिभिर्दिनैः श्लोकसहस्रधारिणः॥१५२

शंखाहुली, ब्राह्मी, वच, सोंठ, शतावरी, इन सबको समान भाग लेके चूर्ण करे और घी के साथ अवलेह बनाय सेवन करने से यह मनुष्यों को तीन दिन में हजार श्लोक धारण करने की सामर्थ्य वाला करता है॥१५२॥

ब्राह्मीमुंडीपिप्पलीनागराजं कुष्ठं सर्पिः श्वेतवर्णा वचा वा॥
मौढ्यार्तानामक्षमात्रं ददाति प्रज्ञा मेधा वर्धते मासयुग्मात्॥१५३

ब्राह्मी, गोरखमुंडी, पीपर, नागेश्वर रस, कूट, घी, सफेद वच, ये औषध लेके अवलेह बनाय मूर्ख जनों को एक अक्ष (१ तोला) भर देवे तो दो महीना सेवन करने से बुद्धि और स्मरण शक्ति की वृद्धि होती है॥१५३॥

अन्यच्च ।

ज्योतिष्मत्यास्तैलमेकं पिबेच्च गुंजावृद्ध्या कर्षमात्रं तु यावत् ॥
सौरे पर्वण्यप्सु मध्ये प्रवृष्टः प्रज्ञामूर्तिर्जायतेऽसौ कवीन्द्रः ॥१५४॥

केवल मालकागनी के तेल को एक घुँघुची से एक कर्ष तक बढ़ा कर सूर्य्य पर्व में जल के भीतर घुस कर बैठ के पीवे तो वह मनुष्य बुद्धि की मूर्ति और कवीन्द्र हो जाता है ॥ १५४ ॥

त्रिकटु त्रिफला धान्यं यवानी शतमूलिका ।
वचा भार्ङ्गी तथा ब्राह्मी चूर्णं समधु लेहयेत् ॥ १५५ ॥
वाक्प्रदत्वं च बालानां वीणावाद्यसमस्वरम् ।
तैलं तीक्ष्णं रूक्षमम्लं वातुलं च विवर्जयेत् ॥ १५६ ॥

सोंठ, मिर्च, पीपर आँवला, हर्र, बहेड़ा, धनियाँ, अजवायन, शतावरी, बच, भारंगी, ब्राह्मी इन सबको समान भाग लेके चूर्ण करे और शहद के साथ सेवन करे ॥ १५५ ॥ यह चूर्ण बालकों को वीणा की ध्वनि के समान वाणी देता है, इस का सेवन करने वाला तेल, तीखे भोजन, रूखा, खट्टा और बादी पदार्थ नहीं खाय ॥ १५६ ॥

ज्योतिष्मत्यास्तैलमत्राभिमंत्र्य
वाग्वादिन्या मंत्रबीजं त्रिकं तु ।
जिह्वायां वै लिख्यते यस्य जन्तो
र्वैलेखन्या जायतेऽसौ कवीशः ॥ १५६ ॥

सरस्वती जी के मूल मंत्र (ॐ ऐं ह्रीं क्लीं वद वद वाग्वादिनि मम जिह्वाग्र सरस्वती स्वाहा) से मालकागनी के तेल को अभिमंत्रित कर बालक की जीभ पर सरस्वती के तीनों बीज (ऐं ह्रीं क्लीं) उस तेल से लिखे तो वह बालक कविराज हो जाता है ॥ १५७ ॥

इति श्रीमत्पण्डित सीतारामकृतायां योगचिंतामणिभाषा
टीकायांचूर्णाधिकारो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

अथ

गुटिकाधिकारो नाम तृतीयोऽध्यायः प्रारभ्यते ॥ ३ ॥

अमृतप्रभा गुटिका ।

मरिचं पिप्पलीमूलं लवङ्गं च हरीतकी ॥
यवानी तिंतिडीकं च दाडिमं लवणत्रयम् ॥ १ ॥
एतानि पलमात्राणि मागधीक्षारचित्रकम् ॥
द्वयजाजी नागरं धान्यमेलाधात्रीफलं समम् ॥ २ ॥
एतान्द्विपलिकान्भागान्भावयेद्बीजपूरकैः ॥
भावनात्रितयं दत्वा गुटिकां कारयेद्बुधः ॥ ३ ॥
छायाशुष्कां प्रकुर्वीत अजीर्णस्य प्रशान्तये ॥
अग्निं च कुरुते घोरं गुटिका चामृतप्रभा ॥ ४ ॥

अमृतप्रभा गुटिका (गोली) कहते हैं। काली मिर्च, पिपलामूल, लौंग, हर्र, अजवायन, तिंतिडीक, अनारदाना, तीनों नमक (विड, सेंधा, सोंचर) ॥१॥ यह औषधियां एक एक पल प्रमाण लेवे और पीपर, जवाखार, चीता, दोनों जीरे, सोंठ, धनियां, सफेद इलायची, आंवला ॥ २ ॥ यह औषधियां दो दो पल लेवे और बिजौरा नीबू के रस में तीन भावना देवे अर्थात् तीन पुट देकर घोटे फिर गोली बनावे ॥ ३ ॥ और छाया में सुखा लेवे यह अमृतप्रभा नाम गोली अजीर्ण को शान्त करती है और जठराग्नि को प्रबल करती है ॥ ४ ॥

आकल्लकं सैन्धववह्निशुंठी धात्र्यूषणं दिव्यसमासपथ्या ॥
रसेन भाव्यं फलपूरकेण मन्दानिलत्वे ह्यमृतप्रभेयम् ॥ ५ ॥
कासे गलामये श्वासे प्रतिश्याये च पीनसे ॥
अपस्मारे तथोन्मादे सन्निपाते सदा हिता ॥ ६ ॥

अकरकरा, सेंधा नमक, चीता, सोंठ, आंवला, मिर्च, लौंग, हर्र, इन औषधियों को बराबर भाग लेवे और बिजौरा नीबू के रस की भावना देके गोली बना लेवे यह अमृतकला नाम गोली मन्दाग्नि वाले को अमृत के समान गुणकारी है ॥ ५ ॥ यह गोली खांसी, गलरोग, श्वास, और पीनस, मूर्छा तथा उन्माद एवं सन्निपात में सदैव हित करने वाली है ॥ ६ ॥

राज गुटिका ।

शुंठ्या पलं पलार्धं च गन्धकं सैंधवं तथा ॥
निंबूकरससम्बद्धा हन्त्यजीर्णं विषूचिकाम् ॥७॥

राजगुटिका कहते हैं । सोंठ एक पल गंधक, सेंधा नमक आधा आधा पल, इन को लेके नीबू के रस में पीस कर गोली बनावे यह गोली अजीर्ण और हैजा रोग को नाश कर देती है ॥ ७ ॥

तथाच ।

नागरं च चतुर्भागं तदर्धं सैंधवं तथा ॥
गन्धकं भागमेकं च काथ्य्यागन्धकं समम् ॥८॥
निम्बूरसस्य सप्ताहं पुटं दद्याद्विशारदः ॥
विषूचिकाऽजीर्णशूलं मन्दाग्निं वमनं हरेत् ॥
एषा राजवटी नाम कोलमात्रन्तु भक्षयेत् ॥९॥

सोंठ चार भाग, सेंधानमक दो भाग, गंधक और हर्र एक भाग ॥ ८ ॥ इन सबको लेके नीबू के रस की सात दिन पर्यन्त भावना देवे तब गोली बनावे इन गोलियों के सेवन से हैजा, अजीर्ण, शूल, मन्दाग्नि, वमन इन रोगों का नाश होता है, यह राजवटी नाम वटी एक कोलमात्र खाय ॥ ९ ॥

उन्मीलिनी गुटिका ।

उन्मीलिनी बुद्धिबलेन्द्रियाणां निर्मूलिनी वातकफादिकानाम्
संशोधिनी मूत्रपुरीषयोश्च हरीतकी शुंठिगुडेन युक्ता ॥१०॥

हरीतकी (हर्र) सोंठ इन दोनों को पीस कर गुड़ मिलाय गोली बना लेवे, इसे उन्मीलिनी गुटिका कहते हैं, यह उन्मीलिनी गुटिका बुद्धिबल को बढ़ाने वाली इन्द्रियों को चैतन्य करने वाली और वात कफ आदि दोषों को नाश करने वाली है मूत्र और मल को शुद्ध करने वाली है ॥ १० ॥

गुड चतुष्टय वटिका ।

आमेषु सगुडां शुंठीमजीर्णे गुडपिप्पलीम् ॥
कृच्छ्रे जीरगुडं दद्यादर्शस्सु गुडदाडिमम् ॥११॥

आँव के विकार में गुड़ सहित सोंठ, और अजीर्ण रोग में गुड़ में पीपर मिला कर, तथा मूत्रकृच्छ्र रोग में गुड़ और जीरा मिला कर एवं बवासीर रोग में गुड़ और अनारदाना मिला कर देवे ॥ ११ ॥

गुडं विश्वौषधं पथ्या मागधीदाडिमैः कृता ॥
भक्ष्यमाणा गुटी हन्ति गुल्मार्शोवह्निजान् गदान् ॥१२

गुड़, सोंठ, हर्र, पीपर, अनारदाना इनको बराबर लेकर गोली बनावे यह गोलियां सेवन करने से वायगोला, बवासीर और मन्दाग्निरोग को दूर करती है ॥ १२ ॥

सूरणादि वटिका ।

चूर्णीकृता षोडश सूरणस्य भागास्तदर्धेन च चित्रकस्य॥
महौषधी द्वौ मरिचस्य चैको गुडेन दुर्नामजयाय पिंडी॥ १३ ॥
मरिचमहौषधिचित्रकसूरणभागा यथोत्तरं द्विगुणाः ॥
सर्वसमो गुडभागो वटिका दुर्नामनाशाय ॥१४॥
वृद्धदारुणभल्लातशुंठीचूर्णेन योजितः ॥
मोदकः सगुडो हन्यात् षड्विधार्शःकृतां रुजम् ॥१५॥

सूरणादि वटिका कहते हैं। सोलह भाग जिमीकंद का चूर्ण, आठ भाग चीता, दो भाग सोंठ, एक भाग मिर्च इनको लेके गुड़ के साथ गोली बनावे, यह गोली खाने से बवासीर रोग जाता रहता है ॥ १३ ॥ काली मिर्च एक भाग, सोंठ दो भाग, चीता तीन भाग, जिमीकंद चार भाग, इन सबके बराबर गुड़ मिला कर गोली बनावे इन गोलियों के खाने से बवासीर रोग दूर हो जाता है ॥ १४ ॥ तथा विधारा, शोधा हुआ भिलावां, सोंठ के चूर्ण में गुड़ मिलाय गोली बनावे, ये गोली खाने से छ प्रकार का बवासीर रोग दूर हो जाता है ॥१५॥

तथा च ।

सनागरापुष्करवृद्धदारुकं गुडेन यो मोदकमृत्युहारकम् ॥
अशेषदुर्नामकरोगहारकं करोति वृद्धान् सहसैव दारकान् ॥१६

तथा सोंठ, पुहकरमूल, विधारा इन औषधियों को लेके गुड़ में मिला कर गोली बना लेवे यह गोली खाने से अकाल मृत्यु नहीं होती यह गोली मृत्यु को हरने वाली बवासीर रोग को दूर करने वाली और बूढ़े लोगों को सहसा बलवान् करने वाली है ॥ १६ ॥

कांकायनी गुटिका ।

पथ्या पंचपलान्येकमजाजिमरिचस्य च ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः ॥१७॥
पलाभिवृद्धैः क्रमशो यवक्षारपलद्वयम् ॥
भल्लातकपलान्यष्टौ सूरणो द्विगुणो मतः ॥१८॥
द्विगुणेन गुडेनैषा वटिका चाक्षसम्मिता ॥
एकैकान्भक्षयेत्प्रातस्तक्रमम्लं पिबेदनु ॥१९॥

कांकायनी गुटिका कहते हैं। हर्र पांच पल और जीरा, मिर्च, पीपर, पिपलामूल यह एक एक पल, तथा चव्य दो पल, चीता तीन पल, सोंठ चार पल ॥ १७ ॥ जवाखार दो पल, भिलावां आठ पल, जिमीकन्द दूना लेवे ॥ १८ ॥ और दूना गुड़ मिला कर एक अक्ष (१६ माशा) प्रमाण गोली बनावे एक गोली प्रातःकाल में खाकर ऊपर से खट्टा मठा पीवे ॥ १६ ॥

कांकायनी घटिकागुण ।

वह्निं सन्दीपयत्याशु ग्रहणीपांडुरोगजित् ॥
कांकायनेन शिष्येभ्यः शस्त्रक्षाराग्निभिर्विना ॥
कथिता गुटिका चैषा गुदजानां विनाशिका ॥२०॥

कांकायन वटिका के गुण कहते हैं। यह कांकायन गुटिका जठराग्नि को तुरन्त प्रज्वलित कर देती है, संग्रहणी और पांडुरोग को जीतती है, कांकायन कवि ने अपने शिष्यों से शस्त्र, क्षार और अग्नि के विना वर्णन की है यह गुटिका गुदा से प्रगट हुए रोगों की नाश करने वाली कही है ॥ २० ॥

अभयादि मोदक ।

अभया पिप्पलीमूलं मरिचं नागरं तथा ॥
त्वक्पत्रं पिप्पली मुस्तं विडंगामलकानि च ॥२१॥
कर्षं प्रत्येकमेषान्तु दन्त्याः कर्षत्रयं तथा ॥
षट्कर्षाश्च सितायास्तु द्विपला त्रिवृता भवेत् ॥२२॥
सर्वं संचूर्णितं कृत्वा मधुना मोदकाः कृताः ॥
खादेत्प्रतिदिनं चैकं शीतं चानु पिबेज्जलम् ॥२३॥
तावद्विरिच्यते जन्तुर्यावदुष्णं न सेवयेत् ॥
पाण्डुरोगं विषं कार्श्यं जंघायाश्च रुजस्तथा ॥२४॥
शिरोऽर्त्तिं मूत्रकृच्छ्रं च दुर्नामकभगन्दरौ ॥
अश्मरीमेहकुष्ठं च दाहशोफोदराणि च ॥२५॥

अभयादि मोदक (लड्डू) कहते हैं । हर्र, पिपरामूल, कालीमिर्च, सोंठ, तज, पत्रज, पीपर, मोथा, वायविडंग, आंवला ॥२१॥ ये औषधियां एक एक कर्ष भर लेवे, और दंती तीन कर्ष लेवे दंती का फल जमालगोटा होता है मिश्री छ कर्ष और निशोथ दो पल लेवे ॥२२॥ इन सबका चूर्ण कर शहद मिलाय लड्डू बनावे एक लड्डू प्रतिदिन खाय ऊपर ठंढा पानी पीवे ॥२३॥ जबतक दस्त न हों तब तक गरम जल नहीं पीवे यह मोदक पांडुरोग, विषरोग, दुबलापन, और जंघा के रोग ॥२४॥ तथा शिरपीडा, सुजाक, बवासीर, भगन्दर, पथरी, प्रमेह, कोढ़, जलन, सूजन और पेट के रोगों को दूर करते हैं ॥२५॥

अजमोदादि गुटिका वातरोग पर ।

अजमोदा मरिचकणा विडंगसुरदारुचित्रकशताह्वाः ॥
सैन्धवपिप्पलिमूलं भागा नवकस्य पलिका स्यात् ॥२६॥
शुंठी दशपलिका स्यात्पलानि तावन्ति वृद्धदाराश्च ॥
दन्त्याः पलानि पंच च सर्वाण्येकत्र कारयेच्चूर्णम् ॥२७॥

समगुडवटिका अदतश्चूर्णं वा कोष्णवारिणा पिवतः ॥
नश्यन्त्यनिलजा ये सर्वे रोगास्तथा वाताः ॥ २८ ॥

अजमोदादि वटिका कहते हैं, । अजमोद, काली मिर्च, पीपर, वायविडंग, देवदारु, चीता, सोया, सेंधानमक, पिपलामूल यह औषध सब पल लेवे ॥२६॥ सोंठ दश पल, विधारा दश पल, और दन्ती पांच पल लेकर एकत्र करे और चूर्ण बनावे ॥२७॥ चूर्ण के बराबर गुड़ मिला कर गोली बनावे और खाय अथवा चूर्ण ही फांक कर ऊपर से गरम जल पीवे तो वात दोष से उत्पन्न रोग और सब प्रकार के वातरोग दूर हो जाते हैं ॥ २८ ॥

एलादि गुटिका उदररोग पर।

एलीयकं कणा पथ्या शुंठी चित्रकटंकणे ॥
राजिका सर्जिका सोरो विडंगाजाजिसैन्धवम् ॥२९॥
गुडेन गुटिका कार्या यकृत्प्लीहविनाशिनी ॥३०॥

एलादि गुटिका कहते हैं। छोटी इलायची, पीपर, हर्र, सोंठ, चीता, सुहागा, राई, सज्जी, शोरा, वायविडंग, जीरा, सेंधा ॥२९॥ इनको पीस कर गुड़ में मिला कर गोली बनावे यह गोली यकृत् (हृदय पीड़ा) और तिल्ली रोग को नाश करती है ॥३०॥

नवरसादि गुटिका पांडुरोग पर।

चित्रकं त्रिफला मुस्तं विडंगं त्र्यूषणानि च ॥
समभागानि कार्याणि सर्वतुल्यमयोरजः ॥३१॥
मधुसर्पिर्युतं लेह्यं गुडेन गुटिकाऽथवा ॥
गोमूत्रमथवा तक्रमनुपाने प्रशस्यते ॥३२॥
पांडुरोगं जयेदुग्रं हृद्रोगं च भगन्दरम् ॥
शोफकुष्ठोदरार्शांसि मन्दाग्निमरुचिं कृमीन् ॥३३॥

नवरसादि गुटिका कहते हैं। चीता, त्रिफला, मोथा, वायविडंग, सोंठ, मिर्च, पीपर इनको बराबर लेवे और सबके बराबर लोहसार लेवे ॥३१॥ शहत और घी के साथ लेह अथवा गुड़ के साथ गोली बनावे उस लेह

(चाटने योग्य) को अथवा गोली को गोमूत्र अथवा मठा के साथ सेवन करे ॥३२॥ तो कठिन पांडु रोग को हरती है और हृदय रोग, भगन्दर, सूजन, कोढ़, पेट के रोग और बवासीर, मन्दाग्नि, अरुचि तथा कृमि रोग को दूर करती है ॥३३॥

विडंगादि गुटिका ।

विडंगं त्रिफला व्योषं चातुर्जातकचित्रकम् ॥
स्वर्णमाक्षी तवाक्षीरं जीमूतं वंशलोचनम् ॥३४॥
काथ संपक्वलोहं च शर्करापि समन्विता ॥
गुटिकां मधुसंयुक्तां प्रातरेकां तु भक्षयेत् ॥३५॥

विडंगादि गुटिका कहते हैं। वायविडंग, त्रिफला, व्योष (सौंठ मिर्च पीपर) चातुर्जात (तज पत्रज नागकेशर इलायची) चीता, सोनामक्खी, तबाखीर, नागरमोथा, वंशलोचन ॥३४॥ मंडूर, लोहसार, ये सब बराबर लेवे इनके बराबर मिश्री मिलाय शहत के साथ गोली बनावे एक गोली प्रातः समय खाय ॥ ३५ ॥

विडंगादि वटिका गुण ।

प्रमेहशोफारुचिसामवातं सकामलं पांडुगदं सकुष्ठम् ॥
श्वासं च कासं च निहन्ति गुल्मं दुर्नामकं नाशयते च सद्यः ॥३६॥

यह विडंगादि गुटिका प्रमेह, सूजन, अरुचि, आमवात, कामला, पांडुरोग, कुष्ठरोग, श्वास, खाँसी, वायगोला, बवासीर इन रोगों को शीघ्र ही नाश करती है ॥ ३६ ॥

चन्द्रकला गुटिका प्रमेहरोग पर ।

एलासुकर्पूरसुधासधात्रीजातीफलं गोक्षुरशाल्मली च ॥
सूतेन्द्रवंगायसभस्मसर्वमेतत्समानं परिमर्दयेच्च ॥३७॥
गुडूचिकाशाल्मलिकाकषायपिष्टं समाना मधुना ततश्च ॥
बद्ध्वा गुटी चन्द्रकलेतिसंज्ञा मेहेषु सर्वेषु नियोजनीया ॥३८॥

चन्द्रकला गुटिका प्रमेह रोग पर कहते हैं। सफेद इलायची, कपूर, मिश्री, आंवला, जायफल, गोखरू, सेमर का गोंद, पारा, वंगभस्म, यह सब समान भाग लेकर घोटे ॥ ३७ ॥ फिर गुर्च सेमर का गोंद का काढ़ा कर उसमें घोंटे और शहत में मिला कर गोली बनावे यह चन्द्रकला नाम गुटिका सब प्रकार के प्रमेह रोगों में देना चाहिए ॥ ३८ ॥

व्योषादि गुटिका (पीनस रोगपर)।

व्योषाम्लवेतसं चव्यं तालीसं चित्रकं तथा ॥
जीरकं तिंतिडीकं च प्रत्येकं कर्षभागकम् ॥ ३९ ॥
त्रिसुगन्धं त्रिभागं स्याद्गुडः स्यात्कर्षविंशतिः ॥
व्योषादिवटिका नाम पीनश्वासकासजित् ॥ ४० ॥
रुचिस्वरकराख्याता प्रतिश्यायप्रणाशिनी ॥

व्योषादि गुटिका पीनस रोग पर कहते हैं। व्योष (मिर्च पीपर सोंठ) अमलवेत, चव्य, तालीस, चीता, जीरा, तिंतिडीक यह औषध प्रत्येक एक एक कर्ष प्रमाण लेवे ॥ ३९ ॥ और त्रिसुगंध (तज पत्रज इलायची) तीन भाग अर्थात् तीन कर्ष लेवे, गुड़ बीस कर्ष लेवे और सब की गोली बनावे यह व्योषादि नाम वाली गोली पीनस, श्वास और खांसी को जीतती है रुचि और स्वर करने वाली प्रसिद्ध है और प्रतिश्याय (जुकाम और पीनस) रोग को नाश करने वाली है ॥ ४० ॥

मरिचादि गुटी।

मरिचं कर्षमात्रं स्यात्पिप्पली कर्षसम्मिता ॥ ४१ ॥
अर्धकर्षयवक्षारं कर्षयुग्मं च दाडिमम् ॥
एतच्चूर्णीकृतं युज्यादष्टकर्षगुडेन हि ॥ ४२ ॥
शाणप्रमाणां गुटिकां कृत्वा वक्त्रे च धारयेत् ॥
अस्याः प्रभावात्सर्वेऽपि कासा यांत्येव संक्षयम् ॥४३॥

मरिचादि गुटी कहते हैं। काली मिर्च एक कर्ष (१६ माशा) पीपर एक कर्ष, जवाखार आधा कर्ष (२ टंक) अनारदाना दो कर्ष ॥ ४१ ॥ इन सबका चूर्ण कर आठ कर्ष गुड़ मिलाय एक एक टंक भर की गोलियां बनावे और मुख में धारण करें अर्थात् एक गोली मुख में रक्खे ॥ ४२ ॥ तो इस गोली के प्रभाव से सब प्रकार की खांसी दूर हो जाती है ॥ ४३ ॥

खैरसारादि गुटिका।

विभीतकहरीतक्यौ धात्री कटुफलानि च ॥

शुंठीमरिचपिप्पल्य एला कर्कटशृंगिका ॥ ४४ ॥
कर्पूरं पिप्पलीमूलं लवंगं शुंठिसंयुतम् ॥
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥ ४५ ॥
खदिरं च समं देयमार्द्रकद्रवभावना ॥
भावयेत्किकरीक्वाथैर्वटिका कोलमात्रका ॥ ४६ ॥
कासं कंठे कफं हन्ति स्वरभंगं च दारुणम् ॥
गृध्रसीं च निहन्त्याशु क्षयरोगहरं परम् ॥ ४७ ॥

खैरसारादि गुटिका कहते हैं। बहेड़ा, हर्र, आंवला, कायफल, सोंठ, मिर्च, पीपर, इलायची, ककरासिंगी ॥ ४४ ॥ कपूर, पिपरामूल, लौंग, कचूर, इन औषधियों को बराबर लेके पीसे और चूर्ण बनावे ॥ ४५ ॥ फिर सबके बराबर खैरसार मिला कर अदरख के रस की भावना देवे अनन्तर किकरी के काढ़ा की भावना देके एक कोल (८ माशा) भर की गोली बनावे ॥ ४६ ॥ यह गोली सेवन करने से खाँसी, कंठ में के कफ को, दारुण स्वर भंग को और गृध्रसी, क्षय रोग को शीघ्र दूर करती है ॥ ४७ ॥

बीजपूरादि वटिका।

त्रिकटुविकटदंष्ट्राहिंगुगुंजाररौद्र-
स्त्रिलवणनखमुग्रं जीरके द्वे चपेटः ॥
प्रकटितकटुकाग्रे प्रोल्लसत्केशरौघः
कफमदगजहन्ता केसरी बीजपूरः ॥ ४८ ॥

बीजपूरादि वटिका कहते हैं। त्रिकटु (मिर्च पीपर सोंठ) जिसकी विकट दाढ़ और हींग जिसका घोर शब्द, तीनों नमक (बिड सेंधा सोंचर) जिसके पैने नख, दोनों जीरा जिसकी चपेट, अदरख जिसकी प्रगट कडुवाई, यह औषध-रूप सिंह के तुल्य बीजपूर मत वाले हाथी के समान कफ को नाश करता है अर्थात् कफरूपी मत वाले हाथी को यह औषध सिंह-रूप है ॥ ४८ ॥

बब्बूल गुटिका।

रसभागो भवेदेको गंधको द्विगुणो मतः ॥

त्रिभागा पिप्पली ग्राह्या चतुर्भागा हरीतकी ॥ ४९ ॥
बिभीतकं पंचभागमाटरूपश्च षड्गुणः ॥
भाङ्गी सप्तगुणा ग्राह्या सर्वचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ५० ॥
बब्बूलक्वाथमादाय भावना एकविंशतिः ॥
कार्या बिभीतकमिता गुटिका मधुना सह ॥ ५१ ॥
कासं पंचविधं हन्यादूर्ध्वश्वासं कफं जयेत् ॥

बब्बूल गुटिका कहते हैं। पारा एक भाग, गंधक पाँच भाग, पीपर तीन भाग, हर्र चार भाग ॥ ४९ ॥ बहेड़ा पाँच भाग, अडूसा छ भाग, भारंगी सात भाग, इन सबको लेकर चूर्ण बनावे ॥ ५० ॥ और बबूल के काढा की इक्कीस भावना देवे, फिर बहेड़े के बराबर गोली बनावे और शहत के संग खाय ॥ ५१ ॥ तो यह गोली पांच प्रकार की खाँसी को दूर करती है तथा ऊर्ध्व श्वास और कफ को जीतती है ।

आमलादि वटिका ।

आमलं कमलं कुष्टं लाजाश्च वटरोहकम् ॥ ५२ ॥
एतच्चूर्णस्य मधुना गुटिकां धारयेन्मुखे ॥
तृषां प्रवृद्धां हन्त्येषा मुखरोगं च दारुणम् ॥ ५३ ॥

आमलादि वटिका लिखते हैं। आंवला, कमलगट्टा, कूट, लाई, बडवृक्ष की जटा ॥ ५२ ॥ इनका चूर्ण कर शहत के संग गोली बना कर मुख में रक्खे तो यह गोली बढ़ी हुई प्यास को शांत करती है और दारुण मुखरोग को नाश करती है ॥ ५३ ॥

शंख वटी ।

चिंचाक्षारपलं पटुव्रजपलं निम्बूजले कल्कितं
तस्मिन् शंखपलं प्रतप्तमसकृन्निर्वाप्य शीर्णावधि ॥
हिंगुव्योषपलं रसामृतपलं निःक्षिप्य निष्कासकान्
हर्त्ता शंखवटी क्षयग्रहणिरुक्हृद्यांत्रिशूलादिषु ॥५४॥

शंखवटी कहते हैं। इमली का खार एक पल, पांचो नमक एक पल, नीबू के रस में कल्क किये हुए एक पल शंख को गरम करके तब तक बुझावे जब तक उसके टुकड़े नहीं हो जावें फिर हींग व्योष (मिर्च पीपर सोंठ) एक पल, शुद्ध गन्धक और पारा एक पल मिला कर एक एक टंक की गोली बनावे, यह शंखवटी क्षयरोग, संग्रहणीरोग, हृदयरोग, पसलीरोग, और शूल आदि रोगों को दूर करती है ॥ ५४ ॥

तथा च पाठान्तर ।

चिंचाक्षारं लवणमखिलं निम्बुतोयेन पिष्टं
तप्तं शंखं पुनरपि पुनर्निक्षिपेत्सप्त वारान् ॥
तस्मिन् शंखो भवति शिथिलो मर्दयेत्तेन सार्धम्
व्योषं हिंगुस्तदपि च पुनः पादमानेन दद्यात् ॥५५॥
चातुर्थांशं हि गंधं विषरसमथो योजयित्वाऽत्र कुर्यात्
सम्यग्बध्वा भिषगथ गुटीं बादरास्थिप्रमाणम् ॥
शूले मन्दाग्न्युपशमनये पंक्तिशूले कुशूले
एकैकां तामुदयसमये योजयेत्पुष्टिवृद्धौ ॥ ५६ ॥

अब पाठान्तर भेद से वटी कहते हैं। इमली का खार और पाँचो नमक को नीबू के रस में पीसे और शंख को तपा कर सात बार बुझावे जब शंख खिल जाय तब उसे नीबू के रस में घोटे अनन्तर शंख से चौथाई सोंठ मिर्च पीपर हींग डाले ॥५५॥ फिर चौथाई पारा गन्धक तेलिया की कजली मिला कर बेर की गुठली के बराबर गोलियाँ बनावे इन गोलियों को शूल, मन्दाग्नि, पसली की पीड़ा, परिणाम शूल और कुक्षिपीड़ा में सेवन करे, सूर्य के उदय समय में एक गोली खाय तो यह गोली पुष्टि को बढ़ाती है ॥ ५६ ॥

अमरसुन्दरी गुटिका ।

त्रिकटु त्रिफला चैव रेणुका ग्रन्थिकानलम् ॥
मृतलोहं चतुर्जातं पारदं गन्धकं विषम् ॥ ५७ ॥
विडंगाकल्लकं मुस्ता सर्वेभ्यो द्विगुणो गुडः ॥
चणकप्रमाणगुटिका नाम्ना अमरसुन्दरी ॥ ५८ ॥

अपस्मारे सन्निपाते कासे श्वासे गुदामये ॥
अशीतिवातरोगेषु उन्मादेषु विशेषतः ॥ ५९ ॥

अमरसुन्दरी गुटिका कहते हैं। सोंठ, मिर्च, पीपर, आँवला, हर्र, बहेड़ा, सँभालू के बीज, पिपलामूल, चीता, खरा लोहसार, तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, पारा, गन्धक, विष ॥ ५७ ॥ वायविडंग, अकरकरा, मोथा इन सबको बराबर लेवे और सबसे दूना गुड़ मिला कर चना के बराबर गोली बनावे इसका नाम अमरसुन्दरी गुटिका है ॥ ५८ ॥ यह गुटिका मृगी, सन्निपात, खाँसी, श्वास, गुदारोग और अस्सी प्रकार के वातरोगों में तथा विशेष करके उन्मादरोग में हितकारक है अर्थात् इतने रोग इस गुटिका के सेवन से नाश हो जाते हैं ॥ ५९ ॥

विजयादि गुटिका।

पलत्रयं हरीतक्याश्चित्रकस्य पलत्रयम् ॥
एलात्वक्पत्रमुस्तानां भागश्चार्द्धपलः स्मृतः ॥ ६० ॥
व्योषं च पिप्पलीमूलं विषं कर्षप्रमाणकम् ॥
नागकेशरचूर्णं च कर्षं दद्याद्विचक्षणः ॥ ६१ ॥
रेणुकार्धपलं मात्रा तथा गन्धरसौ क्षिपेत् ॥
एतान्संभृतसंभारान् सूक्ष्मचूर्णं तु कारयेत् ॥६२॥
गुडस्य च तुलां दद्यान्मर्दयेत्तद्विचक्षणः ॥
एतेन गुटिका कार्याः षष्ठ्याधिकशतत्रयम् ॥ ६३ ॥

विजयादि गुटिका कहते हैं। हर्र तीन पल, चीता तीन पल, इलायची, तज, तेजपात, मोथा आधा २ पल लेवे ॥ ६० ॥ सोंठ, मिर्च, पीपर और पिपलामूल, विष ये एक एक कर्ष भर लेवे, नागकेशर का चूर्ण एक कर्ष प्रमाण लेवे ॥ ६१ ॥ सँभालू के बीज आधा पल तथा गन्धक और पारा आधा आधा पल मिला कर कजली कर सब औषधियों को मिला कर बारीक पीस चूर्ण बनावे ॥ ६२ ॥ फिर सब के बराबर गुड़ मिला कर घोटे और तीन सौ साठ गोलियाँ बनावे ॥ ६३ ॥

विजयादि गुटिकागुण।

एकैकां भक्षयेत्प्रातः कृत्वाहारं यथासुखम् ॥

मासेन पलितं हन्ति करोत्यग्निं द्वितीयके ॥ ६४ ॥
शुक्रवृद्धिं तृतीये च बलवर्णप्रसाधिनी ॥
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि सर्वमेहान्महाक्षयान् ॥ ६५ ॥
प्लीहानं कासश्वासौ च अण्डवृद्धिमरोचकम् ॥
अशीतिवातजान् रोगान् मूत्रकृच्छ्रं गलग्रहम् ॥६६॥
सर्वमूर्छा विषं हन्ति सर्वं स्थावरजंगमम् ॥
योनिदोषमपस्मारमुन्मादं विषमज्वरम् ॥ ६७ ॥

एक एक गोली प्रातः समय प्रतिदिन खाय जैसी इच्छा हो उसी अनुसार सुख से भोजन करे एक महीना में वृद्धपन को दूर कर दूसरे महीने में जठराग्नि को प्रवल करने वाली यह गोली है ॥ ६४ ॥ तीसरे महीने में वीर्य को बढ़ा कर देह में बल और कान्ति को बढ़ाती है अठारह प्रकार के कुष्टरोग और बीस प्रकार के प्रमेह तथा महा क्षयरोगों को नाश करती है ॥ ६५ ॥ और तिल्ली, खांसी, श्वास, अंडवृद्धि, अरुचि और अस्सी प्रकार के वात-जन्यरोग, सुजाक तथा गलग्रह रोग को हरती है ॥ ६६ ॥ एवं सब प्रकार की मूर्च्छा और संपूर्ण स्थावर जंगम विष, योनिदोष, मृगी, उन्माद और विषम ज्वर को नाश करती है ॥ ६७ ॥

बलेन गजतुल्यो वा वेगेन तुरगोपमः ॥
मयूरस्तु भवेदक्षौ वाराहःश्रोत्रमेवच ॥ ६८ ॥
हयतुल्यो भवेत्स्त्रीषु गृध्रदृष्टिर्हि जायते ॥
उपयोगात्परं जीवेन्नरो वर्षशतत्रयम् ॥ ६९ ॥
न चात्र परिहारोऽस्ति न च कामे न मैथुने ॥
ग्राम्यधर्मोऽथ वाग्वाणो भोजने च यथेच्छया ॥ ७० ॥
विनिर्मितो विष्णुपितामहाभ्यां मूर्धाभिषेकस्त्रिदिवेश्वरेण ॥
अयं वरः सर्वरसायनानां योगेन हन्यादचिरेण रोगान् ॥७१॥
विजया नाम गुटिका विख्याता रुद्रभाषिता ॥
भक्षयेद्यो नरो वर्षं तस्य सिद्धिर्न संशयः ॥ ७२ ॥

इस विजयादि गुटिका के सेवन से मनुष्य हाथी के समान बलवान् हो, घोड़ा के तुल्य वेग वाला हो, मोर के समान प्रबल अग्नि वाला हो, शूकर के समान श्रवण शक्ति हो ॥ ६८ ॥ स्त्री प्रसंग में घोड़े के तुल्य हो, गीध के समान दृष्टि वाला हो, इसके उपयोग से मनुष्य तीन सौ वर्ष पर्यन्त जीवे ॥ ६९ ॥ इस वटिका के सेवन में कोई पदार्थ वर्जित नहीं, काम और मैथुन का भी त्याग नहीं ग्रामीण धर्म और बातचीत एवं इच्छानुसार भोजन करे ॥ ७० ॥ विष्णुभगवान् और ब्रह्माजी ने इसको बनाया, इन्द्रदेव ने अपने शिर चढ़ाया। यह विजयादिवटिका सब रसायनों में उत्तम रसायन है इसके सेवन से तुरन्त रोगों का नाश होजाता है ॥ ७१ ॥ विजया नामक गुटिका शिवजी की कही हुई प्रसिद्ध है, वर्ष भर जो मनुष्य इसका सेवन करता है उसे निस्संदेह सिद्धि प्राप्ति होती है ॥ ७२ ॥

शिवा गुटी ।

शिलाजतु पलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ॥
त्वक्क्षीरी पिप्पली धात्री कर्कटाक्षापलोन्मिता ॥७३॥
निर्दग्धफलमूलाभ्यां पलं युञ्ज्यालिगंधकान् ॥
मधुत्रिफलसंयुक्ताः कुर्यादक्षसमा गुटीः ॥ ७४ ॥

आठ पल शिलाजीत, आठ ही पल मिश्री और वंशलोचन, पीपर, आँवला, ककरासिंगी एक एक पल लेवे ॥ ७३ ॥ और कटेरी का पंचांग तथा शहत सहित त्रिफला मिला कर वहेड़े के वरावर गोलियां बनावे ॥ ७४ ॥

शिवागुटी समाख्याता शिवेन परिभाषिता ॥
क्षयरोगार्दितानां च सर्वक्लेशप्रहारिणी ॥ ७५ ॥

यह शिवा गुटी प्रसिद्ध है श्री महादेव जी ने कही है यह क्षयी रोग से पीड़ित जनों का सब क्लेश दूर करने वाली है ॥ ७५ ॥

शिलाजीत शोधन ।

त्रीन्वारान् प्रथमं शिलाजतु जले भाव्यं भवेत् त्रैफले
निःक्काथे दशमूलजे च तदनु च्छिन्नोद्भवाया रसैः ॥
वाट्यालक्थने पटोलसलिले यष्टीकषाये पुन-
र्गोमूत्रे च पयस्यथापि च गवामेषां कषाये ततः ॥७६॥

पहले शिलाजीत को त्रिफला के रस अथवा काढ़ा में तीन बार भिगोवे फिर दश मूल के काढ़ा में भावना देवे, अनंतर गुर्च के रस में भावना देवे, फिर खरियरा के काढ़ा में, उपरान्त पटोल के काढ़ा में भावना दे तदन्तर मुलहठी के रस की भावना देके गोमूत्र और दूध की भावना देवे तो शिलाजीत शुद्ध हो जाता है ॥ ७६ ॥

शिव गुटिका।

द्राक्षाभीरुविदारिकाद्वयपृथक्पर्णीस्थिरापुष्करैः
पाठाकौटजकर्कटाक्षकटुकारास्नाम्बुदालांबुजैः ॥
दन्तीचित्रकचव्यवारणकणावीराष्टवर्गौषधीं
द्विद्रोणे चरणस्थिते पलमितैरेभिः शृतैर्भावयेत् ॥७७॥
धात्रीमेषविषाणिकात्रिकटुकैरेभिः पृथक् पंचभि
र्द्रव्यैश्च द्विपलोन्मितैरपि पलं चूर्णं विदारी भवेत् ॥
तालीसं कुडवं चतुःपलमिह प्रक्षिप्यते सर्पिषा
तैलस्य द्विपलं पलाष्टकमसौ क्षौद्रंभिषक् योजयेत् ॥७८॥
तुल्यं पलैः षोडशभिः सितायास्त्वक्क्षीरिकापत्रककेशरस्य ॥
बिल्वांशकैस्त्वक् त्रुटिसंप्रयुक्तैरित्यक्षमात्रा गुटिका प्रकल्प्या ७९

शिवगुटिका कहते हैं। दाख, शतावरी, विदारीकंद, शालपर्णी, पृष्ठिपर्णी कटेरी, पुहकरमूल, पाढ, कुड़ा की छाल, ककरासिंगी, बहेड़ा, कुटकी, रासनि, मोथा, कडुई तोमड़ी, दंती, चीता, चव्य, बड़ी पीपर, अष्टवर्ग (मेद, महामेद, ऋषभ, सिद्ध, जीवक, ऋद्ध, काकोली क्षीरकाकोली) यह एक एक पल लेवे ॥ ७७ ॥ और आँवला सोलह टंक मेढ़ासिंगी सोलह टंक, त्रिकटु (मिर्च पीपर सोंठ) दो दो पल, विदारीकंद का चूर्ण सोलह टंक, तालीस पत्र एक कुडव (४ पल) घी और तेल दो पल, शहत सोलह पल ॥ ७८ ॥ मिश्री सोलह पल और वंशलोचन, तेजपात, नागकेशर, बेल की गिरी, तज, इलायची इनका चूर्ण मिलाय सबकी लुगदी बनाय बहेड़े के बराबर गोलियां बनावे ॥ ७९ ॥

शिव गुटिकागुण।

तासामेकतमां प्रयुज्य विधिवत्प्रातः पुमान्भोजनात्
प्राग्वा मुद्गदलांबु जांगलरसं शीतं शृतं वा जलम् ॥

माध्वीकं मदिरामथर्वशनभुक् पीत्वा पयो वा गवां
प्राप्नोत्यंगमनंगवस्तु भवनं सम्पन्नमानन्दकृत् ॥८०॥

इनमें से एक गोली विधि समेत प्रातःकाल सेवन करे भोजन से पहले मूँग की दाल का पानी, मांस रस, ठंढा अथवा गरम पानी, शहत वा मदिरा इनके साथ गोली खाय ऊपर से हलका भोजन करे अथवा गौ के दूध के साथ सेवन करे तो अंग और अनंग अर्थात् कामदेव की वृद्धि होवे और वह मनुष्य सदैव आनंदित रहे ॥ ८० ॥

शोफं ग्रंथ्यक्षिमंथवेपथुवमीपांड्वामयाञ्श्लीपदं
प्लीहार्शः प्रदरप्रमेहपिटिकामेहाश्मरीशर्करा ॥
हृद्रोगार्बुदवृद्धिविद्रधियकृद्योन्याजरीन्मारुता-
नूरुस्तम्भभगन्दरं ज्वररुजस्तूनीप्रतूनीतृषा ॥८१॥
वातासृक् प्रबलं प्रवृद्धमुदरं कुष्टं किलासकृमीन्
कासश्वासज्वरस्वरक्षयमसृक्पित्तं सपानात्ययम् ॥
उन्मादं मदमप्यपस्मृतिमतिस्थौल्यं कृशत्वं तनो-
रालस्यं च हलीमकं प्रशमयेन्मूत्रस्य कृच्छ्राणि च ॥८२॥

यह शिव गुटिका सूजन, गाँठ, नेत्ररोग, कंपवात, वमन पांडुरोग, श्लीपद, तापतिल्ली, बवासीर, प्रदर, प्रमेह, पथरी, शर्कराप्रमेह, हृदयरोग, अर्बुद, विद्रधि, यकृत्, योनिदोष, वात विकार, उरुस्तंभ, भगन्दर, स्वर संबंधीरोग, तूनी, प्रतूनी, प्यास ॥ ८१ ॥ वातरक्त, जलंधर, कोढ़, कृमिरोग, खाँसी, श्वास, स्वरभंग, रक्तपित्त पानात्यय, उन्माद, मद (नशा) स्मृति भ्रम, बहुत मोटापन, बहुत दुबलापन, आलस्य, हलीमक, सुजाक इन सब रोगों को दूर करती है ॥ ८२ ॥

झटिति युवा सर्वैः श्वेतैरकालजराकृतैः
कृतमलिकुलाकारैरेभिः शिरश्च शिरोरुहैः ॥
वलिमदवलिव्यस्तातंकं वपुश्च समुद्वहन्
प्रभवति शतं स्त्रीणां गन्तुं प्रभुर्जनवल्लभः ॥८३॥
स्तिमितमतिरविज्ञानान्धः सदस्यपटुः पुमान्

सकृदपि यया ज्ञानोपेतः श्रुतिस्मृतिमान्भवेत् ॥
व्रजति च यथायुक्तो योगी शिवस्य समीपतां
शिवगुटिकया कृत्स्नाभेको करोति हि मानवः ॥८४॥

जो युवावस्था में ही केश श्वेत हो जायँ और बुढ़ापे के तुल्य प्रतीत हों, तो केश काले हो जाते हैं और बुढ़ापा दूर हो जाता है, मतवाले हाथी के तुल्य बलवान् हो जाता है शरीर में फुर्तीलापन आ जाता है सौ स्त्रियों से संभोग करने में समर्थ हो जाता है और वह मनुष्यों को प्यारा लगता है ॥ ८३ ॥ श्रेष्ठ बुद्धि से युक्त अज्ञान रहित, महान् पण्डित, सदैव ज्ञान सम्पन्न, श्रुति स्मृति का ज्ञाता हो जाता है, शिवगुटिका सेवन करने वाला योगी शिवजी के समीप जाता है, यह शिव गुटिका श्री शिवजी ने कही है ॥ ८४ ॥

विरेचन गुटिका (नाराच रस)

अष्टौ विषतुषदन्तिबीजकलिकाभागत्रयं नागरा
द्वौ गन्धान्मरिचानि टंकणरसा एकैकभागः क्रमात् ॥
गुंजामानवटी विरेचनकरी देया सुशीताम्बुना
गुल्मप्लीहमहोदरार्तिशमनी नाराचनामा रसः ॥८५॥

विरेचन गुटिका कहते हैं। जमालगोटा का छिलका अलग कर उसकी मींगी को दूध में पकावे, यह आठ भाग हो तो सोंठ तीन भाग, शुद्ध गन्धक दो भाग, काली मिर्च, सोहागा का फूला, पारा एक भाग इन सबको मिलाय कूट पीस कर घुंघुची के बराबर गोलियाँ बनावे और शीतल जल के संग खाय तो वायगोला, प्लीह (पिलही) और पेट के सब विकारों को नाश करने वाला यह नाराच नामक रस है ॥ ८५ ॥

ज्वर नाशक योग।

नेपालकं टंकणपारदं च तुर्यं तथा चामलगंधसारम् ॥
सर्वैः समांशैरस एव पिष्टं ज्वरेषु सर्वेषु च नित्यमिष्टम् ॥८६॥
रसः प्रदेयः स्फुटमेकगुंजः पथ्यं सितातन्दुलमुद्गयूषाः ॥
श्रीपूज्यराजैः कथितो रसोऽयं सद्योज्वरं चापि निहन्तिसत्यम्॥

ज्वरनाशक (बुखार को नाश करने वाला) योग कहते हैं। शोधा हुआ जमालगोटा, सोहागा और पारा तथा आँवलासार गन्धक यह सब समान भाग लेकर सेवन करने से यह योग सब प्रकार के ज्वरों में सदैव हितकारी है ॥८६॥ एक घुंघुची के प्रमाण रस देवे और मिश्री, चावल, मंग का रस इसमें पथ्य है, श्री पूज्यराज ने यह रस वर्णन किया है यह रस ज्वरों को शीघ्र नाश करता है ॥ ८७ ॥

तथाच (इच्छाविभेदी रस)

रसं विषं टंकणगंधकं च सत्र्यूषणं भृंगरसेन भाव्यम् ॥
गुटी प्रदेया समशर्करांशः सद्योज्वरं नाशयति क्षणेन ॥८८॥
नेपालकं पारदटंकणाद्यं क्षारो यवानी मरिचानि पथ्या ॥
एरण्डबीजानि च गन्धकं च इच्छाविभेदी रसचक्रवर्ती ॥८६॥

इच्छाविभेदी रस कहते हैं। शुद्ध पारा तेलिया मीठा, सोहागा और गंधक लेवे और सोंठ मिर्च पीपर यह सब बराबर लेके भांग के रस में भावना देवे और गोली बनावे उस गोली के बराबर मिश्री के संग खाय तो यह गोली शीघ्र ज्वर को नाश कर देती है ॥ ८८ ॥ तथा शुद्ध जमालगोटा, पारा, सोहागा का फूला यह एक एक कर्ष प्रमाण लेवे और जवाखार, अजवायन, मिर्च, हर्र, अंडी, गंधक शोधा हुआ इन सबको एकत्र कर रस बना लेवे यह इच्छाविभेदी रस सब रसों में चक्रवर्ती राजा के तुल्य है ॥ ८६ ॥

त्रिकटु त्रिफला सूतं शुद्धं गन्धकटंकणम् ॥
सर्वैः समानो जैपालो राजयोग्यं विरेचनम् ॥९०॥
नेपालमरिचटंकणसमभागोमेलि एकीकृत्य ॥
अर्द्धो हिंगुलभागो पयडोबुद्धोछुरीकारो ॥९१॥

त्रिकटु (मिर्च पीपर सोंठ) त्रिफला (हर्र बहेड़ा आँवला) शुद्ध पारा गन्धक और सोहागा का फूला लेवे शुद्ध जमालगोटा सब के बराबर लेवे यह विरेचन (दस्तावररस) राजाओं के योग्य है ॥ ९० ॥ तथा शुद्ध जमालगोटा, कालीमिर्च, सुहागा का फूला, इनको समान भाग लेके इनसे आधा हिंगुल मिलावे इसको छुरीकार नाम रस जानो ॥ ९१ ॥

टंकणमयूरतुत्थस्नुहीक्षीरअजैपालमेरण्डम् ॥
नाभिप्रलेपदत्तं नरपतियोग्यं विरेचनं कुरुते ॥९२॥
मध्यमस्त्रिवृतास्तिक्ताराजवृक्षो विरेचनम् ॥
क्रूरः स्नुक्पयसा हेम क्षीरदंतीफलादिभिः ॥९३॥
एरण्डतैलं दुग्धांगं तथा तुंबी हरीतकी ॥
वज्री क्षीरगुटी चाथ पिप्पली तेन भाविता ॥९४॥
महिषावलिखा चैव कापिलं तक्रमेव च ॥
उष्ट्रीदुग्धं तथा पेयं घोड़ाचोली गुटी तथा ॥९५॥

घोड़ा चोली कहते हैं । सुहागा, नीला थोथा, सेहुड का दूध, शुद्ध जमाल-गोटा, अंडी, इनको बारीक पीस कर तोंदी पर लेप के निमित्त देवे तो यह राज-योग्य विरेचन है अर्थात् इन औषधियों के लेप से सुखपूर्वक दस्त आते हैं ॥९२॥ तथा एलुआ, निशोथ, कुटकी, अमिलतास, यह मध्यम विरेचन है, एवं मदार, थूहर का दूध, शुद्ध जमालगोटा, यह निकृष्ट विरेचन है ॥ ९३ ॥ तथा अंडी के तेल और गाय के दूध में तोंबी और हर्र की गोली बनावे, अथवा पीपर को थूहर के दूध में भावना देकर गोलियां बनावे ॥ ९४ ॥ एवं साठी चावलों में अथवा कपिला के दूध के संग वा मठा के संग पीवे वा ऊंटनी का दूध पीवे तथा घोड़ा चोली गुटी सेवन करे ॥ ९५ ॥

स्तम्भिनी गुटिका ।

विश्वौषधं टंकणगन्धकं च सपारदं चेति समानयुक्तम् ॥
नेपालचूर्णं त्रिगुणं च दद्याद्गुडेन बद्ध्वा गुटिका प्रसिद्धा ९६
विरेचनी मूत्रविकारनाशिनी लघ्वी हिता दीपनपाचनी च ॥
संशोधनी शीतजलेन सत्यं संस्तम्भिनी चोष्णजलेन सत्यम् ९७

स्तम्भनी गुटिका कहते हैं । सोंठ, सोहागा, शुद्ध गन्धक और पारा समान भाग लेवे और शुद्ध जमालगोटा का चूर्ण तिगुना उसमें मिला कर अच्छे गुड़ के साथ बाँध कर यह प्रसिद्ध गोलियाँ देवे ॥ ९६ ॥ यह स्तम्भिनी गोली दस्त लानेवाली, मूत्र के विकार को दूर करने वाली, हलकी, हित करने वाली, जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाली, अन्न आदि को पचाने वाली शीतल जल

से कोठा को शुद्ध करने वाली, और गरम जल के द्वारा दस्तों को रोकने वाली है यह सत्य है ॥ ९७ ॥

विषूचिकांजन गुटिका।

फलत्रिकं व्योषकरंजबीजं रसं तथा दाडिममातुलुंगो ॥
निशायुगं पिष्य कृता च वर्तिस्तदंजनं हन्ति विषूचिकां च ९८

विषूचिकांजन गुटिका (हैजा रोग में अंजन की गोली) कहते हैं। त्रिफला, त्रिकटु अर्थात् हर्र वहेड़ा आंवला, और मिर्च पीपर सोंठ, कंजा के बीज, हलदी, दारुहलदी इन सब औषधियों को पीस कर अनार के रस में तथा विजौरा नीबू के रस में गोली बना कर अंजन करे यह गोली विषूचिका (हैजा) को नाश करती है ॥ ९८ ॥

विषूचिका गुटिका।

व्योषा करंजस्य फलं हरिद्रे मूलं समावाप्य च मातुलुङ्गम् ॥
छायाविशुष्का गुटिका विधेया हन्याद्विषूचीं नयनांजनेन ॥९९॥

व्योष (मिर्च पीपर सोंठ) कंजा का फल, हलदी इन सबको समान भाग लेके विजौरा नीबू के रस में गोली बनाय छाया में सुखावे और नेत्रों में इस गोली का अंजन करे तो विषूचिका रोग नाश हो जाता है यह विषूचिका गुटिका है ॥९९॥

तथा।

मातुलुङ्गजटाव्योषनिशाबीजं करंजकम् ॥
कांजिकेनांजनं हन्यात् विषूचीमतिदारुणम् ॥ १०० ॥

विजोरा की जटा, मिर्च पीपर सोंठ, कंजा के बीज, इनको पीस कर कांजी के पानी में गोली बनावे और उसे घिस कर नेत्रों में अंजन करे तो घोर विषूचिका रोग नाश हो जाता है ॥ १०० ॥

प्रचेता गुटिका।

त्र्यूषणं त्रिफला हिंगु सैंधवम् कटुका वचा ॥
नक्तमालस्य बीजानि तथा च गौरसर्षपाः ॥ १०१ ॥

मेषमूत्रेण पिष्टानि छायाशुष्कं विधापयेत् ॥
भूतोन्मादेऽप्यचैतन्येंऽजनमेकाहिकादिषु ॥ १०२ ॥

मिर्च पीपर सोंठ, आंवला हर्र बहेड़ा, हींग, सेंधा, कुटकी, वच, कंजा की मींगी, .. .ां सफेद ॥ १०१ ॥ मेढा के मूत्र में पीस कर इनकी गोली बनावे और छाया में सुखा लेवे फिर नेत्रों में इस गोली को घिस कर अंजन लगावे तो भूतोन्माद, अचेतनता, इकतरा आदि ज्वर दूर हो जाते हैं ॥१०२॥

तथा ।

राजिकां मरिचं कृष्णां सैंधवं भूतनाशनम् ॥
नरमूत्रेण संपिष्य अंजनं ज्वरनाशनम् ॥ १०३ ॥

राई, काली मिर्च, पीपर, सेंधा नमक इनको मनुष्य के मूत्र में पीस कर गोली बनावे और नेत्रों में अंजन लगावे तो यह अंजन ज्वर को नाश करने वाला है ॥ १०३ ॥

सर्षपादि गुटिका ।

सिद्धार्थको वचा हिंगु करंजो देवदारु च ॥
मंजिष्ठा त्रिफला श्वेता कटुकी त्वक्कटुत्रयम् ॥१०४॥
समांशानि प्रियंगुश्च शिरीषो रजनीद्वयम् ॥
वस्तमूत्रेण पिष्ट्वाऽयमंगे देयादथांजनम् ॥ १०५ ॥
नस्यमालेपनं चैव स्नानमुद्वर्तनम् तथा ॥
अपस्मारविषोन्मादकृत्यालक्ष्मीज्वरापहम् ॥ १०६ ॥
भूतेभ्यश्च भयं नास्ति राजद्वारे च शस्यते ॥१०७॥

सरसों, वच, हींग, कंजा की मींगी, देवदारु और मंजीठ, त्रिफला, श्वेता (वंशरोचना) कुटकी, तज, कटुत्रय (पीपर मिर्च सोंठ) ॥ १०४ ॥ प्रियंगु (कांगनी) सिरस के बीज, दोनों हलदी (हलदी दारुहलदी) इनको बराबर ले बकरा के मूत्र से पीस कर अंगों पर मले अथवा अंजन करे ॥ १०५ ॥ वा नास लेवे, अथवा लेप करे वा जल में मिला कर स्नान करे अथवा उबटन करे तो क्रम से मृगी रोग

विषरोग, उन्मादरोग, वातविकार और ज्वररोग जाता रहता है ॥ १०६ ॥ और भूतों से भय नहीं रहता है राजद्वार में यह सबको शुभदायक कहा है ॥ १०७ ॥

चिन्तामणि रस गुटिका ।

द्वौ जाजीकणविश्वपंचलवणमारीचगंधाभ्रकं
क्षारं त्रीणि रसेन्द्रचार्द्धममृतं तत्सर्वमेकीकृतम् ॥
क्षिप्त्वा चार्द्रकनागवल्लिसहितं पंचैव गुंजान्वितम्
सामे सज्वरसन्निपातकमहामेहाद्युदावर्तके ॥१०८॥

स्याह सफेद जीरा, पीपर, सोंठ, पांचों नमक, काली मिर्च, शुद्ध गन्धक, अभ्रक, सज्जी, जवाखार, सुहागा, पारा आधा भाग, तेलिया मीठा, इन सबको एक साथ कूट पीस अदरख के रस की पांच भावना देके पान के रस की पांच भावना देकर घुंघुची के बराबर गोलियां बनावे आमविकार, सन्निपात ज्वर, महाप्रमेह, उदावर्त इन रोगों में यह गोली सेवन करने से इन रोगों का नाश हो जाता है ॥ १०८ ॥

तथा ।

व्योषं गन्धं रसेन्द्रं विषमपि लवणं नागवंगं तथाभ्रं
सारं त्रिक्षारयुक्तं गजकणचविकासाग्निकं जीरके द्वे ॥
पथ्या वा चूर्णमेतत्प्रबलरसयुतं नागवल्लीकरीर-
निम्बूकार्द्रैरसादि प्रबलरसयुत शुद्धचिन्तामणीशः ॥१०९॥

मिर्च पीपर सोंठ, गन्धक, पारा, विष (तेलिया मीठा) पांचो नमक, नागेश्वर, वंग, अभ्रक, लोहसार, तीनों खार (सज्जी सुहागा जवाखार) गजपीपर, चव्य, चीता, स्याह सफेद दोनों जीरे हर्र इन सबको कूट पीस चूर्ण बनाय पान करेला, नीबू, अदरख के रस में अलग अलग भावना देवे यह शुद्ध चिन्तामणि रस है ॥ १०९ ॥

अथवा ।

सूतं गन्धकटंकणं समरिचं शुंठी विषं पिप्पलीम्
सर्जिक्षारयुतान्वितं च लवणं पचाभक जीरकम् ।

यावत्क्षारसमं समांशकमिदं खल्वे समैः शोषयेत्
सप्तैर्निम्बुभुजंगमार्द्रकरसैः शुद्धः स चिन्तामणिः ॥११०॥

पारा, गन्धक, सुहागा, काली मिर्च, सोंठ, तेलिया, पीपर, सज्जीखार, सौंफ, पांचो नमक, अभ्रक, स्याह सफेद जीरा, जवाखार, इन सबको बराबर ले खरल में पीस कर सुखा लेवे और नीबू अदरख के रस की सात सात भावना देवे यह शुद्ध चिन्तामणि रस है ॥ ११० ॥

वडवानल रस गुटिका ।

सूतं भुजंगमभृतं लवणं हरिद्रा
व्योष धनंजयजटाऽग्निभूवरिभी ॥
अष्टादश त्रिनववह्निमितश्च भागः
प्रोक्तो रसो रसगुणैर्वडवानलोऽयम् ॥ १११ ॥
निम्बुकार्द्रकक्षीरपयोभिः शिग्रुकेसरिभुजंगलताभिः ॥
साध्यमग्निसदनानिलशूलाध्मानहानि वडवानलचूर्णम् ॥११२॥

पारा, शीशा, गन्धक एक एक भाग सेंधा नमक १८ भाग, हल्दी ३ भाग, सोंठ मिर्च पीपर नौ भाग, चीता तीन भाग इनको आगे लिखे हुए रसों की भावना देवे तो वडवानल रस इस प्रकार होता है कि ॥ १११ ॥ नीबू अदरख करीर इनके रस में दूध में सहंजने के रस में और नागकेसर में अलग अलग सात भावना देवे अनन्तर गोली बनाय सेवन करे तो जठराग्नि, जठराग्नि की मन्दता, वातशूल, अफरा ये रोग जाते रहते हैं यह वड़वानल चूर्ण है, गुटिका बना लेने से गुटिका है ॥ ११२ ॥

पंचानन गुटिका ।

सूतं गन्धकचित्रकं त्रिकटुकं मुस्तं विडंगं विष
मेतेषां समतुल्यमार्कवरसं गुंजाप्रमाणा वटी ॥
कुष्ठअष्टादश गुल्मरोगमुदरप्लीहप्रमेहादयो
रोगानेकसुभूरिदर्पदलने ख्यातश्च पंचाननः ॥ ११३ ॥

पारा, गन्धक, चीता, त्रिकुटा (सोंठ पीपर मिर्च) मोथा, बायविडंग, विष (तेलिया) इन सबको बराबर लेके मदार के रस में गोलियां बनावे यह घुँघुची के प्रमाण गोलियां बना कर सेवन करने से अठारह प्रकार के कोढ़, बायगोला, उदररोग, तापतिल्ली और प्रमेह आदि अनेक रोग रूप हाथियों को नाश करने के निमित्त प्रसिद्ध पंचानन (सिंह) है ॥ ११३ ॥

तथा च ।

सूतं गन्धकचित्रकं त्रिकटुकं मुस्ता विषं त्रैफल
मेतैस्तुल्यकृतैर्गुडं द्विगुणितं गुञ्जाप्रमाणा वटी ।
कुष्ठं गुल्मतिसारजित्कृमिहरं शूलप्रमेहापहं
वातानेककरीन्द्रदर्पदलने ख्यातश्च पंचाननः ॥११४॥

सूत (पारा) गन्धक, चीता, मिर्च, पीपर, सोंठ, मोथा, तेलिया, आंवला, हर्र, बहेड़ा, इन सबको समान भाग लेके सबसे दूना गुड़ मिलाय घुँघुची के बराबर गोलियां बनावे इनके सेवन से कुष्ठ, गुल्म, अतीसार ये रोग नाश हो जाते हैं, शूल और प्रमेह रोग जाता रहता है, और अनेक प्रकार के वात रोग-रूपी हाथियों के मद को दूर करने के निमित्त यह प्रसिद्ध पंचानन (सिंह) है, ऐसी यह पंचानन गुटिका है ॥ ११४ ॥

घोडाचोली गुटिका ।

हरतालं विषं गंधं त्रिफला त्रिकुटा तथा ॥
टंकणं चारकं चैव अजपालं तथैव च ॥११५॥
तुल्यांशरसभृंगेन गुटिकां कारयेद्बुधः ॥
घोडाचोलीति विख्याता सर्वरोगविनाशिनी ॥११६॥

हरताल तेलिया मीठा, गंधक, त्रिफला, त्रिकुटा, तथा सुहागा, जवाखार अजपाल ॥ ११५ ॥ इन सबको समान भाग लेके भंगरा के रस से बुद्धिमान् जन गोली बनावे यह प्रसिद्ध घोडाचोली गुटिका सब रोगों को नाश करने वाली होती है ॥ ११६ ॥

खण्डेन सह गृह्णीयाद्गुटिकानां चतुष्टयम् ॥
उष्णं जलं चानुपेयं वारान्सप्त च पंच वा ॥११७॥

सूक्ष्मं विरेचनं कुर्याज्जीर्णज्वरविनाशिनी ॥
अजीर्णशूलग्रहणीगुल्मवातामवातजित् ॥११८॥

घोडाचोली गुटिका को खाँड़ के साथ लेवे, ऊपर से गरम पानी पीवे तो सात वा पाँच बार ॥ ११७ ॥ सूक्ष्म विरेचन करती है अर्थात् पतले दस्त लाती है यह घोड़ाचोली जीर्ण ज्वर को नाश करती है और अजीर्ण, शूल, संग्रहणी, गुल्म, आमवात इन रोगों को जीत लेती है ॥ ११८ ॥

प्रभावती गुटिका।

द्वे हरिद्रे निम्बपत्रपिप्पलीमरिचानि च ॥
भद्रमुस्ताविडंगं च सप्तमं विश्वभेषजम् ॥११९॥
सैन्धवं चित्रकं चैव बावची पित्तपर्पटम् ॥
पाठाभयावचाकुष्टमजामूत्रेण पेषयेत् ॥१२०॥
शताष्टशतं चाभिमंत्र्य जातीपुष्पाणि प्रक्षिपेत् ॥
दीपोत्सवदिने रात्रौ गुटीं कृत्वाभिमंत्रयेत् ॥१२१॥
तत्र मंत्रः ॥ ओं नमो पार्श्वनाथाय महासत्त्वाय ओंअहि महि चरचर चांडालिनी स्वाहा ॥१२२॥

हलदी, दारुहलदी, नीम के पत्ता, पीपर, मिर्च, नागरमोथा, वायविडंग, सोंठ ॥११९॥ सेंधा नमक, चीता, बावची, पित्तपापडा, पाठा, हर्र, वच, कूट इन सबको बकरी के मूत्र से घोटे ॥ १२० ॥ अथवा चमेली के फूल एक सौ आठ अभिमंत्रित कर दिवाली के दिन रात में आगे लिखे मंत्र से अभिमंत्रित कर गोलियां बनावे ॥ १२१ ॥ मंत्र यह है, ओं नमो पार्श्वनाथाय महासत्त्वाय ओं अहि महि चर चर चांडालिनी स्वाहा ॥ १२२ ॥

सर्वेषु बालरोगेषु ज्वरे ऐकाहिकादिके ॥
भूतप्रेतादिदोषेषु नश्येन्नेत्रामयेषु च ॥१२३॥
अंजनं भक्षणं पुंड्रं यथायोगं प्रयोजयेत् ॥
प्रभावती नाम गुटी सर्वकार्यप्रसाधिनी ॥१२४॥

सब बालरोगों में और एकतरा आदि ज्वरों में; भूत प्रेत आदि दोषों में और नेत्र रोगों में यह गोली देने से इन रोगों का नाश होता है ॥ १२३ ॥ इसको घिस कर अंजन करे, खावे, मात्राप्रमाण योगानुसार सेवन करे यह प्रभावती नाम गुटिका सब कार्यों की साधन करने वाली होती है ॥ १२४ ॥

अजमोदादि गुटिका ।

हिंगुभागो भवेदेको वचा च द्विगुणा भवेत् ॥
त्रयो भागा विडंगानां सैन्धवं च चतुर्गुणम् ॥१२५॥
अजाजी पंचभागा च षड्भागं नागरं तथा ॥
मरिचं सप्तभागं च पिप्पल्यष्टगुणा भवेत् ॥१२६॥
कुष्टस्य नव भागाः स्युर्दशभागा हरीतकी ॥
एकादश चित्रकस्य अजमोदा च द्वादश ॥१२७॥
गुडश्च सर्वद्विगुणो गुटिकां कारयेद्दृढाम् ॥
हन्यादनेकवातांश्च हर्ष चैव चतुर्दश ॥१२८॥
अष्टादशैव गुल्मानि प्रमेहान् विंशतिस्तथा ॥
हृद्रोगशूलकुष्टानि वातगुल्मं गलग्रहम् ॥१२९॥
श्वासं च ग्रहणीपांडुनमिमान्द्यारुची तथा ॥
धन्वंतरिकृतो योगो निजपुत्रस्य हेतवे ॥१३०॥

हींग एक भाग, वच दो भाग, वायविडंग तीन भाग, सेंधा नमक चार भाग ॥ १२५ ॥ जीरा पाँच भाग, सौंठ छ भाग, काली मिर्च सात भाग, पीपर आठ भाग ॥ १२६ ॥ कूट नौ भाग, हर्र दश भाग, चीता ग्यारह भाग, अजमोदा बारह भाग ॥ १२७ ॥ इन सब औषधियों से दूना गुड लेके उसमें मिलाय साढ़े सात टंक (३० माशा) प्रमाण की गोलियां बनावे सो अनेक वातरोग और चौदह प्रकार के हर्ष रोग को नाश करती हैं ॥ १२८ ॥ तथा अठारह प्रकार के गुल्म रोग, बीस प्रमेह, और हृदय रोग, शूल, कुष्ठरोग, वातविकार, गुल्मरोग, गलग्रह ॥ १२९ ॥ श्वास, संग्रहणी, पांडुरोग, अग्नि की मन्दता, अरुचि, इन सबको हरता है, यह योग अपने पुत्र के निमित्त धन्वन्तरि भगवान् ने कथन किया है ॥ १३० ॥

अरलु गुटिका ।

अरलू बिल्वजं वाम्रं कपित्थं च रसांजनम् ।
लाक्षां हरिद्रां ह्रीवेरं स्योनाकं कट्फलं तथा ॥१३१॥
लोध्रं मोचरसं शृंगी धातकी च वटांकुरान् ॥
पिष्ट्वा तदुलतोयेन गुटिकां चाक्षसम्मिताम् ॥१३२॥
छायाशुष्कां पिवेत्क्षिप्रं ज्वरातीसार शान्तये ॥
रक्तपित्तप्रशनी ग्रहणी शूलनाशिनी ॥१३३॥

अरलू की छाल, बेल की गूदी, जामुन और आम की छाल, कैथ, रसौत, लाख, हल्दी, हाऊबेर, नेत्रवाला, कायफल ॥ १३१ ॥ लोध, मोचरस, अदरख अथवा सोंठ, धाय के फूल, वट वृक्ष के अंकुर, इन सबको चावलों के जल से पीस कर बहेडे के बराबर गोलियाँ बनावे ॥ १३२ ॥ छाया में सुखाय साठी चावल के जल के सँग पीवे तो ज्वर और अतीसार रोग शीघ्र शान्त हो जाता है यह गोलियां रक्तपित्त विकार को हरने वाली और संग्रहणी तथा शूल को नाश करने वाली होती हैं ॥ १३३ ॥

ग्रहणीकपाट गुटिका ।

चातुर्जातकचव्यजीरकयुगं व्योपारलूग्रन्थिकं
श्रीवृक्षातिविषाजमोदयुगलं चूतास्थिपाठांवुदम् ॥
यष्ठी चेन्द्रयवाम्लकास्थिकवचालोध्रं समंगारजः
कुर्यान्मोचरसान्वितं समजयेद्धासावनोतद्गुडान् ॥१३४॥
आवन्ध्यग्रहणीकपाटवटिकाश्चाक्षप्रमाणा भजेत्
साध्मानग्रहणीविकाररुधिरातीसारविच्छित्तये ॥१३५॥

चातुर्जात (नागकेशर, तज, तेजपात, इलायची) चव्य, स्याह सफेद दोनों जीरे, सोंठ, पीपर, मिर्च, अरलू की छाल, पिपलामूल, बेल की गूदी, अतीस, अंजमोद, अजवायन, आम की गुठली, पाढ, मोथा मुलहठी, इन्द्र जौ, इमली के बीज, बच, लोध, मजीठ, मोचरस इन सब औषधियों को बराबर लेके सबके बराबर गुड़ में मिला कर बहेडे के बराबर गोलियां बनावे ॥ १३४ ॥ यह बहेडे के प्रमाण बनी हुई गोलियाँ (ग्रहणीकपाट वटी) आध्मान सहित पेट फूलने

समेत अथवा पकी हुई संग्रहणी और रुधिर के दस्त इन रोगों को नाश करने वाली जानना ॥ १३५ ॥

एलादि गुटिका।

एलात्वक्पत्रकं द्राक्षा पिप्पल्यर्धपलं तथा ॥
सितामधुकखर्जूरमृद्वीकाश्च पलोन्मिन्ताः ॥ १३६ ॥
संचूर्ण्य मधुना कुर्याद्गुटिकां चाक्षसम्मिताम् ॥
कासं श्वासं ज्वरं हिक्कां छर्दिं मुर्च्छां मतिभ्रमम् ॥१३७॥
रक्तष्ठीवं पार्श्वशूलं स्वरभेदं क्षतक्षयम् ॥
गुटिका तर्पणी वृष्या रक्तपित्तं च नाशयेत् ॥ १३८ ॥

इलायची छोटी, तज, पत्रज, दाख, पीपर, ये आधा आधा पल अर्थात् आठ आठ टंक भर लेवे और मिश्री, मुलहठी, छुहारे, मुनक्का, ये एक एक पल (१६।१६ टंक) प्रमाण लेवे ॥ १३६ ॥ इन औषधियों का चूर्ण बनाय शहत के साथ बहेड़े बराबर गोलियां बनावे तो खांसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, वमन, मूर्च्छा, बुद्धिभ्रम ॥ १३७ ॥ मुख से रुधिर गिरना, कुक्षिपीड़ा, स्वरभेद, घाव, क्षयरोग और रक्तपित्त इन रोगों को नाश करने वाली यह गोलियाँ तर्पणी (तृप्त करने वाली) और वृष्या (बल बढ़ाने वाली) हैं ॥ १३८ ॥

तालीसादि गुटिका।

चव्याम्लवेतसकटुत्रिकतिन्तिडीकं
तालीसजीरकतुगादहनैःसमांशैः ॥
चूर्णं गुडप्रमुदितं त्रिसुगन्धयुक्तं
वैस्वर्यपीनसकफारुचिपु प्रशस्तम् ॥१३९॥

चव्य, अमलवेत, त्रिकटु, (सोंठ मिर्च पीपर) तिंतिड़ीक, तालीसपत्र, जीरा, वंशलोचन, चीता, तज, पत्रज इन सबको समान भाग लेके चूर्ण कर गुड़ मिलाय गोलियां बनावे तो पीनस, कफ, अरुचि इन रोगों को यह गोलियाँ अच्छा करती हैं ॥ १३९ ॥

लघुकामेश्वर गुटिका ।

शतावरी गोक्षुरश्च कपिकच्छु उटंगणम् ॥
गांगेरुकी वला मुस्ता मुशली क्षुरशाणकम् ॥ १४० ॥
समुद्रशोषो हिज्जल श्चविकं शाल्मली शटी ॥
सकुष्ठश्च जटामांसी वाजिगन्धा च रेणुका ॥ १४१ ॥
जातिपत्रं जातिफलं चातुर्जातं कटुत्रिकम् ॥
कर्पूरगगनं लोहं रससिन्दूरशर्करा ॥ १४२ ॥
विदारी ग्रन्थिकं गुन्दं विडंगं जीरकं सणम् ॥
मांसी शताह्वाधान्याकं विजया तुर्यभागिका ॥१४३॥
गुटी द्विगुणखंडेन वृद्धकोलप्रमाणतः ॥
वीर्यवृद्धिं वलं पुष्टिं कामदीप्तिं करोत्यलम् ॥१४४॥

शतावरी, गोखरू, कौंच के बीज, उटंगन, गंगेरन, खरियरा, मोथा, मूसली, अजवायन खुरासानी ॥ ४० ॥ समुद्रशोष, समुद्रफेन, चव्य, सेमर का मूसला, कचूर, सकूठ (मोथी) जटामासी, असगंध, सँभालू के बीज ॥ १४१ ॥ जावित्री, जायफल, चातुर्जात (इलायची, नागकेशर, तज, तेजपात) त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपर) कपूर, अभ्रक, लोहसार, रससिन्दूर, मिश्री ॥ १४२ ॥ विदारीकन्द, पिपलामूल, मस्तगी, वायविडंग, जीरा, सन के बीज, छड़, सौंफ, धनियां, इन सब से चौथाई भांग ॥ १४३ ॥ और सब औषधियों से दूनी शक्कर मिला कर गोलियां बड़े बेर के बराबर बनावे, इन गोलियों के सेवन से वीर्य की वृद्धि, बल, पुष्टि और कामदेव की प्रबलता होती है ॥ १४४ ॥

स्तंभनगुटी

कंकोल कुंकुमं फेनं मस्तंगी जातिपत्रिका ॥
जातीफलं च कर्पूरं करहाटमुटंगणम् ॥१४५॥
जलादिभिर्विनिर्वर्तां गुटिकां वर्द्धयेद्दलम् ॥
दिनान्ते भक्षयेच्चैकां रेतःस्तम्भकरी मता ॥१४६॥

भृंगराजरसेनेदं कांस्यपात्रेण मर्दयेत् ॥
एषा चन्द्रप्रभा वर्तिश्चक्षुरोगविनाशिनी ॥ १५२ ॥
तोयेन तिमिरं हन्ति मधुना हन्ति पुष्पकम् ॥
अजामूत्रेण रात्र्यन्धं गोमूत्रेण च चिर्पटम् ॥ १५३ ॥

तिल के फूल ८०, पीपल ६०, चमेली की कली ५०, काली मिर्च १६ ॥ १५१ ॥ इनको भंगरा के रस में कांसे के पात्र में रगड़ कर घोंटे यह चन्द्रप्रभा बत्ती नेत्र रोग को नाश करने वाली होती है ॥ १५२ ॥ जल के साथ घिस कर अंजन करने से तिमिर को नाश करती है, शहद के साथ घिस कर आंजने से फूली को काटती है, बकरी के मूत्र में घिस कर आंजने से रतौंधी को दूर करती है, गोमूत्र में घिस कर लगाने से नेत्रों का चिमचिमाहटपन दूर हो जाता है ॥ १५३ ॥

नेत्रस्रावगुटिका।

धात्र्यक्षपथ्याबीजानि एकद्वित्रिगुणानि तु ॥
पिष्ट्वा वर्तिं जलैः कुर्यादंजनं द्विहरेणुकम् ॥
नेत्रस्रावं हरत्याशु वातरक्तरुजं तथा ॥ १५४ ॥

धात्री (आंवला) अक्ष (बहेड़ा) हर्र की मींगी, यह एक दो तीन भाग लेके जल के साथ पीस कर गोलियां बनावे एक गोली को घिस कर नेत्र में अंजन करे तो नेत्रों से पानी बहना बन्द हो जाता है और नेत्रों का वातविकार तथा रुधिर पीड़ा शान्त हो जाती है ॥ १५४ ॥

रात्र्यन्धतानाशिनी गुटिका।

रसांजनं हरिद्रे द्वे मालतीनिंबपल्लवाः ॥
गोशकृद्रससंयुक्ता वर्तिर्नक्तांध्यनाशिनी ॥ १५५ ॥

रसौत, सुरमा, हल्दी, दारुहल्दी, चमेली, नीम के पत्ते इनको लेके गोबर के रस से गोली बना कर नेत्रों में अंजन करे यह गोली रतौंधी को दूर करती है ॥ १५५ ॥

अतिनिद्रानाशिनी गुटिका।

क्षौद्राश्वलालासंघृष्टैर्मरिचैर्नेत्रमंजयेत् ॥
अतिनिद्रा शमं याति तमः सूर्योदये यथा ॥ १५६ ॥

काली मिर्च को तगर और पीपल को जल में पीस कर नेत्रों में अंजन करे तो बहुत नींद का आना नाश हो जाता है जैसे सूर्य नारायण के उदय होने से अन्धकार दूर हो जाता है ॥ १५६ ॥

तंद्रानाशकांजन ।

शिरीषबीजगोमूत्रे कृष्णामरिचसैन्धवम् ॥
अंजनं स्यात्प्रबोधाय सरसोनशिलावचैः ॥ १५७ ॥

सिरस के बीज, पीपर, मिर्च, सेंधा नमक ... को गाय के मूत्र में पीस कर नेत्रों में अंजन करे तो तंद्रा (नींद) का नाश हो जाता है ॥ १५७ ॥

सर्पविषनाशकांजन ।

जयपालभवां मज्जां भावयेन्निम्बुकद्रवैः ॥
एकविंशतिवेलं तु ततो वर्तिं विकल्पयेत् ॥ १५८ ॥
मनुष्यलालया घृष्टां ततो नेत्रे नियोजयेत् ॥
सर्पदंष्ट्राविषं जित्वा संजीवयति मानवम् ॥ १५९ ॥

जमालगोटा की मींगी को नीबू के रस की इक्कीस भावना देके गोलियां बनावे ॥ १५८ ॥ इस गोली को मनुष्य की लार में घिस कर नेत्रों में अंजन करे तो सांप का विष उतर जाता है और मनुष्य जीवित रहता है ॥ १५९ ॥

फूलीनाशकांजन ।

काचं सफेनं कतकं सतुत्थं शंखं शिलारोचनमाक्षिकं च ॥
पुंसः कपालं शिखिकुक्कुटांडमाजन्मजातं कुसुमं निहन्ति ॥ १६० ॥

काच, समुद्रफेन, निर्मली के फल, शुद्ध नीला थोथा, शंख का चूरा, मैनसिल, गोरोचन, सोनामक्खी, मनुष्य की खोपड़ी, मोर और मुरगे का अंडा इन औषधियों को लेके भली भांति अंजन बना कर नेत्रों में अंजन करे तो जन्म की नेत्रफूली को यह अंजन दूर कर देता है ॥ १६० ॥

नयनामृतांजन ।

त्रिफलाभृंगमहौषधिमध्वाज्यच्छागपयसि गोमूत्रे ॥
नागं नवतिनिषिक्तं करोति गरुडोपमं चक्षुः ॥ १६१ ॥
पारदं शीशकं तुल्यं तयोर्द्विगुणमंजनम् ॥
ईषत्कर्पूरसंमिश्रमंजनं नयनामृतम् ॥ १६२ ॥

त्रिफला के काढा में ३० बार, भंगरा के रस में १० बार, सोंठ के काढा में १० बार, शहद में १० बार, घी में १० बार, बकरी के दूध में १० बार, गोमूत्र में १० बार, इस प्रकार नव्वे बार शीशे को बुझा कर नेत्रों में अंजन करे तो गरुड जी के नेत्रों की ज्योति के समान नेत्र ज्योति को यह अंजन करता है ॥ १६१ ॥ तथा पारा शीशा समान भाग लेके दोनों से दूना सुरमा और कुछ थोड़ा कपूर मिलाय अंजन बना देवे यह नयनामृतांजन नेत्रों के निमित्त अमृत के समान हितकारी है ॥ १६२ ॥

श्वानविषनाशिनी गुटिका ।

तुंबीगिरं मालयकंगुहिंगुलं नेपालमध्यं मरिचानि टंकणम् ॥
भागैः समानैर्गुटिका विनिर्मिता विषं शुनो हन्ति सुतप्तवारिणा १६३

कड़ुई तोमड़ी के बीज, चमेली, हिंगुल (सिंगरफ) जमालगोटा की मींगी, काली मिर्च, सोहागा यह सब बराबर लेके गोलियां बनावे और गरम पानी के साथ खाय तो यह गोली कुत्ते के विष को दूर करती है ॥ १६३ ॥

तथाच ।

गुडतैलैश्च दुग्धैश्च लेपः श्वानविषं हरेत् ॥
अपामार्गस्य मूलन्तु कर्षकं मधुना लिहेत् ॥ १६४ ॥
श्वानदंष्ट्रा विषं हन्ति लेपः कुक्कुटविष्ठया ॥
उन्मत्तश्वानदष्टानां कुमारीदलसैन्धवम् ॥
मधु कोष्णं पिबेद्यस्तु त्रिदिनान्ते सुखावहः ॥ १६५ ॥

गुड़ तेल दूध इनका लेप कुत्ते के विष को हरता है, अपामार्ग (औंगा) की जड़ एक कर्ष (४ टंक) प्रमाण लेके कूट पीस शहद में मिला कर चाटे तोभी कुत्ते का विष शान्त हो जाता है ॥ १६४ ॥ कुरजा की बीट का लेप कुत्ते के काटने पर विष को शान्त करता है, बौराये कुत्ते के काटने पर घीग्वार का पाठा और सेंधा नमक शहत और गरम पानी के साथ पीने से मनुष्य तीन दिन उपरान्त अच्छा हो जाता है ॥ १६५ ॥

तथाच ।

आज्येन तंदुलीमूलं तुलसामूलिकापि वा ॥
तंदुलोदकपानेन गुटी श्वानविषापहा ॥ १६६ ॥
तैलं तिलानां पललं गुडं च क्षीरं तथार्कं सममेव पीतम् ॥
अलर्कसक्तं विषमाशु हन्ति सद्योभवं वायुरिवाभ्रवृंदम् ॥१६७॥
छायाशुष्कार्कमूलं च मरिचं कर्षं भक्षयेत् ॥
तद्व्रणं तत्क्षणादेव दहेल्लोकशलाकया ॥१६८॥
चोकमाज्यं मेघनादो देयौ श्वानविषापहौ ॥
अन्येषां सर्वकीटानां विषं हंति चराचरम् ॥१६९॥

घी के साथ चौराई की जड़ को पीवे अथवा तुलसी की जड़ को घी के साथ पीवे चौराई की जड़ और तुलसी की जड़ की गोली बनाय चावलों के जल के साथ पीने से कुत्ते का विष दूर हो जाता है ॥ १६६ ॥ तिलों का तेल, और गुड़ मिला तिलकुट तथा मदार का दूध, इनको बराबर लेकर पीवे तो कुत्ते काटे का विष शीघ्र शान्त हो जाता है जैसे बादलों के समूह वायु शीघ्र उड़ा ले जाता है ॥ १६७ ॥ आक की जड़ को छाया में सुखाय एक कर्ष ४ टंक) प्रमाण मिर्च के साथ भक्षण करे अथवा कुत्ता काटे के घाव को लोहे की सलाक को तपाय उसी समय दाग देवे तो कुत्ते का विष शान्त हो जाता है ॥ १६८ ॥ नीला थोथा, घी, चौराई का रस इनको मिला कर देवे तो कुत्ते का विष दूर होवे, नीला थोथा, घी, और चौराई का रस ये दोनों अन्य चराचर कीड़ों के विष को भी दूर करते हैं ॥ १६९ ॥

कुष्ठरोगनाशक त्रिफलादि गुटिका ।

त्रिफला षोडशपलं भल्लातानां चतुःपलम् ॥

वाकुची पंचपलिका विडंगानां चतुःपलम् ॥१७०॥
हतं लोहं त्रिवृच्चैव गुग्गुलश्च शिलाजतु ॥
एकैकं पलमात्रं स्यात्पलार्धं पौष्करं भवेत् ॥१७१॥
चित्रकस्य पलार्धं स्याद्द्विगुणं मरिचं भवेत् ॥
नागरं पिप्पलीमूलं त्वगेलापत्रकंकुमम् ॥१७२॥
शाणोन्मितं तदेकैकं चूर्णयेत्सर्वमेकतः ॥
ततस्तत्प्रक्षिपेच्चूर्णं पक्वखंडे च तत्समे ॥१७३॥
मोदकान्पलिकान्कृत्वा प्रयुंजीत यथोचितम् ॥१७४॥

त्रिफला १६ पल, भिलावा ४ पल, वकुची ५ पल, वायविडंग ४ पल, ॥ १७० ॥ लोहचूरा, निसोत, गूगल, शिलाजीत, एक एक पल, पोहकरमूल आधा पल ॥ १७१ ॥ चीता आधा पल, मिर्च एक पल, सोंठ, पीपर, तज, इलायची, तेजपात, केशर ॥ १७२ ॥ यह सब एक एक टंक भर लेके सबको इकट्ठी कर चूर्ण बनावे फिर सब चूर्ण के बराबर शक्कर लेके चासनी करे उसमें औषधियों का चूर्ण पका कर ॥ १७३ ॥ एकपल (१६ टंक) प्रमाण के लड्डू बांधे और यथोचित प्रकार से सेवन करे ॥ १७४ ॥

त्रिफलादि गुटिका गुण ।

हन्युः सर्वाणि कुष्ठानि त्रिदोषप्रभवामयान् ॥
शिरोक्षिभ्रूगतान् रोगान्हन्यात्पृष्ठगतानपि ॥१७५॥
भगन्दरप्लीहगुल्मान् जिह्वातालुगलामयान् ॥
प्राग्भोजनस्य देयं स्यादर्धकायस्थिते गदे ॥१७६॥
भेषजं भक्ष्यमध्ये च रोगे जठरसंस्थिते ॥
भोजनस्योपरि ग्राह्यमूर्ध्वजत्रुगदेषु च ॥१७७॥

यह त्रिफलादि मोदक सब प्रकार के कुष्ट रोग को और त्रिदोष से उत्पन्न रोग अर्थात् वात पित्त कफ जनित सन्निपात को तथा शिरोरोग, नेत्ररोग, भौंह और पीठ के रोगों को भी नाश करने वाले हैं ॥ १७५ ॥ एवं भगन्दर, तापतिल्ली, वाय गोला, जीभ, तालु और कंठ रोगों को नाश करते हैं, भोजन से पहले इन लड्डुओं का सेवन करे तो अर्धांग रोग नाश हो जाता है ॥ १७६ ॥ यह औषधी यदि भोजन के मध्य में सेवन करे तो उदर में स्थित रोग नाश हो

जाते हैं, भोजन के अन्त में सेवन करने से कटि आदि के रोग दूर हो जाते हैं ॥ १७७ ॥

संजीवनी गुटिका ॥

विडंगं नागरं कृष्णा पथ्यामलविभीतकौ ॥
वचा गुडूची भल्लातं सविष चात्र योजयेत् ॥१७८॥
एतानि समभागानि गोमूत्रेण च पेषयेत् ॥
गुंजाभा गुटिका कार्या दद्यादार्द्रकजै रसैः ॥१७९॥
एकामजीर्णयुक्तस्य द्वे विषूच्यां च दापयेत् ॥
तिस्रश्च सर्पदष्टस्य चतस्रः सन्निपातिनः ॥
गुटिका जीवनी नाम संजीवयति मानवम् ॥१८०॥

वायविडंग, सोंठ, पीपर, हरं, आंवला, बहेड़ा, वच, गुर्च, भिलावा, विष ॥१७८॥ इन सबको बराबर लेके गाय के मूत्र में खरल कर घुंघुची के बराबर गोलियां बनावे और अदरख के रस के साथ देवे ॥ १७९ ॥ अजीर्ण के रोगी को एक गोली और विषूचिका (हैजा) के रोगी को दो गोली देवे, सांप काटे रोगी को तीन गोली और सन्निपात के रोगी को चार गोली देवे तो यह संजीवनी नाम वाली गुटिका मनुष्य को जीवन दान देती है ॥ १८० ॥

त्रिफला लोहचूर्णं च माक्षिकं मधुयष्टिका ॥
सायमाज्यान्वितं माषं सद्यस्तिमिरनाशनम् ॥१८१॥

त्रिफला, लोहचूरा और शहत, मुलहठी, इनका चूर्ण कर सायंकाल में गाय के घी के संग एक माशा प्रमाण अंजन दोनों नेत्रों में आंजे तो तुरन्त ही तिमिर दूर हो जावे ॥ १८१ ॥

इति श्रीमत्पण्डित सीतारामकृतायां योगचिन्तामणिभाषाटीकायां गुटिकाधिकारो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथक्काथाधिकारोनाम चतुर्थोऽध्यायः प्रारभ्यते ॥ ४ ॥

तत्रादौ क्वाथभेदः ।

रसः कल्को हिमः क्वाथः फाण्टश्चैव स्मृतस्तथा ॥
भेदाः पंच कषायाणां पूर्वे पूर्वे बलाधिकाः ॥१॥

रस, कल्क, हिम, क्वाथ, फांट, काढा के ये पांच भेद हैं इनमें पूर्व पूर्व में अधिक बल है जैसे कल्क से रस में अधिक बल है, और हिम से कल्क अधिक बली है, क्वाथ से हिम में अधिक बल है, फांट से क्वाथ में अधिक बल है ॥ १ ॥

पानीयं षोडशगुणं क्षुण्णद्रव्यपले क्षिपेत् ॥
मृत्पात्रे क्वाथयेद्ग्राह्यमष्टमांशावशेषितम् ॥ २ ॥
तज्जलं पाययेद्धीमान्कोष्णं मृद्वग्निसाधितम् ॥
स्मृतः क्वाथः कषायश्च निर्यूहः स निगद्यते ॥३॥

सोलह गुणे जल में एक पल औषधी डाल मिट्टी के पात्र में काढा पकावे जब आठवां भाग शेष रहे तब उतार लेवे ॥ २ ॥ अनन्तर उस जल को बुद्धमान वैद्य रोगी को पिलावे और जो मन्द मन्द आंच से पकाया जाय उसको क्वाथ, कषाय और निर्यूह कहते हैं ॥ ३ ॥

क्वाथः सप्तविधः प्रोक्तः पाचनः शमनस्तथा ॥
दीपनः शोधनो भेदी संतर्पणविशोषणौ ॥ ४ ॥
पाचनः पच्यते दोषान् दीपनो दीप्यतेऽनलम् ॥
शोधनो मलशोधी स्याच्छमनः शमते गदान् ॥ ५ ॥

तर्पणस्तर्प्यते धातून् भेदी चोत्क्लेदकारकः ॥
विशोषी शोषमाधत्ते तस्माद्गुणां परीक्षयेत् ॥ ६ ॥

क्वाथ नामक काढ़ा सात प्रकार का कहा है पाचन, शमन, दीपन, शोधन, भेदी, संतर्पण, विशोषण ॥ ४ ॥ पाचन नाम काढ़ा दोषों को पचाता है, दीपन नामक काढ़ा जठराग्नि को प्रदीप्त करता है, शोधन नाम काढ़ा मल को शुद्ध कर देता है, तथा शमन नाम का काढ़ा रोगों को शान्त करता है ॥ ५ ॥ संतर्पण नामक काढ़ा धातुओं को बढ़ाता है, भेदी नामक काढ़ा उत्क्लेद करता है, विशोषण नाम काढ़ा शोषण करता है इस कारण गरम जल को परीक्षा कर लेवे ॥ ६ ॥

पाचनोऽर्द्धविशेषी स्यात् शोधनो द्वादशांशकः ॥
भेदी च चतुरंशश्च शमनश्चाष्टशेषतः ॥ ७ ॥
दीपनीयो दशांशश्च तर्पणश्च षडंशकः ॥
विशोषी षोडशांशश्च क्वाथभेदाः प्रकीर्तिताः ॥ ८ ॥

जब आधा जल शेष रहे उसे पाचन काढ़ा कहते हैं, बारहवां भाग शेष रहे उसे शोधन कहते हैं और चौथाई शेष रहे उसे भेदी कहते हैं, तथा आठवां भाग शेष रहे उसे शमन कहते हैं ॥ ७ ॥ दशवां भाग शेष रहे उसे दीपन कहते हैं, छठा भाग शेष रहे उसे संतर्पण कहते हैं, सोलहवां भाग शेष रहे उसे विशोषण कहते हैं क्वाथ (काढ़ा) के यह भेद कहे हैं ॥ ८ ॥

रास्नादिक्वाथ सर्ववातरोग पर ।

रास्ना गुडूची एरण्डं देवाह्वा चाभया शटी ॥
बलोग्रगंधा पाठा च शतपुष्पा पुनर्नवा ॥ ९ ॥
पंचमूली विषा मुंडी सर्षपश्च दुरालभा ॥
यवानी पुष्करं मूलमश्वगन्धा प्रसारिणी ॥ १० ॥
गोक्षुरं चान्द्ररूपं च हवुषा वृद्धदारुकम् ॥
शतावरी तथा ब्राह्मी गुग्गुलुः क्षीरकंचुकी ॥ ११ ॥
समभागैश्चतैः सर्वैः कषायमुपकल्पयेत् ॥ १२ ॥

रासनि, गुर्च, अंडी की जड़, देवदारु, हर्र, कचूर, चरियरा, बच, पाढ़, सौंफ, साठी, की जड़ ॥ ९ ॥ पंचमूल (बेल, अरणी, पाडर कंभार अरलू इनकी जड) विषा (अतीस) मुंडीबूटी, सरसों, जवासा, अजवायन, पुहकरमूल, असगन्ध, लाजवंती ॥ १० ॥ गोखरु, अडूसा, छाऊबेर, विधारा, सतावार, ब्राह्मी, गुगल, क्षीरकन्द ॥ ११ ॥ इन सब औषधियों को बराबर लेके काढ़ा बनावे ॥ १२ ॥

वातरोगेषु सर्वेषु कंपे शोफे प्रतानके ॥
मन्यास्तंभे तथा शोषे पक्षाघाते सुदारुणे ॥१३॥
अर्दिताक्षेपकुब्जेषु हनुग्रहस्वरग्रहे ॥
आध्यवाते तथा शूले खंजे चैवापबाहुके ॥१४॥
गृध्रस्यां जानुभेदे च गुल्मशूले कटिग्रहे ॥
सामे चैव निरामे च सप्तधातुगतानिले ॥१५॥
आवृतेऽनावृते चैव वातरक्ते विशेषतः ॥
एष द्वात्रिंशकः क्वाथः कृष्णात्रेयेण भाषितः ॥१६॥
कृष्णाचूर्णेन वा योगो राजगुलुनाऽथवा ॥
अजमोदादिना वापि तैलेनैरण्डजेन वा ॥१७॥

सब वात रोगों में, कंपवात में, शोथ रोग में, प्रतानक वात में, जावडा-स्तंभ में, तथा सुखसूखने में झोला और बहुत दर्द में ॥ १३ ॥ पीड़ा से व्याकुल होने में, कुबड़ेपन में, हनुग्रह और स्वरभंग में सर्वांगवात में तथा झुकता में खंज रोग और बाहु पीडा में ॥ १४ ॥ गृध्रसीरोग, जानुभेद में और गुल्मशूल, कटिशूल तथा आमविकार, सात धातुओं के वातविकार में ॥ १५ ॥ तथा आवृत, अनावृत, वातरक्त में यह बत्तीस औषधियों का काढ़ा कृष्णात्रेयजी ने कथन किया है ॥ १६ ॥ पीपर के चूर्ण के साथ अथवा योग राज गूगल के साथ वा अजमोदादि चूर्ण के साथ किंवा अंडी के तेल के साथ यह काढ़ा सेवन करे तो पूर्वोक्त सब रोगों का नाश होवे ॥ १७ ॥

लघुरास्नादि क्वाथ ।

रास्ना गुडूची वातारिदेवदारुमहौषधैः ॥
पिबेत्सर्वांगके वाते साममज्जास्थिसन्धिगे ॥१८॥

रासनि, गिलोय, अंडी का तेल, देवदारु, सोंठ, इनका काढ़ा बना कर पीवे तो आम, मज्जा, हड्डी तथा संधियों में प्राप्त सर्वांग वातरोग नाश हो जाता है ॥ १८ ॥

सन्निपात लक्षण ।

यदि कथमपि पुंसां जायते कर्णपीडा
भ्रममदपरितापो मोहवैकल्यभावम् ॥
विकलनयनहास्यो गीतनृत्यप्रलापान्
विदधति तमसाध्यं कंपचित्तभ्रमाख्यम् ॥१९॥
उत्तिष्ठति बलात्कारं कृत्वा ब्रूते यदिच्छया ॥
यामीति वदते नित्यं स त्याज्यो भिषगुत्तमैः ॥२०॥

जो किसी प्रकार से भी मनुष्य के कानों में पीड़ा होने लगे, चित्तभ्रम हो जाय, नशा सा चढ़ने लगे, ताप बहुत हो, मोह बढ़ जाय, विकलता होवे, नेत्रों में व्याकुलता हो, हँसने, गाने और नाचने लगे, बकवाद करे, तो उसे कंप और चित्तभ्रम नामक असाध्य सन्निपात रोगी कहना चाहिये ॥ १९ ॥ तथा जो रोगी बलात्कार उठने लगे और जो इच्छा हो सो बकने लगे, तथा बार बार मैं जाता हूं ऐसा कहने लगे उस रोगी को अच्छा वैद्य त्याग कर देवे अर्थात् उसको औषधि देना वृथा है ॥ २० ॥

हरीतक्यादि क्वाथ सन्निपातपर ।

पथ्यापर्पटकटुकामृद्वीकादारुजलदभूनिंबैः ॥
ब्राह्मया पटोलेन समं क्वाथश्चित्तभ्रमं हन्ति ॥२१॥

हर्र, पित्तपापड़ा, कुटकी, दाख, दारुहलदी, मोथा, चिरायता, ब्राह्मी, पटोलपत्र इनको बराबर लेके काढ़ा बनाय पीवे तो यह काढ़ा चित्तभ्रम नामक सन्निपात को हरता है ॥ २१ ॥

तथाच ।

तगरतुरगगन्धापर्पटः शंखपुष्पी
त्रिदशविटपतिक्ताभारतीभूतकेशी ॥

जलधरकुतमालश्वेतकीगोस्तनीनां
सह हरति कषायः पक्षपानात्प्रलापम् ॥२२॥

तगर, असगन्ध, पित्तपापड़ा, शंखाहुली, देवदारु, कुटकी, ब्राह्मी, छड़, अमिलतास की गूदी, चेतकी (हर्र) दाख इन सबका काढ़ा एक पाख (१५ दिन) तक पीने से असाध्य सन्निपात दूर हो जाता है ॥ २२ ॥

सन्निपात नाशक यत्न ।

कालीयकेन दशयेद्दाहं दद्यात्करद्वये ॥
ब्रह्मस्थाने शंखयोश्च सन्निपातनिवृत्तये ॥२३॥

सन्निपात को हटाने के निमित्त साँप से डसावे दोनों हाथ के पहुँचों में, माथे के बीच में और कनपटियों पर दाग देवे ॥ २३ ॥

दाहस्थान ।

शंखयोश्च भ्रुवोर्मध्ये दशमद्वार एव च ॥
ग्रीवायां दाहयेच्छीघ्रं प्रलापे सन्निपातके ॥२४॥

प्रलाप नामक सन्निपात में दोनों कनपटी, दोनों भौंह, दशवें द्वार (माथे के बीच में) और ग्रीवा इन स्थानों में तुरन्त दाग देवे ॥ २४ ॥

धनुर्वाते मृगीवाते अंतके चित्तविभ्रमे ॥
अभिन्यासे च उन्मादे निश्चेतन्ये तथा वमौ ॥२५॥
एतेषां चैव रोगाणां तप्तलोहशलाकया ॥
भ्रुवौ शंखौ च पादौ च कृकाटीमूलरन्ध्रयोः ॥२६॥

धनु नामक वात, मृगी नामक वात, अंतक, चित्तभ्रम, अभिन्यास, उन्माद, अचेतना अर्थात् मूर्च्छा और वमन ॥ २५ ॥ इन रोगों के होने पर लोहे की शलाका तपा कर उससे दोनों भौंह, दोनों कनपटी, पाँव, कंठ और गुदा स्थान में दागे ॥२६॥

नेत्ररोगे ह्यपस्मारे भ्रुवौ शंखौ च दाहयेत् ॥
कामले पांडुरोगे च कृकाटीमूल आदहेत् ॥२७॥

पादरोगेषु सर्वेषु गुल्फोर्ध्वं चतुरंगुलम् ॥
तिर्यग्दाहं प्रकुर्वीत दृष्ट्वा पादशिरो दहेत् ॥२८॥
हृदयोदरपीडायां दाहयेत् हृदयोदरे ॥
यत्र पीडाश्च जायन्ते तत्र तत्र च दाहयेत् ॥२९॥

आँखों के रोग में और कुबी रोग में आँख तीर कनपटी पर दागे, कामला रोग और पांडुरोग में कंठ की मूल पर दागे ॥ २७ ॥ तथा सब प्रकार के चरण रोगों में गुल्फ के ऊपर ४ अंगुल दाग देवे, तिरछा दाग देवे चरण का शिर देख कर दाग देवे ॥ २८ ॥ हृदय और पेट की पीड़ा में हृदय और पेट पर दागे, जहां पीड़ा हो वहां वहां दागे ॥ २९ ॥

भार्ङ्गीभूनिंबनिंबैर्घनपटुकवचाव्योपवासाविशाला
रास्नाऽनन्ता पटोली सुरतरुरजनी पाटलाटिंटुकीभिः ॥
ब्राह्मी दार्वी गुडूची त्रिवृतअतिविषा पुष्करं त्राहिमाणं
व्याघ्री सिंही कलिंगी त्रिफलशटियुत कल्पितस्तुल्यभागः॥३०॥

भारंगी, भूनिंब (चिरायता) नीम की छाल, नागरमोथा, कुटकी, वच, त्रिकटु, अडूसा, इन्द्रायन, रास्नि, जवासा, पटोलपत्र, देवदारु, हलदी, पाढला (अरलु) जलसिरस, ब्राह्मी, दारुहलदी, गुर्च, निसोथ, अतीस, पुहकरमूल, त्रायमान, भटकटैया, ककरासिंगी, इन्द्र जौ, त्रिफला, कचूर इन सबको समान भाग लेके काढ़ा बनावे ॥ ३० ॥

क्वाथो द्वात्रिंशनामा त्रिकलितदशकान् सन्निपातान्निहंति
शूलं श्वासं च हिक्कां कसनगुदरुजाध्मानविध्वंसकः स्यात् ॥
मन्यास्तंभांत्रवृद्धिं गदगलमरुचिं सर्वसंधिग्रहांश्च
मातंगौघं निहन्यान्मृगारिपुरधिकं रोगजालं तथैव ॥३१॥

यह बत्तीस औषधियों का 'द्वात्रिंश नाम वाला' काढ़ा तेरह प्रकार के सन्निपातों को हरता है और शूल, श्वास, हिचकी, खाँसी, गुदा के रोग, अफरा, इन रोगों को भी नाश करता है, तथा आंतों का बढ़ना, कंठरोग, अरुचि, सब संधियों की पीड़ा इन रोगों को यह काढ़ा इस प्रकार नाश करता है जिस प्रकार हाथियों के समूह को सिंह भगा देता है ॥ ३१ ॥

मञ्जिष्ठादिक्वाथ रुधिरविकार पर ।

मंजिष्ठा पिचुमन्दचन्दनघनच्छिन्ना गवाक्षी वृषा
त्रायंती त्रिवृता शताह्निरजनी भूनिंबपाठाविषा ॥
गायत्री त्रिफला पटोलकुटकी कीटद्विपापर्पटै-
रुग्रावल्गुजवासवत्सकयुतैः क्वाथं विदध्याद्भिषक् ॥३२॥
कंडूमंडलपुंडरीककिटिभिः पामाविचर्चिव्रणैः
सिध्मश्वित्रकिलासदद्रुरसकैर्व्याप्ता प्रसुप्तत्वचः ॥
किंचान्यत्क्रिमिभिर्विशीर्णगलितघ्राणांघ्रिपायूद्भवा-
नेनं प्राप्य महाकषायमचिरात् पंचेषु तुल्या नराः ॥३३॥

मजीठ, पिचुमन्द, (नीम की छाल लाल) चन्दन, नागरमोथा, गुर्च, इन्द्र जौ, अडूसा, त्रायमाण, निसोथ, धमासा, दोनों हलदी, (हलदी दारुहलदी) चिरायता, पाढ़, अतीस, खैरसार, त्रिफला, पटोलपत्र, कुटकी, वायविडंग, पित्तपापड़ा, वच, बावची, जवासा, कुड़े की छाल इन सब औषधियों का काढ़ा बनाय कर वैद्य जन रोगी को देवें ॥३२॥ इस काढ़ा के सेवन से खुजली, चकत्ता, सफेद दाग हों कमर में खुजली हो और विचर्चिका, घाव, फोड़ा, दाद आदि, खाल सुन्न हो गई हो अन्य कीड़ों से उत्पन्न हुए रोगों को तथा नासिका रोग, चरणरोग, गुद रोग को यह काढ़ा दूर कर देता है, इस काढ़े से मनुष्यों के अनेक रोग नाश हो जाते हैं ॥ ३३ ॥

अथवा ।

मंजिष्ठा कुटजामृताघनवचा शुंठी हरिद्राद्वयं
क्षुद्रा रिष्टपटोलकुष्ठकुटकीभार्ङ्गीविडंगान्वितम् ॥
मूर्वा दारुकलिंगभृंगमगधा त्रायंति पाठा वरी
गायत्री त्रिफलाकिरातकमहानिंबासनारग्वधम् ॥३४॥
श्यामावल्गुजचन्दनं वरुणकं पूतीक शाखोटकं
वासापर्पटसारिवाप्रतिविषानंताविशालाजलम् ॥

मंजिष्ठादिरयं कषायविधिना नित्यं पुमान् यः पिबेत्
त्वग्दोषा अचिरेण यांति विलयं कुष्ठानि चाष्टादश ॥३५॥
रक्तवातप्रसुप्तो च विसर्पे विद्रधौ तथा ॥
सर्वेषु वातरोगेषु मंजिष्ठादिः प्रशस्यते ॥३६॥

मजीठ, कुड़ा की छाल, गुर्च, नागरमोथा, वच, सोंठ, हलदी, दारुहलदी, भटकटैया, नीम की छाल, पटोलपत्र, कूट, कुटकी, भारंगी, वायविडंग, मूर्वा (मुरहरी) देव दारु, कलिंग, (इन्द्रयव) भंगरा, पीपर, त्रायमाण, पाढ, शतावरी, खैरसार, त्रिफला, चिरायता, महानिंब (बकायन) आसन (जीरा) आरग्वध (अमिलतास) ॥ ३४ ॥ काला निसोथ, बावची, लाल चन्दन, वरुण की छाल, कंजा, सहोरे की छाल, वासा, पित्तपापड़ा, सरिवा, अतीस, जवासा, विशाला (नेत्रवाला) इन मजीठ आदि औषधियों का काढ़ा बना कर जो मनुष्य नित्य विधि से पीवे तो त्वचा के समस्त रोग और अठारह प्रकार के कुष्ठ रोग शीघ्र नाश हो जाते हैं ॥ ३५ ॥ रक्तवात, सुप्तवायु, विसर्प, विद्रधि तथा सब प्रकार के वातरोगों में मजीठ आदि काढ़ा हितकारी है ॥ ३६ ॥

तथा च वातविकार पर ।

मंजिष्ठा त्रिफला प्रियंगुरमृता ब्राह्मीवचापौष्करं
भृंगास्यस्त्रिकटुः किरातकविषा निर्गुण्डिकारग्वधः ॥
त्रायंती खदिरं कटुत्वचवृकी पीताद्वयं रोहिणी
तिक्ता पर्पटवासकेन्द्रफलिनीऽनंताविशालागदम् ॥३७॥
एरंडं पिचुमन्दचित्रकवरीभार्ङ्गी मलेन्द्रं शटी
विल्वं निंबमजुलपाडलत्रिवृत्तेजस्विनी शालकम् ॥
दंतीमूलपलाशचन्दनयुगं मुंडी विडंगान्वितै-
रक्षैयो ररणीकरंजधवयोः पर्णानि मूलानि च ॥३८॥
क्षुद्राह्वयाढ्यदेवदारुजलदाकाल्हारकं कल्कज-
मेभिः सिद्धमिदं पटोलसहितः क्वाथश्चतुःषष्टिकः ॥
अष्टांशेन विपाचयेच्च मतिमानुत्कल्पमुद्धाजने
पीतो हंति सपित्तरक्तसकलं कुष्ठानि चाष्टादश ॥३९॥

मजीठ, त्रिफला, कागनी के फल, गुर्च, ब्राह्मी, वच, पुष्करमूल, मैनफल, दोनों जीरे, त्रिकुटु, (मिर्च, पीपर, सोंठ,) चिरायता, अतीस, सँभालु, अमिलतास, त्रायमाण, खैरसार, कुड़े की छाल, पाठा दोनों हलदी (हलदी दारु हलदी) रोहिणी, कुटकी, पित्तपापड़ा, अडूसा, इन्द्रायन, जवासा, इन्द्र जौ, कूट ॥ ३७ ॥ अंडी की जड़, नीम की छाल, चीता, शतावरी, भारंगी, मलेन्द्र, (सुगंधित कपूर) कचूर, बेल की गूदी, नीम के पत्ते, छड़, पाडल, निसोथ, मालकाँगनी, नेत्रबाला, दंती की जड़, ढाक की बीज, दोनों चन्दन, (सफेद चन्दन, लाल चन्दन) मुंडी, वायबिडंग, कायफल, अरणी, कंजा, धाय के पत्ते, धाय की जड़ ॥ ३८ ॥ छोटी बड़ी दोनों कटेया, देवदारु, मोथा, कमलगट्टा, पटोलपत्र, इन चौसठ औषधियों का काढ़ा एक मिट्टी के पात्र में पकावे जब आठवाँ भाग रह जाय तब उतार ले और पीवे तो यह मंजीठ आदि ६४ औषधियों का काढ़ा सब प्रकार के रुधिर विकार और अठारह प्रकार के कुष्ठ रोग को दूर करता है ॥ ३९ ॥

खदिरादि क्वाथ ।

खदिरः कुंडली वासा पटोलं च फलत्रिकम् ॥
अरिष्टसमभागोऽयं क्वाथः कुष्ठविनाशकः ॥४०॥

खैरसार, गुर्च, अडूसा, पटोलपत्र, त्रिफला, नीम की छाल इन सब औषधियों को बराबर लेकर काढ़ा बना कर पीवे तो यह काढ़ा कुष्ठ रोग को नाश करने वाला होता है ॥ ४० ॥

भूनिंबादि क्वाथ सन्निपातपर ॥

भूनिंबदारुदशमूलमहौषधाब्द-
तिक्तेन्द्रबीजधनकेभकणाकषायः ॥
तंद्राप्रलापकसनारुचिदाहमोह-
श्वासादियुक्तमखिलं ज्वरमाशु हंति ॥४१॥

चिरायता, देवदारु, दशमूल, सोंठ, जीरा, कुटकी, इन्द्र जौ, नागरमोथा, गजपीपर इन औषधियों को बराबर लेके काढ़ा बना कर पीवे तो तंद्रा (नींद) प्रलाप (बहुत बकना) खांसी, अरुचि, जलन, मूर्च्छा, श्वास आदि सहित सब ज्वर शीघ्र नाश हो जाते हैं ॥ ४१ ॥

दार्व्यादिक्वाथ विषमज्वर पर।

दार्वी दारुकलिंगलोहिकलताशम्पातपाठाशटी-
शौण्डीवीरकिरातकुंजरकणात्रायंतिकापद्मकैः ॥
चक्राधान्यकनागराब्दसरलाशीघ्रांबुसिंहीशिवा-
व्याघ्रीपर्पटदर्भमूलकटुकानन्तामृतापुष्करैः ॥४२॥
एकाहिकं द्व्याहिकं च त्र्याहिकं च चतुर्थकम् ॥
त्रिदोषजनितं यच्च विषमज्वरनाशनम् ॥४३॥

दारुहलदी, देवदारु, इन्द्र जौ, मजीठ, अमिलतास, पाढ़, कचूर, पीपर, खस, चिरायता, गजपीपर, त्रायमाण, पद्माख, ककराशिंगी, धनियाँ, सोंठ, मोथा, निशोथ, पियाबांसा, हर्र, भटकटैया, पित्तपापड़ा, दर्भमूल (कुश की जड़) कुटकी, जवासा, गुर्च, पुहकरमूल ॥ ४२ ॥ इन औषधियों को कूट कर आँच पर चढ़ावे जब आठवाँ भाग काढ़ा रह जाय तब पीवे तो एकतरा, दो दिन में आने वाला तिजारी और चौथिया तथा त्रिदोष से उत्पन्न विषमज्वर नाश हो जाता है ॥ ४३ ॥

अष्टादशांग क्वाथ।

किराततिक्तकामुस्ताधान्येन्द्रयवनागरैः ॥
दशमूलमहादारुगजिपीपलिकायुतैः ॥४४॥
कृतः कषायः पार्श्वार्तिसन्निपातज्वरं जयेत् ॥
कासश्वासवमीहिक्कातन्द्राग्रहणिनाशनः ॥४५॥

चिरायता, कुटकी, मोथा, धनियाँ, इन्द्र जौ, सोंठ, दशमूल, बड़ी पीपर ॥ ४४ ॥ इन औषधियों का काढ़ा बना कर पीने से कुक्षिपीड़ा और सन्निपातज्वर, खाँसी, श्वास, वमन, हिचकी, नींद की प्रबलता, संग्रहणी, इन रोगों का नाश होता है ॥ ४५ ॥

दशमूलक्वाथ सन्निपात और सूतिकादोष पर॥

शालिपर्णी पृष्ठिपर्णी बृहतीद्वयगोक्षुरैः ॥
बिल्वाग्निमंथश्योनाककाश्मरीपाटलायुतैः ॥४६॥

दशमूलमिति ख्यातं क्वथितं तज्जलं पिबेत् ॥
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तं वातश्लेष्महरं परम् ॥४७॥
सन्निपातज्वरं हन्ति सूतिकादोषनाशनः ॥
हृत्कंठग्रहपार्श्वार्तितन्द्रामस्तकशूलहृत् ॥४८॥

शालपर्णी (सरिवन) पृष्ठपर्णी (पिठवन) दोनों कटैया, गोखरू, बेल की गूदी, अरणी काष्ठ, सोनापाठा अथवा अरलू, खंभारी, पाड़र ॥ ४६ ॥ यह प्रसिद्ध दशमूल का काढ़ा बनाय पीपर का चूर्ण मिला कर पीने से वात श्लेष्म रोग दूर हो जाता है ॥ ४७ ॥ और यह काढ़ा सन्निपात ज्वर को दूर करता है, सूतिका दोष को नाश करता है तथा हृदयरोग, कंठ रोग, पसली की पीड़ा, तंद्रा (अधिक नींद) और शिर की पीड़ा को हरता है ॥ ४८ ॥

तथा च-

श्रीपर्णिनीज्वलनमंथवसन्तदूती-
टिंटूकबिल्वमिति तल्लुकपंचमूलम् ॥
व्याघ्रीबृहत्यतिगुहास्वगुहाश्वदंष्ट्रा
ज्येष्ठाद्वयं च गदितं दशमूलमेतत् ॥४९॥

सरिवन, अरणी, वसन्तदूती (माधवी लता) अरलू, बेल, छोटी बड़ी कटैया, गोखरू, खंभारि, पाडर, यह दोनों पंचमूल छोटा बड़ा मिला कर दशमूल कहा गया है ॥ ४९ ॥

पुनर्नवादि क्वाथ वातशोथ पर।

पुनर्नवा निंबपटोलशुंठीतिक्तामृतादार्व्यभयाकषायः ॥
सर्वांगशोफोदरपांडुरोगान्सम्यक् प्रयुक्तः सकलान्निहंति ॥५०॥

अथवा-

पुनर्नवाभयानिम्बदार्वीतिक्तापटोलकैः ॥
गुडूचीनागरयुतैः क्वाथः सर्वांगशोफहा ॥ ५१ ॥
गोमूत्रगुग्गुलयुतं आमशोफोदरापहः ॥

सांठी की जड़ अथवा गदापुर्ना, नींब, पटोलपत्र, सोंठ, कुटकी, गिलोय, दारुहलदी, हर्र इन औषधियों का काढ़ा सब अंगों की सूजन, उदररोग, पांडु-रोग आदि सब रोगों को भली भाँति सेवन करने से दूर करता है ॥ ५० ॥ अथवा सांठी की जड़, हर्र, नीम की छाल, दारुहलदी, कुटकी, पटोलपत्र, गिलोय, सोंठ, इन औषधियों का काढ़ा सब अंगों की सूजन को नाश करता है ॥ ५१ ॥ गाय का मूत्र और गूगल मिला कर पीने से आमवात, सूजन और उदर रोग नाश हो जाता है ॥

कट्फलादि क्वाथ।

कट्फलांबुदभार्ङ्गीभिर्धान्यरोहिषपर्पटैः ॥ ५२ ॥
वचाहरीतकीशृंगीदेवदारुमहौषधैः ॥
क्वाथः कासज्वरं हन्ति श्वासं श्लेष्मगलग्रहान् ॥ ५३ ॥

अथवा।

शृंगीदारुनिशासुराह्वमभयाभार्ङ्गी च विश्वौषधं
मुस्तापर्पटकट्फलं च सवचा कुस्तुम्बरुं कत्तृणम् ॥
क्वाथं क्षौद्रयुतं पिबेत्र कफजे कासे क्षये पीनसे
श्वासे वातयुते ज्वरे च वमने हिक्कासु पित्तामये ॥५४॥

कायफल, नागरमोथा, भारंगी, धनियां, रौहिष (सुगंधित तृण) पित्त-पापड़ा ॥ ५२ ॥ वच, हरीतकी (हर्र) ककरासिंगी, देवदारु, सोंठ इन औष-धियों का काढ़ा खांसी, ज्वर, श्वास, श्लेष्म (कफ) और गलग्रह इन रोगों को नाश करता है ॥ ५३ ॥ अथवा ककरासिंगी, दारुहलदी, देवदारु, हर्र, भारंगी, सोंठ, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, कायफल, धनियां, रौहिष (सुगन्ध तृण) इनका काढ़ा बनाय पीवे यह काढ़ा कफरोग, खांसी, क्षयी, पीनस, श्वास, वात ज्वर, वमन, हिचकी और पित्त, आमवात रोगों में हितकारी है, अर्थात् इन रोगों को नाश करता है ॥ ५४ ॥

गुडुच्यादि क्वाथ कफरोग पर।

धाराधाराधरवृषविषागीरवल्लींदुवल्ली
दार्वीकालीकगलीअरणिकरिकणाकट्फलारिष्टकुष्ठैः ॥

पृथ्वीपृथ्वीकलिसुरतरुश्राकलिंगाकलिंगैः
शिग्रुव्याघ्रीकटुतृणवधूरोहिणीरोहिणीभिः ॥ ५५ ॥
क्वाथश्चैषां कवचरचनापंचकोलानुकूलै-
स्तुल्यैरेभिः कफगदजये सिद्धिकं त्रिंशदार्व्या ॥५६॥

धारा (गुर्च) धाराधर (नागरमोथा) अडूसा, अतीस, हलदी, सोमलता, दारुहलदी, अरणी, बड़ी पीपर, कायफल, नीम की छाल, कूट, पृथ्वी (स्याह जीरा) पृथ्वी (कलौंजी अथवा हींग) कलि (बहेड़ा) देवदारु, वच, इन्द्रजौ, कुडा की छाल, सहिजन, भटकटैया, कचूर, गंधपलाशी, कुटकी, हर्र ॥ ५५ ॥ और पंचकोल (पीपर, पिपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ) इन तीस औषधियों को बराबर लेके इनका काढ़ा आठवाँ भाग शेष रह जाने पर पीवे यह काढ़ा कफ रोग को जीतता है अर्थात् इस काढ़ा के पीने से कफ रोग नाश हो जाता है ॥ ५६ ॥

लशुनादि क्वाथ वातरोग पर ।

रसोनं पिप्पलीमूलं कुचीलं विश्वभेषजम् ॥
भार्ङ्गी पुष्करमूलं च किरातं कलिहारकम् ॥ ५७ ॥
समांशाष्टावशेषं स्यात्क्वाथं वातविनाशने ॥
धनुर्षं मृगवातं च सन्निपात निवारयेत् ॥ ५८ ॥
त्र्यूषणं च कर्षं च प्रक्षिप्य योजयेद्भिषक् ॥
अशीतिवातजान् रोगान् तांश्च सर्वान् प्रणाशयेत् ॥ ५९ ॥

लशुन, पिपलामूल, शुद्ध कुचला, सोंठ, भारंगी, पुहकरमूल, चिरायता, अकरकरा ॥ ५७ ॥ इनको बराबर लेके काढ़ा चढ़ावे आठवाँ भाग रह जाने पर पीवे, यह काढा वात दोषों को हरता है और धनुपवात, मृगी, तथा सन्निपात रोग को नाश करता है ॥ ५८ ॥ जो काढ़ा बना कर उसमें वैद्य जन ऊपर से आधा कर्ष अर्थात् दो टंक त्र्यूषण (मिर्च पीपर सोंठ) का चूर्ण मिला कर रोगी को देवे तो वात दोष से प्रगट हुए अस्सी प्रकार के वात रोगों को यह काढ़ा नाश करता है ॥ ५९ ॥

त्रिफलादिक्वाथ शिरपीड़ा पर ।

श्रेष्ठानिंबपटोलमुस्तरजनीत्रायन्त हेमामृताः
कृत्वाषड्गुणवारिणा विनिहितं षष्ठांशपीता निशि ॥
भ्रूशंखाक्षिशिरोरुजं बहुविधां कर्णास्य नासागदं
नक्तांध्यं तिमिरं च काच पाटलं दैत्यान् यथा केशवः ॥६०॥

त्रिफला, नींव, पटोलपत्र, नागरमोथा, हलदी, त्रायमाण, चिरायता, गुर्च, इनका काढा छः गुने पानी में औटावे जब छठा भाग रहे तब रात में पीवे यह काढा भौंह, कनपटी, नेत्र, शिर, कान, मुख, और नासिका संबंधी अनेक रोगोंको तथा नेत्र रोगों में रतौंधी, तिमिर, मोतियाबिन्दु, फूली आदि रोगों को इस प्रकार नाश करता है जैसे केशव भगवान् दैत्यों को नाश करते हैं॥ ६०॥

पथ्यादि क्वाथ शिर और नेत्र रोग पर ।

पथ्याक्षधात्रीभूनिम्बैर्निशानिंबामृतायुतैः ॥
कृतः क्वाथः षडंगोऽयं सगुडः शीर्षशूलहा ॥ ६१ ॥
भ्रूकर्णशंखशूलानि तथार्द्धां शिरसो रुजम् ॥
सूर्यावर्तं शंखकं च चक्षुःपीडां व्यपोहति ॥ ६२ ॥

हर्र, बहेड़ा, आंवला, चिरायता, हलदी, नीम की छाल, गुर्च, इन औषधियों का काढ़ा चढ़ावे जब छठा भाग रहे तब उतार कर उस काढ़ा में गुड़ मिला कर पीवे यह काढ़ा शिर की पीड़ा को नाश करता है॥ ६१ ॥ और भौंह, कान, कनपटी की पीड़ा और आधा शीशी, ब्रह्मरन्ध्र संबंधी रोग, कपाल रोग, तथा नेत्र पीड़ा को दूर करता है ॥ ६२ ॥

ज्वर के दश उपद्रव ।

श्वासमूर्च्छारुचिच्छर्दि तृषातीसारहृद्ग्रहाः ॥
हिक्काकासांगभंगश्च ज्वरस्योपद्रवा दश ॥ ६३ ॥

श्वास (दमा) मूर्छा (बेहोशी) अरुचि, वमन, प्यास, अतीसार, (दस्त आना) हृदय ग्रह (छाती में दर्द) हिचकी, खाँसी, अंगों का ऐंठना, ज्वर के ये दश उपद्रब हैं ॥ ६३ ॥

क्षुद्रादि क्वाथ ।

क्षुद्रामृतानागरपुष्कराह्वैः कृतः कषायः कफमारुते च ॥
सश्वासकासारुचिपार्श्वशूले ज्वरे त्रिदोषप्रभवे शुभे च ॥६४॥

कटैया, गुर्च, सोंठ, पुहकरमूल इन औषधियों का काढ़ा कफरोग, वातदोष, श्वास, खाँसी, अरुचि, कोख की पीड़ा, ज्वर और त्रिदोष, (वातपित्तकफ) से उत्पन्न रोगों को हितकारी है अर्थात् इनका काढ़ा पीने से यह सब रोग नाश हो जाते हैं ॥ ६४ ॥

वृहत्क्षुद्रादि क्वाथ ।

क्षुद्रानिम्बपटोलचन्दनघनैस्तिक्तामृतापद्मकै-
र्वासाधान्यकशुण्ठिपुष्करजटाभूनिम्बभाङ्गर्या सह ॥
बीजं कुष्ठधमासकं कृमिरुजं कासं वमिं कामलां
क्वाथं चाष्टविधं ज्वरं कफमरुत्पित्तं सदाहं जयेत् ॥६५॥

कटैया, नींव, पटोलपत्र, लाल चंदन, नागरमोथा, कुटकी, गुर्च, पद्माख, अडूसा, धनियाँ, सोंठ, पुहकरमूल, चिरायता, भारंगी, इन्द्रजौ, धमासा इन सब का काढा कृमिरोग, खाँसी, वमन, कामला, आठ प्रकार का ज्वर, कफ, वात, पित्त और जलन इन सब रोगों को नाश करता है ॥ ६५ ॥

अथवा ।

क्षुद्राधान्यकशुण्ठीभिर्गुडूचीमुस्तपद्मकैः ॥
रक्तचन्दनभूनिम्बपटोलवृषपुष्करैः ॥ ६६ ॥
कटुकेन्द्रयवारिष्टभार्ङ्गीपर्पटकैः समैः ॥
क्वाथं प्रातर्निषेवेत सद्यःशीतज्वरच्छिदम् ॥ ६७ ॥

कटैया, धनियाँ सोंठ, गुर्च, नागरमोथा, पद्माख, लाल चंदन, चिरायता, पटोलपत्र, अडूसा, पुष्करमूल ॥ ६६ ॥ कुटकी, इन्द्रजौ, नींम की छाल, भारंगी, पित्तपापड़ा इन औषधियों को समान भाग लेकर काढ़ा बनाय प्रातःकाल पीवे तो शीघ्र शीत ज्वर का नाश हो जाता है ॥ ६७ ॥

पाचन क्वाथ ।

नागरं देवकाष्ठं च धान्याकं बृहतीद्वयम् ॥
दद्यात्पाचनकं पूर्वं ज्वरिताय हितावहम् ॥ ६८ ॥

नागर (सोंठ) देवदारु, धनियाँ दोनों कटेया, इनका काढ़ा बना कर ज्वर पचने से पहले ज्वर रोगी के निमित्त देवे ॥ ६८ ॥

धान्यपंचक क्वाथ ।

धान्यनागरमुस्तं च वालकं बिल्वमेव च ॥
आमशूलविबन्धघ्नं पाचनं वह्निदीपनम् ॥ ६९ ॥

अथवा ।

धान्यनागरजः क्वाथः पाचनो दीपनस्तथा ॥
एरण्डमूलयुक्तश्च जयेदामानिलव्यथाम् ॥ ७० ॥

धनियाँ, सोंठ, नागरमोथा, नेत्रवाला, वेल की गूदी इन औषधियों का काढ़ा आम शूल और विबंध को नाश करता है और पाचन तथा जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला है ॥ ६९ ॥ अथवा धनियाँ, और सोंठ का काढ़ा पचाता तथा जठराग्नि को प्रदीप्त करता है, इसी काढ़ा को अंडी की जड़ मिला कर बनावे और पीवे तो आम वात पीडा को नाश करता है ॥ ७० ॥

आरग्वधादि पंचक ।

आरग्वधं ग्रंथिकतिक्तमुस्ताहरीतकीभिः क्वथितः कषायः ॥
सामे सशूले कफवातयुक्ते ज्वरे हितो दीपनपाचनश्च ॥७१॥

अमलतास, पिपलामूल, कुटकी, नागरमोथा, हर्र इन पाँचों औषधियों का काढ़ा आमशूल, कफ और वात ज्वर में हितकारी है, जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला और पाचन है ॥ ७१ ॥

पंचभद्र ।

पर्पटाब्दाऽमृताविश्वा कैरातं साधितं जलम् ॥
पंचभद्रमिदं ज्ञेयं वातपित्तज्वरापहम् ॥ ७२ ॥

पित्तपापड़ा, नागरमोथा गिलोय, सोंठ, चिरायता इनको पंचभद्र जानो यह पंचभद्र वात पित्तज्वर नाशक है अर्थात् इन पाँच औषधियों से बना हुआ पंचभद्र नामक काढ़ा पीने से वात पित्तज्वर नाश हो जाता है ॥ ७२

शठ्यादि क्वाथ ।

शटी पुष्करमूलं च भार्ङ्गी शृंगी दुरालभा ॥
गुडूची नागरा पाठा किरातं कटुरोहिणी ॥ ७३ ॥
एष शठ्यादिकः क्वाथः सर्ववातज्वरापहः ॥
कासादिशोफयुक्तेषु दद्यात्सोपद्रवेषु च ॥ ७४ ॥

शटी (कचूर) पुहकरमूल, भारंगी, ककरासिंगी, कटैया, गिलोय, सोंठ, पाढ़, चिरायता, कुटकी ॥ ७३ ॥ यह शटी आदि औषधियों का काढ़ा सब वात ज्वरों को दूर करता है और खाँसी आदि रोग तथा सूजन सहित उपद्रव वाले रोगी को यह शटी आदि काढ़ा देवे ॥ ७४ ॥

बृहत् शठ्यादि क्वाथ ।

शटी पटोला द्विनिशोग्रगन्धा वासा किरातं दशमूलधारा ॥
सहाचरी भार्ङ्गि वरी सशृंगी रास्नेन्द्रबीजं सुरदारुशिग्रुः ॥७५॥
दुरालभा धान्यकशुंठिपाठा सुरेन्द्रकल्कं सहरीतकीभिः ॥
त्रायंतकेन्द्रौ कटुका गदं च कषाय एषां विहितः सवायौ ॥७६॥
श्लेष्मज्वरे कासस्श्वासशूले वाताधिके रोगिणि शीतके च ॥
चिरज्वरे दृष्टिज्वरे मले च नूनं हितोयं सततं शठ्यादि ॥७७॥

कचूर, परवर के पत्ता, हलदी, दारुहलदी, अडूसा, चिरायता, दशमूल, गिलोय, वनमूँग, भारंगी, शतावरि, ककरासिंगी, रासन, इन्द्रजव, देवदारु, सहिजन ॥ ७५ ॥ भटकटैया, धनियाँ, सोंठ, पाढ़, कुडा की छाल, हर्र, त्रायमाण, इन्द्रायन, कुटकी, इन सबका काढ़ा वात विकार में हितकारी है ॥ ७६ ॥ कफज्वर, खाँसी, श्वास, शूल, वात दोष की अधिकता में, शीतरोग में, बहुत पुराने ज्वर में, दृष्टिज्वर में, और मलरोग में यह शटी आदि बड़ा काढ़ा निश्चय करके सदैव हित करने वाला है अर्थात् इस काढ़ा के पीने से ये सब रोग दूर हो जाते हैं ॥ ७७ ॥

पटोलादि क्वाथ ।

पटोलं च गुडूची च मुस्ता चैव धमासकम् ॥
निंबत्वक् पर्पटं तिक्ता भूनिम्बं त्रिफला वृषा ॥
पटोलादिरयं क्वाथो वातज्वरहरः स्मृतः ॥ ७८ ॥

पटोल (परवर के पत्ता) गिलोय, नागरमोथा, जवास, नीम की छाल, पित्तपापड़ा, कुटकी, चिरायता, आँवला, हर्र, वहेड़ा, अडूसा, यह पटोल आदि औषधियों का काढ़ा वातज्वर को दूर करने वाला कहा है ॥ ७८ ॥

मुस्तादि क्वाथ ।

मुस्ता पर्पटकं शुंठी गुडूची सुदुरालभा ॥
कफवातारुचिच्छर्दि दाहशोफज्वरापहम् ॥७९॥

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, सोंठ, गिलोय, जवासा इन औषधियों का काढ़ा कफ, वात, अरुचि, वमन, जलन, सूजन और ज्वर इन रोगों को दूर करता है ॥ ७९ ॥

तथा च ।

मुस्ता गुडूची सह नागरेण वासाजलं पर्पटकं च पथ्या ॥
क्षुद्रा च दुःस्पर्शयुतः कषायः पीतो हितो वातकफज्वरस्य ॥८०॥

नागरमोथा, गिलोय, सोंठ, अडूसा, नेत्रवाला, पित्तपापरा, हर्र, भटकटैया, जवासा, इन सबका काढ़ा पीवे यह काढ़ा वातज्वर और कफज्वर वाले को हित करने वाला है अर्थात् इस मुस्तादि वृहत्काढ़ा के पीने से वात कफ ज्वर दूर हो जाता है ॥ ८० ॥

गुडूच्यादि क्वाथ ।

गुडूची निम्बधान्याकं पद्मकं रक्तचन्दनम् ॥
एष सर्वज्वरं हन्ति गुडूच्यादिस्तु दीपनः ॥ ८१ ॥

गिलोय, नीमकी छाल, धनियां, पद्माख, लालचन्दन यह गुर्च आदि औषधियों का काढ़ा सब ज्वरों को नाश करता है और जठराग्नि को प्रदीप्त करता है ॥ ८१ ॥

वृद्धगुडूच्यादि क्वाथ।

गुडूचीधान्यकोशीरशुण्ठीवालकपर्पटैः॥
बिल्वअतिविषापाठारक्तचन्दनवत्सकैः॥ ८२॥
किरातमुस्तेन्द्रयवैः क्वथितं शिशिरे जले॥
सक्षौद्रं रक्तपित्तघ्नं ज्वरातीसारनाशनम्॥ ८३॥

गिलोय, धनियां, खस, सोंठ, सुगन्ध बाला, पित्तपापड़ा, बेल की गूदी, अतीस, पाढ़, लाल चन्दन, कुडा की छाल॥ ८२॥ चिरायता, नागरमोथा, इन्द्रजौ इन सब द्रव्यों का काढ़ा बनाय ठंढा करके उसमें अच्छा शहत मिला कर पीवे तो रक्तपित्त को और ज्वर तथा अतीसार (दस्तों) को नाश करता है॥ ८३॥

चन्दनादि क्वाथ।

चन्दनं च सुगन्धं च वालकं पित्तपर्पटम्॥
मुस्ता शुण्ठी किरातं च उशीरं पित्तनाशनम्॥ ८४॥

सुगन्धित सफेद चन्दन, सुगन्धबाला, पित्तपापरा, नागरमोथा, सोंठ, चिरायता, खस इन औषधियों का काढ़ा पित्त विकार को नाश करता है॥ ८४॥

बृहन्निम्बादि क्वाथ।

मलयजपिचुविश्वाश्रीफलं पद्मकं च
जलरुहकटुमुस्तासारिवाराहद्रा॥
अतिविषयवयष्टी कल्पितस्तुल्यभागैः
हरति गुरुविबाधांपित्तसन्तापमूर्च्छाम्॥ ८५॥

अच्छा सुगन्धिबाला, सफेद चन्दन, नीम की छाल, सोंठ बेल की गूदी, पद्माख, कमल, कुटकी, नागरमोथा, सरिवा, मुनक्का, अतीस, इन्द्रजौ, मुलहटी इन औषधियों को समान भाग लेकर काढ़ा बनावे यह काढ़ा पित्तजनित पीड़ा और मूर्च्छा रोग को हरता है॥ ८५॥

त्रायमाणादि क्वाथ।

त्रायंती पर्पटोशीरतिक्ताभूनिंबदुस्पृहाः ॥
कषायो मधुसंयुक्तो पित्तज्वरविनाशनः ॥ ८६ ॥

त्रायमाण (बलभद्रा) पित्तपापड़ा, खस, कुटकी, चिरायता, जवासा, इन औषधियों का काढ़ा शहत मिला कर पीने से पित्तज्वर का नाश हो जाता है॥८६॥

वृद्धत्रायमाणादि क्वाथ।

त्रायन्तीन्द्रयवा वासाछिन्नातिक्तापटोलकैः ॥
निम्बदुःस्पर्शभूनिम्बसम्पाकपद्मपर्पटैः ॥
अष्टावशेषितः क्वाथ पित्तश्लेष्मज्वरापहः ॥ ८७ ॥

बलभद्रा, इन्द्रजव, अड़ूसा, गिलोय, कुटकी, परवर के पत्ते, नीम की छाल, जवासा, चिरायता, अमिलतास, कमलगट्टा, पित्तपापड़ा इन औषधियों का काढा चढ़ावे जब आठवाँ भाग जल शेष रह जाय तब उतार कर पीवे यह काढ़ा पित्त और कफज्वर को दूर करता है॥ ८७॥

द्राक्षादि क्वाथ।

द्राक्षाभयापर्पटकाब्दातिक्ता क्वाथं ससम्यक् सफलं विदध्यात् ॥
प्रलापमूर्च्छाभ्रमदाहशोफतृष्णान्विते पित्तभवे ज्वरेऽपि ॥ ८८ ॥

द्राक्षादि काढा कहते हैं दाख, हर्र, पित्त पापड़ा, मोथा, कुटकी इन द्रव्यों का काढ़ा भली भाँति बनाय अमिलतास मिला कर देवे यह काढ़ा प्रलाप, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, सूजन और प्यास सहित पित्तज्वर को नाश करता है॥८८॥

वासादि क्वाथ।

वासाद्राक्षाभयाक्वाथः पीतः सक्षौद्रशर्करः ॥
निहन्ति रक्तपित्तार्तिं कासं श्वासं ज्वरं तथा ॥ ८९ ॥

अड़ूसा, दाख, हर्र इनका काढ़ा शहत और शक्कर मिला कर पीवे तो रक्तपित्त जनित पीड़ा और खाँसी, श्वास तथा ज्वर का नाश हो जाता है॥ ८९॥

तथाच।

वासा क्षुद्रामृता मुस्ता शुंठी धात्री समाच्छिकः ॥
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तो विषमज्वरनाशनः ॥ ९० ॥

अडूसा, कटैया, गुर्च, मोथा, सोंठ, आँवला इनका काढ़ा बनाय शहत और पीपर का चूर्ण मिलाय पीने से विषमज्वर नाश हो जाता है ॥ ९० ॥

अथवा।

पटोलं त्रिफलानिंबद्राक्षासम्पाकवासकैः ॥
क्वाथं सितामधुयुतं पिबेदैकाहिके ज्वरे ॥ ९१ ॥

परवर के पत्ता, आँवला, हर्र, बहेड़ा, नीम की छाल, दाख, अमिलतास, अडूसा इनका काढ़ा मिश्री और शहत मिला कर पीवे तो इकतरा ज्वर जाता रहता है ॥ ९१ ॥

तथाच।

गुडूचीधान्यमुस्ताभिश्चन्दनोशीरनागरैः ॥
कृतं क्वाथं पिबेत्क्षौद्रसितायुक्तं ज्वरातुरः ॥ ९२ ॥
तृतीयज्वरनाशाय तृष्णादाहनिवारणः ॥
पीतो मरीचचूर्णेन तुलसीपत्रजो रसः ॥ ९३ ॥

गुर्च, धनियाँ, नागरमोथा, चंदन, खस, सोंठ इनका काढ़ा ज्वर रोगी पुरुष शहत और मिश्री मिला कर पीवे ॥ ९२ ॥ तथा तिजारी को नाश करने के निमित्त प्यास और जलन को निवारण करने वाला तुलसी के पत्तों का रस मिर्च के चूर्ण को मिला कर पीवे ॥ ९३ ॥

नागरादि क्वाथ।

नागरातिविषामुस्ताभूनिम्बामृतवत्सकैः ॥
सर्वज्वरहरः क्वाथ सर्वातीसारनाशनः ॥ ९४ ॥

सोंठ, अतीस, मोथा, चिरायता, गिलोय, कुडा की छाल, इन औषधियों का

काढ़ा सर्व प्रकार के ज्वरों को दूर करता है और सब प्रकार के दस्तों को बन्द कर देता है ॥ ९४ ॥

वत्सकादि क्वाथ।

सवत्सकः सातिविषः सबिल्वः सोदीच्यमुस्तश्च कृतः कषायः ॥
सामे सशूले च सशोणिते च चिरप्रवृत्ते च हितोऽतिसारे ॥ ९५॥

कुडा की छाल, अतीस, बेल की गूदी, सुगंधवाला, नागरमोथा इनका काढ़ा बना कर आमशूल रुधिर विकार और अतीसार (दस्तों के रोग) में हितकारी है ॥ ९५ ॥

कुटजाष्टक।

कुटजातिविषापाठाधातकीलोध्रमुस्तकैः ॥
ह्रीवेरदाडिमयुतैः कृतः क्वाथः समाक्षिकः ॥९६॥
पेयः मोचरसेनैव कुटजाष्टकसंज्ञकः ॥
अतिसारान् जयेद्दाहं रक्तशूलामदुस्तरान् ॥९७॥

कुडा की छाल, अतीस, पाढ़, धाय के फूल, लोध, नागरमोथा, हाऊबेर, अनार की बकली इनका काढ़ा बनाय शहत डाल कर ॥ ९६ ॥ मोचरस मिलाय पीवे, यह कुटज आदि आठ औषधियों का कुटजाष्टक नामवाला काढ़ा अतिसार (दस्तों) को, दाह को और रक्तशूल तथा कठिन आम रोग को जीत लेता है, अर्थात् ये रोग नाश हो जाते हैं ॥ ९७ ॥

दार्व्यादि क्वाथ।

दार्व्यम्बुदं तिक्तफलत्रिकं च क्षुद्रा पटोलं रजनी सनिंबम् ॥
क्वाथं विदध्याज्ज्वरसन्निपाते निश्चेतने पुंसि विबोधनार्थम् ॥९८

दारुहलदी, नागरमोथा, कुटकी, त्रिफला, भटकटैया, परवल, हलदी, नीम की छाल इनका काढ़ा ज्वर और सन्निपात में और मूर्छित रोगी को चैतन्य करने के अर्थ देवे ॥ ९८ ॥

मोचरसादि क्वाथ।

मोचरसश्च मंजिष्ठा धातकी पद्मकेशरम् ॥
पिष्टैरेतैर्यवागूः स्याद्रक्ताऽतीसारनाशिनी ॥ ९९ ॥

धातकी विश्वपाषाणसालूरमजमोदकम् ।
मुस्तामोचरसं तक्रं सर्वातीसारनाशनम् ॥ १०० ॥

मोचरस, मजीठ, धाय के फूल, कमलकेशर इन औषधियों को पीस कर लपसी बनावे यह लपसी रुधिर विकार से आने वाले दस्तों को बन्द कर देती है ॥ ९९ ॥ तथा धाय के फूल, सोंठ, पाषाणभेद, बेल की गूदी, अजमोद, नागरमोथा, मोचरस इन द्रव्यों को पीस चूर्ण बनाय मठा के साथ पीने से सब प्रकार का अतीसार दूर हो जाता है अर्थात् सब प्रकार के दस्त बंद हो जाते हैं ॥ १०० ॥

हारिद्रज्वरनाशक क्वाथ ।

हारिद्रके हरिद्राभो वर्णमूत्रादिरर्तिमान् ॥
आदौ विरेचनं कृत्वा स्तम्भयेत्तदनन्तरम् ॥ १०१ ॥
शृङ्गैर्यद्वा जलौकाभीरक्तस्रावं तु कारयेत् ॥
त्रायंती मुस्तमधुकाद्राक्षाभूनिम्बवासकैः ॥ १०२ ॥
गुडूचीपिप्पलीमूलनिम्बैः क्वाथं प्रकारयेत् ॥
शीतं मधुयुतं दद्यात् हारिद्रज्वरनाशनम् ॥ १०३ ॥

हारिद्र ज्वर से पीड़ित रोगी के शरीर का रंग और मूत्र हलदी के समान हो जाता है, इस ज्वर में पहले दस्त करावे फिर दस्तों को बन्द कर दे ॥ १०१ ॥ सिंगी अथवा जोंक लगवा कर रुधिर निकलवा देवे और त्रायमाण, नागरमोथा, मुलहठी, मुनक्का, चिरायता, अड्डूसा ॥ १०२ ॥ गुर्च, पिपलामूल, नीम की छाल इन सब द्रव्यों का काढ़ा बनाय शीतल करके शहत डाल कर रोगी को पिलावे तो शीतज्वर नाश हो जाता है ॥ १०३ ॥

तथा ।

कृते क्रियाविधानेऽपि संज्ञा यस्य न जायते ॥
दहेत्तं पादयोर्नाले कृकाटीरन्ध्रमूलयोः ॥ १०४ ॥
शंखयोश्च भ्रुवोर्मध्ये दशमद्वार एवच ॥
ग्रीवायां दम्भयेच्छीघ्रं प्रलापे सन्निपातके ॥ १०५ ॥

वालं च पर्पटं मुस्ता गुडूची धान्यकं शिफा ॥
आरग्वधं निंबछाली तिक्ताऽनन्तहरीतकी ॥ १०६ ॥
द्राक्षा च चन्दनं रक्तं पद्मकं च शतावरीम् ॥
सममात्राकृतः क्वाथो हारिद्रकहरो मतः ॥ १०७ ॥

जिस रोगी के इस प्रकार क्रिया करने से हारिद्रज्वर न उतरे तो दोनों पाँवों के नलों में, कंठ में और गुदा में ॥१०४॥ दोनों कनपटियों में, दोनों भौहों में; तथा दशमद्वार (ब्रह्मरंध्र) अर्थात् कपाल के बीच में, ग्रीवापर दाग देवे, प्रलापक और सन्निपातमें भी शीघ्र इन स्थानों पर दाग देवे ॥ १०५ ॥ नेत्रवाला, पित्त-पापड़ा, नागरमोथा, गुर्च, धनियाँ, कमलगट्टा, अमिलतास, नीम की छाल, कुटकी, जवासा, हरीतकी (हर्र) ॥ १०६ ॥ मुनक्का, लालचंदन, पद्माख, शतावरि, इन सबको बराबर लेके काढ़ा बना कर पीने से हारिद्रकज्वर नाश हो जाता है ॥ १०७ ॥

अथवा।

पुनर्नवानिंबकिरातकं च पटोलिका चापि सतिक्तकं च ॥
निशाम्रता वा खदिरं कणा च हारिद्रकं शाम्यति तत्क्षणाच्च१०८

गदापुरैना, नीम की छाल, चिरायता, पटोलिका, कुटकी, हलदी, गुर्च, खैरसार पीपर इनका काढ़ा शीघ्र हारिद्र ज्वर को नाश करता है ॥१०८॥

रजन्यादिक्वाथकफवात पर।

हरिद्रामुस्तभूनिंबत्रिफलारिष्टवासकम् ॥
कंटकारीद्वयं भार्ङ्गी कटुकं नागरं कणा ॥ १०९ ॥
पटोलं पर्पटं शृंगी देवदारुसरौहिषम् ॥
विधन्विकं बला बिल्वकुम्भकारी हरीतकी ॥ ११० ॥
कट्फलंकटुजं श्यामा सर्वमेकैकभागिकम् ॥
रास्ना भागद्वयं चात्र दत्वा क्वाथं च साधयेत् ॥१११॥

व्योषचूर्णयुतः क्वाथो ज्वरं हन्ति त्रिदोषजम् ॥
त्रयोदश महाघोरान् अन्धकारान् यथा रविः ॥ ११२ ॥
नातः परतरं किंचिदौषधं सन्निपातके ॥
रजन्यादिगणो ह्येष धन्वन्तरिविनिर्मितः ॥ ११३ ॥

हलदी, नागरमोथा, चिरायता, हर्र, बहेड़ा, आँवला, नीम की छाल, अडूसा, दोनों कटैया, भारंगी, कुटकी, सोंठ, पीपर ॥ १०९ ॥ परवर के पत्ते, पित्तपापड़ा, ककरासिंगी, देवदारु, सुगंधितदूब, धनियाँ, वरियरा, बेल की गूदी, पुरनि, हर्र ॥ ११० ॥ कायफल, कुडे की छाल, गुर्च यह सब एक एक भाग अर्थात् बराबर लेवे दो भाग रासनि उसमें मिला कर काढ़ा बनावे ॥ १११ ॥ और सोंठ मिर्च पीपर का चूर्ण उसमें डाल कर काढा को पीवे तो यह काढ़ा तीनों दोषों से उत्पन्न ज्वर को और तेरह प्रकार के महाघोर सन्निपात ज्वरों को इस प्रकार हरता है जैसे सूर्यदेव अन्धकार को हर लेते हैं ॥ ११२ ॥ सन्निपात रोग में इस से बढ़ कर दूसरी औषधी नहीं है, यह रजन्यादि काथ वैद्यराज धन्वन्तरिजी ने कथन किया है ॥ ११३ ॥

फलत्रिकादिक्वाथ कमलवात पर ।

फलत्रिकामृतातिक्तानिम्बकैशतवासकाः ॥
हरिद्रपद्मकं मुस्ताऽपामार्गचन्दनं कणा ॥ ११४ ॥
पटोलं पर्पटं चैषां क्वाथः कमलवातहा ॥
त्रिफला वा रसः क्षौद्रयुक्तो दार्वीरसोऽथवा ॥ ११५ ॥
निंबस्य वा गुडूच्या वा पीत्वा जयति कामलाम् ॥
कटुका सैन्धवं चैव अपामार्गस्य भस्म च ॥ ११६ ॥
श्वेतजीरकसंयुक्ताः कामलायाश्च नाशनाः ॥

हर्र, बहेड़ा, आँवला, गुर्च, कुटकी, नीम की छाल, चिरायता, अडूसा, दोनों हलदी, पद्माख, नागरमोथा, लटजीरा, चन्दन, पीपर ॥ ११४ ॥ परवर के पत्ते, पित्तपापड़ा, इनका काढ़ा कमल वायु रोग को हरता है, त्रिफला का रस अथवा दारुहलदी का रस शहत डाल कर पीनेसे कमल वातरोग जाता रहता है ॥११५॥ नीम का रस अथवा गुर्च का रस शहत डाल कर पीने से कमल वात

जाता रहता है, अथवा कुटकी सेंधा नमक और सफेद जीरा की राख ॥ ११६ ॥ सफेद जीरा के साथ पीने से कामला रोग नाश हो जाता है ॥

एलादिक्वाथ मूत्रकृच्छ्र पर ।

एलामधुकगोकंटरेणुकैरंडवासकैः ॥ ११७ ॥
कृष्णाश्मभेदसहितः क्वाथ एष सुशोधितः ॥
शिलाजतुयुत पेयः शर्कराश्मरिकृच्छ्रहा ॥ ११८ ॥

एला (छोटी इलायची) मुलहटी, सँभालू, अंडे की जड़, अडूसा ॥११७॥ पीपर, पाषाणभेद इन सब द्रव्यों का काढ़ा बना कर उसमें शुद्ध शिलाजीत मिला कर पीने से शर्करा प्रमेह, पथरी और मूत्रकृच्छ्र (सुजाक) रोग का नाश होता है ॥ ११८ ॥

तथाच ।

हरीतकी गोक्षुरराजवृक्षपाषाणभिद्धन्वयवासकानाम् ॥
क्वाथं पिबेन्माक्षिकसंप्रयुक्तं कृच्छ्रे सदाहे सरुजे विबन्धे ॥११९॥
रसांजनं तन्दुलिकस्य मूलं क्षौद्रान्वितं तन्दुलतोयपीतम् ॥
असृग्दरं सर्वभवं निहन्ति श्वासं च भार्ङ्गी सह नागरेण॥१२०॥

हरीतकी (हर्र) गोखरू, अमिलतास, पाषाणभेद, जवासा इन औषधियों का काढ़ा शहत डाल कर पीवे यह काढ़ा जलन और पीडा सहित सुजाक रोग तथा विबन्ध रोग को दूर करता है ॥ ११९ ॥ अथवा रसौत, चौरैया की जड़, इनके काढ़ा में शहत डाल चावलों के जल के साथ पीवे तो सब प्रकार के प्रदर रोग का नाश होवे, भारंगी और सोंठ के साथ पीवे तो श्वास रोग नाश हो जाता है ॥ १२० ॥

अथवा ।

फलत्रिकाऽब्ददार्वीणां विशालायाः शृतं पिबेत् ॥
निशाकल्कयुतं सर्वप्रमेहविनिवृत्तये ॥ १२१ ॥
दार्वी रसांजनं मुस्तं भल्लातः श्रीफलं वृषम ॥

किरातश्च भवेदेषां क्वाथं शीतं समाक्षिकम् ॥
जयेत्सशूलं प्रदरं पीतश्वेतातिदारुणम् ॥ १२२ ॥

आँवला, हर्र, बहेड़ा, मोथा, दारुहलदी, इन्द्रायन इनका काढ़ा हलदी के काढ़ा सहित सब प्रकार के प्रमेह रोग के निवारणार्थ पीवे ॥ १२१ ॥ तथा दारुहलदी, रसौत, मोथा, भिलावा, बेल कीगूदी, अड़ूसा, चिरायता, इनका काढ़ा बनाय शीतल करके उसमें शहत डाल पीने से यह काढ़ा शूल, और पीले सफेद रंग के अति कठिन प्रदर रोग को जीत लेता है अर्थात् इस काढ़ा से शूल और पीला सफेद प्रदर रोग जाता रहता है ॥ १२२ ॥

अथवा ।

पलासरोहीतकमूलपाठाक्वाथं विदध्यात्प्रदरं सपांडौ ॥
पीते सितेऽयं मधुसंप्रयुक्तः प्रसिद्धयोगः शतशोऽनुभूतः ॥१२३॥

ढाक, हरद्वारी कुश की जड़, पाढ इनका काढ़ा बनाय मिश्री और शहत डाल कर पीने को देवे तो पिलिया रोग सहित प्रदर रोग इस काढ़ा के पीने से नाश हो जाता है यह सैकड़ों बार अनुभव किया हुआ प्रसिद्ध काढ़ा है ॥ १२३ ॥

वमननाशक क्वाथ ।

क्वाथो गुडूच्याः समधुः सुशीतः पीतः प्रशान्तिं वमनस्य कुर्यात् ॥
विशमक्षिकानां मधुनाऽवलीढा सचन्दना शर्करयान्वितावा ॥१२४॥
नीरेण सिन्धूत्थरजोऽतिसूक्ष्मं नश्येन्न नूनं विनिहन्ति हिक्काम् ॥
मयूरपिच्छस्यशिखास्यकृष्णा मध्वन्विता वा कटुका सधातु ॥१२५

गुर्च का काढ़ा बनाय ठंढा करके उसमें शहत डाल कर पीवे यह काढ़ा वमन को शान्त करता है, अथवा मक्खी की बीट शहत मिला कर चाटने से, वा चन्दन, शक्कर मिला कर चाटने से वमन की शांति होती है ॥ १२४ ॥ अथवा सेंधा नमक जल के साथ महीन पीस कर पीवे अथवा उसका नास लेवे, तो हिचका नहीं आती है, मोरपंख की चन्द्रिका जला कर शहत डाल कर चाटे, वा कुटक को शहत मिला कर चाटे तो वमन होना बन्द हो जाता है और हिचकी भी नहीं आती है ॥ १२५ ॥

बालरोगनाशक क्वाथ।

बिल्वं सपुष्पाणि च धातकीनां जलं सलोध्रं गजपिप्पलीनाम्॥
क्वाथोऽवलीढो मधुनावमिश्र बालेषु योगो ह्यतिसारितेषु॥१२६॥

बेल की गूदी, धाय के फूल, सुगन्ध वाला, लोध, बड़ी पीपर इनका काढ़ा बनाय शहत मिला कर बालकों को यह योग अतिसार में अर्थात् दस्त आने पर पिलावे तो दस्तों का आना बन्द हो जाता है॥ १२६॥

कासरोग (खांसी) नाशक क्वाथ।

पुष्करं कट्फलं भार्ङ्गी विश्वपिप्पलिसाधितम्॥
पिबेत्क्वाथं कफे चैनं कासे श्वासे च हृद्गदे॥ १२७॥

अथवा—

क्षुद्राकुलत्थावासाभिर्नागरेण च साधितः॥
क्वाथ पुष्करचूर्णाढ्यः श्वासकासौ निवारयेत्॥१२८॥
पानादेव हि पंचानां हिक्कानां नाशनं क्षणात्॥१२९॥

पोहकरमूल, कायफल, भारंगी, सोंठ, पीपर इनका काढ़ा बना कर पीवे यह काढ़ा कफ, खांसी, श्वास और हृदय रोग में हितकारी है॥ १२७॥ अथवा— भटकटैया, कुलथी, अडूसा इनका काढ़ा सोंठ सहित बना कर पोहकरमूल का चूर्ण मिला कर पीवे तो श्वास और खांसी रोग जाता रहता है॥ १२८॥ तथा इस काढ़ा के पीने से पाँचों प्रकार की हिचकी उसी समय बन्द हो जाती हैं॥ १२९॥

प्लीहनाशक क्वाथ।

शरपुङ्खायाः कल्कः पीतस्तक्रेण नाशयत्यचिरात्॥
चिरतरकालसमुत्थं प्लीहानं रूढमतिगाढम्॥ १३०॥

शरफोंका का काढ़ा मठा के साथ पीवे तो बहुत पुराना और अति दारुण तापतिल्ली रोग शीघ्र नाश हो जाता है॥ १३०॥

सर्ववातनाशक शृंग्यादि क्वाथ।

शृंगीरामठरामसेनरजनीरुद्राक्षणिकारोहिणी
रास्नैरण्डरसोनदारुरजनीराजेन्द्रराजैः फलैः ॥
त्रायंतीत्रिवृताहुताशननतानन्तामृतासुव्रता
दंती तुंबरिचित्रतन्दुलत्रुटित्वक्तिक्तनक्तंचरैः ॥१३१॥
वासा वासवबीजवासवखुरा बल्या वरी वल्गुजा
ब्राह्मीब्राह्मणयष्टिवारणकणा विश्वा वयस्था वृषा ॥
मूर्वासात्वककासमूलमगधामुस्ताजमोदाद्वयं
मिश्राआगरचन्दनेन्दुचविकास्फोटायुताकट्फलैः १३२
इत्येतद्दशमूलयुग्निगदितः क्वाथश्चतुःषष्टिकः
शृंगादिर्मथनादिसिंहविषजाशेषामयोन्मूलनम् ॥
पुंसामष्टविधज्वरार्तिशमने मन्दाग्निसन्दीपने
सर्वांगीणसमीरणद्विपघटाशार्दूलवत्त्रासनात् ॥ १३३ ॥

ककरासिंगी, हींग, चिरायता, हलदी, भाँग, सँभालू, हर्र, रासन, एरंड, लहसन, दारुहलदी, अमलतास, पटोलपत्र, त्रायमाण, निसोत, चीता, तगर, जवासा, गुर्च, कपूर, दन्ती, धनिया, वायबिडंग, सफेद इलायचा, तज, कुटकी, गूगल ॥ १३१ ॥ अडूसा, इन्द्रजौ, रूसा, देवदारु, इन्द्रायन, शतावरि, असगंध, भारंगी, मुलहठी, बड़ी पीपर, सोंठ, कंकोल, अतीस, मरोरफली, कालानिसोत, पिपलामूल, पीपर, नागरमोथा, अजमोद, अजवायन, सौंफ, अगर, चन्दन कपूर, चव्य, अफीम, कायफल ॥१३२॥ दशमूल सहित इन सबका काढ़ा बनावे। ६४ औषधियों का यह काढ़ा वर्णन किया है इस काढा के पीने से मनुष्यों का आठ प्रकार का ज्वर नाश हो जाता है और जठराग्नि मन्द हो गई हो तो प्रदीप्त हो जाती है और सर्वांग वात रोग जाता रहता है जिस प्रकार सिंह के भय से हाथियों के झुंड भाग जाते हैं इसी प्रकार यह सिंह समान शृंगी आदि चौसठ औषधियों का काढ़ा संपूर्ण वात रोगों को दूर कर देता है ॥ १३३ ॥

उष्ण जल के गुण।

अष्टमेनांशशेषेण चतुर्थेनार्द्धकेन वा ॥

अथवा क्वथनेनैव सिद्धमुष्णोदकं वदेत् ॥१३४॥
श्लेष्मोष्णवातमेदोघ्नं वस्तिशोधनदीपनम् ॥
कासं श्वासं ज्वरं हन्ति पीतमुष्णोदकं निशि ॥१३५॥
अर्द्धावर्तचतुर्थांशमष्टभागावशेषितम् ॥
अतीसारेषु पानीयमधिकं चाधिकं फलम् ॥१३६॥

जल औट कर आठवाँ भाग शेष रहे, चौथाई रहे, अथवा आधा रहे, वा केवल औटाने ही से सिद्ध हुआ गरम जल कहा है ॥ १३४ ॥ गरम जल कफ, वात और मज्जागत विकार को दूर करता है, वस्ति (नाभि के नीचे मूत्र के आश्रयरूप स्थान) को शोधन करता है, जठराग्नि को प्रदीप्त करता है, रात्रि के समय गरम जल पीवे तो वह जल खांसी, श्वास और ज्वर को नाश कर देता है ॥ १३५ ॥ औट कर आधा रह जाने पर अथवा चौथाई व आठवाँ भाग शेष रह जाने पर अतीसार रोग में पीवे तो वह जल अधिकाधिक फल को देता है अर्थात् आधे से चौथाई में चौथाई से आँठवें भाग में अधिक गुण होता है ॥ १३६ ॥

पंचकोल क्वाथ।

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ॥
पंचकोलमिदं प्रोक्तं दीपनं रुचिकारकम् ॥१३७॥

पीपर, पिपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ यह पंचकोल काढ़ा कहा है यह जठराग्नि को प्रदीप्त करनेवाला और रुचि को बढ़ाता है ॥ १३७ ॥

दशांग क्वाथ।

वासामृतापर्पटश्च निंबभूनिंबआर्द्रकैः ॥
त्रिफलाकुलथिकैः क्वाथः सक्षौद्रश्चाम्लपित्तहा ॥१३८॥

अडूसा, गिलोय, पित्तपापड़ा, नीम की छाल, चिरायता, अदरख, हर्र, बहेड़ा, आंवला, कुलथी इन सब औषधियों का काढ़ा बनाय शहद डाल कर पीने से अम्लपित्त रोग का नाश हो जाता है ॥ १३८ ॥

अम्लपित्तनाशक उपाय ।

ऊर्ध्वगे चाम्लपित्ते तु वमनं कारयेद्भिषक् ॥
अधोगते चाम्लपित्ते विरेचनं प्रदापयेत् ॥१३९॥
निस्तुषयवषृपधात्रीक्वाथस्त्रिसुगन्धमधुयुतः पीतः ॥
अपनयति चाम्लपित्तं यदि भुंक्ते मुद्गयूषेण ॥१४०॥

ऊपर को प्राप्त हुए अम्लपित्त रोग में वैद्य जन वमन करावे और अधोगत (नीचे को गये हुए अम्लपित्त विकार में) वैद्य विरेचन (दस्त आने वाली) औषधी देवे ॥ १३९ ॥ अनन्तर विना भूसी के जौ, अडूसा, आँवला इनका काढ़ा त्रिसुगन्ध (इलायची, तज, तेजपात) और शहत डाल कर पीवे तो अम्लपित्त विकार दूर हो जाता है। मूग की दाल यदि खाय तो शीघ्र रोग जाता रहता है ॥ १४० ॥

तथाच—

फलत्रिकं पटोलं च तिक्ता क्वाथः सितायुतः ॥
पीतः क्षीतकमध्वाक्तो ज्वरच्छर्द्यम्लपित्तजित् ॥१४१॥

अथवा—

सद्राक्षामभयां खादेत्सक्षौद्रां सगुडान्विताम् ॥
अम्लपित्तं जयेज्जन्तुं कासं श्वासं ज्वरं वमिम् ॥१४२॥

हर्र, बहेड़ा, आंवला, परवर के पत्ते, कुटकी, इनका काढ़ा बनाय मिश्री मिला कर पीवे तथा मुलहटी के काढ़ा में शहत डाल कर पीवे तो ज्वर, वमन और अम्लपित्त रोग जाता रहता हैं ॥ १४१ ॥ तथा मुनक्का और हर्र खावे अथवा शहत गुड़ मिला कर खाय तो अम्लपित्त, खाँसी, श्वास, ज्वर और वमन इन रोगों का नाश हो जाता हैं ॥ १४२ ॥

मद्यविकारनाशक क्वाथ ।

मंथः खर्जूरमृद्वीकावृक्षाम्लाम्लकदाडिमैः ॥
परूषकैरामलकैर्युक्तो मद्यविकारनुत् ॥१४३॥

अथवा—

सौवर्चलमजाज्यं च वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् ॥
त्वगेला मरिचार्धं च शर्कराभागयोजितम् ॥१४४॥
हितं लवणमष्टांगं मदात्ययरुजापहम् ॥
पूगे मदे जलं शीतं वस्त्रवातो हितो भवेत् ॥१४५॥
शर्करा भक्षणे देया तक्रं वा शर्करान्वितम् ॥
लवणस्य भक्षणाद्वा पूगीफलमदो व्रजेत् ॥१४६॥

छुहारा, मुनक्का, चूक, अमलवेत, अनार के दाना, फालसा और आँवला इन औषधियों का काढ़ा मदिरा से उत्पन्न विकार को दूर करता है ॥ ६४३ ॥ सोंचर नमक, सफेद जीरा, चूक, अमलवेत, तज, छोटी इलायची, काली मिर्च इन सबसे आधी शक्कर मिला कर ॥ १४४ ॥ आठवाँ भाग सेंधा नमक पीस कर डाले और काढ़ा बनाय पीवे तो नशा से उत्पन्न रोग का नाश हो जाता है और सुपारी से उत्पन्न नशा में वस्त्र से पवन करना और शीतल जल से छींटा देना और पिलाना हितकारी होता है ॥ १४५ ॥ शक्कर अथवा मिश्री खाता रहे अथवा मठा और शक्कर मिला कर पीवे अथवा सेंधा नमक डाल कर मठा पीवे तो सुपारी का नशा उतर जाता है ॥ १४६ ॥

कोद्रवादि मदनाशक यत्न ।

कोद्रवाणां भवेन्मूर्छा देयं क्षीरं सुशीतलम् ॥
सगुडः कूष्मांडरसो हन्ति कोद्रवजं मदम् ॥१४७॥

कोदों की रोटी अथवा कुदई का भात खाने से जो नशा चढ़ जाता है उसको उतारने के निमित्त गाय का शीतल दूध अर्थात् कच्चा दूध पीने को देवे गुड़ मिला हुआ कुम्हड़े का रस कोदों के नशा को दूर कर देता है ॥ १४८ ॥

धत्तूरादि मदनाशक यत्न ।

धत्तूरजमदे दुग्धं शर्करा दधि वाऽथवा ॥

कार्पासमज्जापानाद्वा वृन्ताकफलभक्षणात् ॥
अन्येषु च मदेष्वेव विषेषु वमनं हितम् ॥१४८॥

धतूरा खाने से जो नशा चढ़ जाय तो गाय का कच्चा दूध पीवे अथवा दही शक्कर मिला कर खाय, अथवा कपास की मींगी अर्थात् बिनौर पीस कर पीवे वा कच्चा बैगन खाय तो धतूरे का नशा उतर जाता है, तथा अन्य सब नशों में एवं विष पीने से जो नशा हो उनमें वमन करना हितकारी होता है ॥ १४८ ॥

इति श्रीमत्पण्डितसीतारामकृतायां योगचिन्तामणिभाषाटीकायां
काथाधिकारो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथ

घृताधिकारो नाम पंचमोऽध्यायः प्रारभ्यते ॥ ५ ॥

सर्वोन्मादनाशक—कल्याणघृत ।

विशाला त्रिफला कौंती देवदार्वेलवालुकम् ॥
स्थिरानन्ते हरिद्रे द्वे सारिवे द्वे प्रियंगुका ॥१॥
एलोत्पलैला मंजिष्ठादन्तिदाडिमकेशराः ॥
तालीसपत्रं बृहती मालत्याः कुसुमं नवम् ॥२॥
विडंगं पृष्ठिपर्णी च कुष्ठचन्दनपद्मकम् ॥
अष्टाविंशतिभिः कल्कैरेतैः कर्षसमन्वितैः ॥३॥
चतुर्गुणे जले पक्त्वा घृतप्रस्थं प्रयोजयेत् ॥
चतुर्गुणं गवां क्षीरं क्षिप्त्वा पश्चात्पचेत्पुनः ॥४॥

इन्द्रायन, हर्र, बहेड़ा, आँवला, रेणुका, देवदारु, एलुआ, सरिवन, जवासा, हलदी, दारुहलदी, दोनों सरिवा, प्रियंगु ॥ १ ॥ सफेद इलायची, कमलगट्टा, लाल इलायची, मजीठ, दन्ती, अनारदाना, नागकेशर, तालीसपत्र, दोनों कटैया, चमेली के फूल ॥ २ ॥ वायविडंग, पिठवन, कूट, चन्दन, पद्माख यह अट्ठाईस औषधियाँ एक एक कर्ष अर्थात् चार चार टंक प्रमाण लेकर काढ़ा करने को ॥ ३ ॥ चौगुने जल में औटावे जब चौथाई जल रह जाय तब उसमें एक प्रस्थ (६४) तोला घी डाल देवे और चौगुना गाय का दूध छोड़ देवे जब वह पक जाय तब उसे अच्छे पात्र में रख लेवे ॥ ४ ॥

अपस्मारे ज्वरे कासे शोषे मन्दानले क्षये ॥
वातरक्ते प्रतिश्याये तृतीयकचतुर्थके ॥५॥

वन्ध्यानां पुत्रदं बल्यं विषमेहार्शसां हरम् ॥
भूतोपहतचित्तानां गद्गदानामचेतसाम् ॥६॥
कल्याणकमिदं सर्पिः सर्वोन्मादहरं स्मृतम् ॥७॥

उपरोक्त घी मृगी, ज्वर, खाँसी, सूजन, मन्दाग्नि, क्षयी, वातरक्त, पीनस, तिजारी, चौथिया इन रोगों में हितकारी है ॥ ५ ॥ और वन्ध्या (बाँझ स्त्री) को पुत्र देने वाला, बलकर्ता, विष, प्रमेह और बवासीर रोग को हरने वाला है ॥६॥ एवं भूतोन्माद, मतिभ्रम, तुतलापन और मूर्च्छारोग को दूर करने वाला है यह कल्याण नामक घी सब प्रकार उन्माद रोगों को दूर करने वाला कहा है॥७॥

अथवा—

ब्राह्मीरसवचाकुष्ठशंखपुष्पीभिरेव च ॥
पुराणं मद्यमुन्मादं भूतापस्मारनाशनम् ॥८॥

ब्राह्मीबूटी का रस, वच, कूट, शंखाहुली इन औषधियों को घी में पचा कर सेवन करे तो पुराना नशा और मदिरा का नशा तथा भूतोन्माद रोग नाश हो जाता है ॥ ८ ॥

महाकल्याण घृत।

त्रिकटु त्रिफला मुस्ता विडंगैला निशाद्वयम् ॥
द्वे सारिवे त्रिवृद्दन्तीनन्ता पद्माकवानरी ॥९॥
मंजिष्ठा मधुकं कुष्ठं ब्राह्मी तालीसबिल्वकम् ॥
अष्टवर्गो जीवनीयगणः स्याच्चन्दनद्वयम् ॥ १० ॥
द्राक्षा मधुकपुष्पाणि बला पर्णीचतुष्टयम् ॥
देवदारुशटी पाठा रेणुका जीरकद्वयम् ॥ ११ ॥
अश्वगन्धाऽजमोदा च कटुदाडिमसारकम् ॥
इन्द्रवारुणिका शंखपुष्पी च बृहतीद्वयम् ॥ १२ ॥

चातुर्जातशुभोशीरं शिरसं वालकं तथा ॥
प्रियंगुमालती जातीपुष्पं पुष्करमूलकम् ॥ १३ ॥
विदारी कदलीकन्दमुशली हस्तिपर्णिका ॥
तिविषं त्रपुषीवीजं कौल्येमाल्येलवालुकम् ॥ १४ ॥
एतैरक्षसमैः कल्कैर्घृतप्रस्थं चतुर्गुणम् ॥
क्षीरं च द्विगुणं नीरं तप्त्वा तन्द्राभयाऽग्निना ॥१५॥
प्राप्ते च तप्तसंयुक्ते पचेत्खादेच्च नित्यशः ॥
सर्पिरेतन्नरो नारी पीत्वा कर्षं वृषायते ॥ १६ ॥

सोंठ, मिर्च, पीपर, हर्र, बहेड़ा, आँवला, मोथा, वायविडंग, छोटी इलायची, दोनों सारिवा, निसोत, दंती, जवासा, पखाख, कौंच की बीज ॥ ९ ॥ मजीठ, महुआ, कूट, ब्राह्मीबूटी, तालीसपत्र, बेल की गूदी, अष्टवर्ग (जीवक ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि) जीवनीयगण (मुद्गपर्णी, माषपर्णी, ज्येष्ठीमधु, जीवन्ती, अष्टवर्ग) दोनों चंदन (लाल चन्दन सफेद चन्दन) ॥ १० ॥ दाख, महुआ के फूल, वरियरा, सरिवन, पिठवन, देवदारु, कचूर, पाढ़, रेणुका (मिर्च के आकार सुगन्धित द्रव्य) दोनों जीरे, (स्याह जीरा सफेद जीरा) ॥ ११ ॥ असगंध, अजमोद, कुटकी, अनारदाना, इन्द्रायन की जड़, दोनों कटैया ॥ १२ ॥ चातुर्जात (तज, पत्रज, नागकेशर, इलायची) वंशलोचन, खस, सिरस, सुगन्धवाला, मालकांगनी, चमेली के फूल, जायफल, जावित्री, पुहकरमूल ॥ १३ ॥ विदारीकंद, केलाकंद, मुशली, नेत्रुआ की जड़, अतीस, ककरी के बीज, छड़, एलुआ ॥ १४ ॥ इन सब औषधियों को एक एक अक्षप्रमाण अर्थात् चार चार टंक भर लेकर एक प्रस्थ (६४ तोला) प्रमाण घी में मिला देवे और सबसे चौगुना दूध तथा दूना जल मिलाय अरने कंडों की आँच से पकावे ॥ १५ ॥ जब भली भाँति परिपक्व हो जावे तब उतार कर रख छोड़े फिर उसमें से नित्य प्रति तीन टंक भर पुरुष और चार टंक भर स्त्री पीवे इस घी का सेवन करने वाला बैल के समान बलवान् हो जाता है ॥ १६ ॥

अथवा

सिद्धार्थत्रिकटुक्षपायुगवचामंजिष्ठकारामठ-
श्वेताह्वात्रिफलाकरंजकटुभार्ग्यामाशिरीषामरैः ॥

इत्यष्टादशभिः स्मृतं घृतमिदं गोमूत्रयुक्तं नृणा-
मुन्मादघ्नमपस्मृतिघ्नमगदः स्याद्वस्तमूत्रेण च ॥ १७ ॥

सरसों, सोंठ, मिर्च, पीपर, दोनों हलदी (हलदी दारुहलदी, वच) मजीठ, हींग, सफेद कटैया, त्रिफला, कंजा के बीज, निसोत, मालकागनी के फूल, सिरस के फूल, देवदारु इन अठारह औषधियों को लेके घी और गोमूत्र में औटा कर बस्त (बकरा) के मूत्र के साथ मिला देवे इस औषध से मनुष्यों का उन्माद रोग और मृगी रोग नाश हो जाता है ॥ १७ ॥

या च वन्ध्या भवेन्नारी या च कन्याः प्रसूयते ॥
या चैवास्थिरगर्भा स्यात् या वा जनयते मृतम् ॥१८॥
अल्पायुषं वा जनयेत् या वा शूलान्विता पुनः ॥
ईदृशी जनयेत्पुत्रं तस्या दोषो व्यपोहति ॥ १९ ॥
एतत्कल्याणकं नाम घृतं शम्भुप्रकीर्तितम् ॥
जीवद्वत्सैकवर्णाया घृतं तस्यास्तु गृह्यते ॥ २० ॥

जो स्त्री बांझ होवे और जो कन्याओं को उत्पन्न करती होवे, जिसके गर्भ न ठहरता होवे अथवा जिसके जन्मते ही बालक मर जाता होवे अथवा मरा बालक जनता होवे ॥ १८ ॥ अथवा जन्म होकर थोड़े ही समय जीता होवे, अथवा जो स्त्री पीड़ा युक्त रहती होवे ऐसी स्त्री इस औषध के प्रभाव से पुत्र उत्पन्न करती है उसके सब दोष जाते रहते हैं ॥ १९ ॥ यह कल्याण नामक घी श्री शिवजीने कहा है यहाँ जिसका बछड़ा जीता हो और एक रङ्ग हो ऐसी गाय का घी लेना चाहिये ॥२० ॥

तथाच—

तालीसत्रिफलैलवालुफलिनीसाम्या पृथक्पर्णिनी
दंतीदाडिमदारुचन्दननिशादार्वीविशालोत्पलैः ॥
जातीपुष्करसेणुपद्मकयुतैर्जन्तुघ्नमंजिष्ठका
रुक्सिंहीत्रुटिसारिवाद्वयनतैर्नागेन्द्रपुष्पान्वितैः ॥२१॥

अष्टाविंशतिभिश्चतुर्गुणजलं कल्याणमेभिः शृतं
हन्त्येतच्च चतुर्थकज्वरमुरःकम्पं सवन्ध्यामयम् ॥
आपस्मारगदोदरौ सपवनोन्मादौ सजीर्णज्वरौ
जायेते न पुनः कृतेन हविषा कल्याणकेनामुना ॥२२॥

तालीसपत्र, हर्र, बहेड़ा, आँवला, एलुआ, फूलप्रियंगु, सरिवन, पिठवन, दंती, अनारदाना, देवदारु, चन्दन, हलदी, दारुहलदी, इन्द्रायन, कमलगट्टा, जायफल, पुहकरमूल, रेणुका, पद्माख, वायविडंग, मजीठ, कटैया, इलायची, दोनों सरिवा, जवासा, नागकेशर ॥ २१ ॥ इन अट्ठाईस औषधियों को लेके चौगुने जल में औटावे जब चौथाई जल रह जाय तब उसे घी में पचावे यह घी चौथिया ज्वर और हृदय कंप को हरता है, वन्ध्या रोग को भी दूर करता है अर्थात् इस घी के सेवन से बाँझ स्त्री के पुत्र उत्पन्न होता है, तथा मृगीरोग, वातोन्माद रोग, जीर्णज्वर आदि रोगों को यह घी नष्ट करता है यह कल्याण नामक घी कल्याण वैद्य ने कथन किया है ॥ २२ ॥

बुद्धिवर्द्धक महापैशाचिक घृत ।

जटिलां पूतनां केशीं वरटीं मर्कटीं वचाम् ॥
त्रायमाणां जयां वीरां चोरकं कटुरोहिणीम् ॥ २३ ॥
कायस्थां शूकरां छत्रां सातिछत्रां बलंकषाम् ॥
महापुरुषदत्तां च वयस्थां नाकुलीद्वयम् ॥ २४ ॥
कटंभरां वृश्चिकालीं स्थिरां चाहृत्य तैर्घृतम् ॥
सिद्धं चतुर्थकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥ २५ ॥
महापैशाचिकं नाम घृतमेतद्यथाऽमृतम् ॥
मेधाबुद्धिस्मृतिकरं बालानां चांगवर्द्धनम् ॥ २६ ॥

जटामासी, हर्र, वालछड़, केशर, कैंच के बीज, वच, त्रायमाण, अरणी, खस की जड़, गटोल, कुटकी ॥ २३ ॥ काकोली, वाराहीकंद, सौंफ, तालमखाना, विष्णुक्रांता, गुर्च, ब्राह्मी, दोनों सनाय ॥ २४ ॥ सोनापाठा, आर्कशबेल, सरिवन इन सब औषधियों को लेके घी में सिद्ध करे वह घी चौथिया ज्वर, उन्माद, ग्रहदोष और मृगी रोग को नाश कर देता है ॥ २५ ॥ यह महा पैशाचिक नामक

घी जैसे अमृत होता है वैसे ही बुद्धि और स्मरण शक्ति को उत्पन्न करता है और बालकों के अंगों को बढ़ाने वाला है ॥ २६ ॥

सन्तानिमित्त फलघृत ।

त्रिफला मधुकं कुष्ठं द्वे निशे कटुरोहिणी ॥
विडंगं पिप्पली मुस्ता त्रिशाला कट्फलं वचा ॥२७॥
जमोदा द्वे च काकोल्यौ सारिवे द्वे प्रियंगुका ॥
शतपुष्पाहिंगुरास्ना चन्दनं रक्तचन्दनम् ॥ २८ ॥
जातीपुष्पं तुगाक्षीरी कमलं शर्करा तथा ॥
पुत्रजीवी च दन्ती च कल्कैरेतैश्च कर्षिकैः ॥ २९ ॥
जीवद्वत्सैकवर्णाया घृतप्रस्थं च गोः क्षिपेत् ॥
शतावरीरसश्चापि घृताद्देयश्चतुर्गुणः ॥ ३० ॥
चतुर्गुणेन पयसा पचेदारण्यगोमयैः ॥
सुतिथौ पुष्यनक्षत्रे मृद्भाण्डे ताम्रजेऽथवा ॥ ३१ ॥

हर्र, बहेड़ा, आँवला, मुलहठी, कूट, हलदी, दारुहलदी, कुटकी, वायविडंग, पीपर, नागरमोथा, इन्द्रायन, कायफल, वच, ॥ २७ ॥ अजमोदा, काकोली, क्षीरकाकोली, दोनों सारिवा, मालकाँगनी, सौंफ, हींग, रासन, चन्दन, लाल चन्दन ॥ २८ ॥ जावित्री, वंशलोचन, कमलगट्टा, मिश्री, पतिजिया के बीज की मींगी, जमालगोटा की जड़ इन सब औषधियों को एक एक कर्ष (चार चार टंक) प्रमाण लेवे और काढ़ा करे ॥ २९ ॥ यहाँ जिस गाय का बछड़ा जीता हो और एक ही रंग हो ऐसी गाय का घी एक प्रस्थ (६४ तोला) भर डाले उसमें शतावरि का रस घी से चौगुना डाल कर पचावे ॥ ३० ॥ अनन्तर चौगुने दूध में सबको बिनुआ कंडों की आँच से उत्तम तिथि और पुण्य नक्षत्र में पचा कर उतार लेवे और मिट्टी अथवा ताँबे के निर्मल पात्र में रख लेवे ॥ ३१ ॥

ततः पिबेच्छुभदिने नारी वा पुरुषोऽपि वा ॥
एतत्सर्पिर्नरः पीत्वा स्त्रीषु नित्यं वृषायते ॥ ३२ ॥
पुत्रानुत्पादयेद्वीरान् वन्ध्यापि लभते सुतं ।
अल्पायुषं या जनयेत् या वा शूलान्विता पुनः ॥३३॥

पुत्रं प्राप्नोति सा नारी बुद्धिमन्तं शतायुषम् ॥
या च वन्ध्या भवेन्नारी या च कन्याः प्रसूयते ॥३४॥
या चैवास्थिरगर्भा स्याद्या वा जनयते मृतम् ॥
तादृशी जनयेत्पुत्रं वेदवेदाङ्गपारगम् ॥३५॥
रूपलावण्यसम्पन्नं शतायुर्विगतज्वरम् ॥
जीवद्वत्सैकवर्णाया घृतमत्र प्रशस्यते ॥३६॥
अनुक्तं लक्ष्मणामूलं क्षिपत्यत्र चिकित्सकः ॥
एतत्फलघृतं नाम भारद्वाजेन भाषितम् ॥३७॥

घी सिद्ध हो जाने के अनन्तर शुभ मुहूर्त में अच्छा दिवस हो तब स्त्री अथवा पुरुष इस घी को पीकर नित्य सुखपूर्वक वृषवत् विहार करता है ॥ ३२॥ और वीर पुरुषों को उत्पन्न करता है, वन्ध्या (बाँझ) स्त्री भी इस घी के सेवन से पुत्रवती हो जाती है, जो स्त्री थोड़ी आयु का पुत्र उत्पन्न करती हो अर्थात् जिसके सन्तान थोड़े ही दिन जीती हो, अथवा प्रसव समय जो स्त्री बारंबार पीड़ा से युक्त होती हो ॥ ३३ ॥ वह स्त्री सौ वर्ष के आयुवाले बुद्धिमान् पुत्र को उत्पन्न करती है, और जो स्त्री बाँझ होवे, जो कन्याओं को उत्पन्न करती हो ॥ ३४ ॥ तथा जिस स्त्री के गर्भ न ठहरता हो, अथवा जिसके बालक होकर मर जाता हो, ऐसी स्त्री इस घी के सेवन के प्रभाव से वेद वेदांग के जानने वाले सुन्दर पुत्र को उत्पन्न करे ॥ ३५ ॥ और वह पुत्र रूप लावण्य से सम्पन्न आरोग्यपूर्वक सौ वर्ष पर्यन्त जीवे, परंतु यहाँ जिसका बछड़ा जीता हो और एक रंग हो ऐसी गाय का घी लेवे वही यथोचित फल देता है ॥ ३६ ॥ इस सिद्ध घी में लक्ष्मणा की जड़ डालने को नहीं कही गई सो वैद्यजन इसमें लक्ष्मणा की जड़ भी डाल कर घी को सिद्ध करते हैं, यह फल घृत नाम वाला घी भारद्वाज मुनि ने कहा है ॥ ३७ ॥

तथाच—

सहचरे द्वे त्रिफला गुडूची सपुनर्नवा ॥
शुकनासा हरिद्रे द्वे रास्ना मोदा शतावरी ॥३८॥
कल्कीकृत्य घृतं प्रस्थं पचेत्क्षीरं चतुर्गुणम् ॥
तत्सिद्धं या पिबेन्नारी योनिशूलं निवारयेत् ॥३९॥

पीडिता चलिता या च निःश्रृता निवृता च या ॥
पित्तयोनिश्च विभ्रान्ता षण्ढयोनिश्च या स्मृता ॥४०॥
प्रपद्यन्ते हि ताः स्थानं गर्भं गृह्णन्ति वाऽसकृत् ॥
एतत्पलघृतं नाम योनिदोषहरं परम् ॥४१॥

सहचर दोनों अर्थात् (अडूसा, जवासा) आँवला, हर्र, बहेड़ा, गिलोय, साँठी की जड़, अरलू की छाल, हलदी, दारुहलदी, रासन, अजमोद, शतावरि ॥ ३८॥ इनका काढ़ा कर एक प्रस्थ (६४ तोला) घी में और चौगुने दूध में पचावे उस सिद्ध घी को स्त्री पीये तो यह घी योनि की पीड़ा को निवारण करता है, ॥ ३६ ॥ तथा जिस स्त्री की योनि पीड़ा से युक्त हो, चलायमान हो गई हो, रुधिर बहता हो, विवृता लक्षण से युक्त हो अर्थात् फैल गई हो, पित्त लक्षण वाली हो, विभ्रांत सहित हो अर्थात् डरावनी हो गई हो एवं षण्ढ हो अर्थात् नपुंसक रोग से युक्त हो गई हो ॥ ४० ॥ अथवा जिसकी योनि में नस भीतर हो गई हो, इस घी के सेवन से वह स्त्री इन सब दोषों से रहित होकर गर्भ धारण करने वाली होवे यह फल घृत नाम वाला घी स्त्री की योनि के सब दोषों को हरने वाला है ॥ ४१ ॥

उदररोगनाशक बिन्दुघृत ।

अर्कक्षीरपले द्वे च स्नुहीक्षीरपलानि षट् ॥
पथ्या कम्पिल्लकं श्यामा शम्याकं गिरिकर्णिका ॥४२॥
नीलिनी त्रिवृतारत्नी शंखिनी चित्रकं तथा ॥
वृद्धदारुर्देवदाली दंतिबीजं च शीतला ॥४३॥
हेमक्षीरी च कटुकी विडंगं ग्रंथिकं तथा ॥
एतेषां पलिकैर्भागैर्घृतं प्रस्थं विपाचयेत् ॥४४॥
अथास्यमलिने कोष्ठे बिन्दुमात्रं प्रदापयेत् ॥
यावतोऽस्य पिबेद्बिन्दून् तावद्वारान् विरिच्यते ॥४५॥
कुष्ठं गुल्ममुदावर्तं श्वयथुं सभगन्दरम् ॥
शमयत्युदराण्यष्टौ वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
एतद्बिन्दुघृतं नाम तेनाभ्यक्तो विरिच्यते ॥४६॥

अँदार का दूध दो पल (८ तोला) थूहर का दूध छः पल (२४ तोला) हर्र, कचौला, फूलप्रियंगु, अमलतास, विष्णुक्रांता ॥ ४२ ॥ नील के बीज, निसोत, दंती, शंखाहुली, चीता, विधारा, देवदारु, जमालगोटा, पीला सेहुंड ॥ ४३ ॥ कँच के बीज, कुटकी, वायविडंग, पिपलामूल इन औषधियों को एक एक पल लेवे और एक प्रस्थ (६४) तोला घी में पचावे ॥ ४४ ॥ जिनका कोठा मलीन हो उनको यह घी एक विन्दुमात्र देवे, यह घी जितने बूंद पीवे उतने ही बार दस्त आता है, अर्थात् जितने दस्त कराने हों उतने बूंद घी देवे ॥ ४५ ॥ यह घी कुष्ठरोग, वायगोला, अफरा, सूजन, भगन्दर, आठ प्रकार का उदर रोग, इन रोगों को यह घी इस प्रकार दूर कर देता है जिस प्रकार इन्द्र का वज्र वृक्ष को उखाड़ देता है, यह बिन्दु घृत नाम से प्रसिद्ध घी है इससे विरेचन (दस्त लेने का काम) ठीक होता है ॥ ४६ ॥

व्रणनाशक जात्यादिघृत ।

जातीपत्रपटोलनिंबकटुकादार्वीनिशासारिवा
मंजिष्ठाभयसिक्थरक्तमधुकैर्नक्ताह्वबीजैः समम् ॥
सर्पिः शीघ्रमनेन सूक्ष्मवदनं मर्माश्रिता स्रावणा
गंभीरा सरुजो व्रणाःसुगतिकाःशुद्ध्यंति रोहंति च ॥४७॥

जातीपत्र (चमेली के पत्ता) परवल के पत्ता, नीम की छाल, कुटकी, दारुहलदी, सारिवा, मजीठ, हर्र, गौरीरस, केशर, मुलहठी, कंजा के बीज इन सबको बराबर ले के, घी में सिद्ध करे इस घी के लगाने से छोटे छेद वाले घाव, अथवा गहरे घाव, फोड़ा शीघ्र शुद्ध और रोग रहित हो जाते हैं अर्थात् हर एक तरह के फोड़ा बहुत जल्दी अच्छे हो जाते हैं ॥ ४७ ॥

रुधिरविकारनाशक महातिक्तघृत ।

करंजसप्तच्छदपिप्पलीनां मूलानि कृष्णामधुकाविशाला ॥
यवासकश्चन्दनमुत्पलं च सत्रायमाणा कटुका वचा च ॥४८॥
उशीरपाठेऽतिविषारजन्यौ किराततिक्तं कुटजस्य बीजम् ॥
निंबासनारग्वधमालतीनां पत्राणि मूलानि च कंटकार्याः॥४९॥
शतावरीपद्मकदेवदारुमुस्तानि कालेयककेशराणि ॥
वासा गुडूची नतसारिवे द्वे बला पटोली त्रिफला च मूर्वा॥५०॥

नीपाकदम्बौ धववेतसौ च कर्कोटकं पर्पटकं यवासा ॥
वाराहिकन्दं दमयन्तिका च ब्राह्मी समंगार्षभवालकं च ॥५१॥
एभिः समांसैरथ कार्षिकैश्च घृतस्य प्रस्थं विपचेन्नरस्य ॥
द्रोणं जलस्याकलुषस्य दद्यात्प्रस्थद्वयं चामलकीरसस्य ॥५२॥

कंजा की मींगी, सतोन (जिसके प्रत्येक पत्ते के साथ सात सात पत्ते होते हैं) पिपलामूल, पीपर, मुलहठी, इन्द्रायन की जड़, जवासा, सफेद चन्दन, कमलगट्टा, त्रायमाण, कुटकी, बच ॥४८॥ खस, पाढ़, अतीस, हलदी, दारुहलदी, चिरायता, इन्द्रजौ, कुडा के बीज, विजयसार, अमलतास, चमेली के पत्ता और जड़, कटैया की जड़ ॥ ४६ ॥ शतावरी, पद्माख, देवदारु, नागरमोथा, अगर, नागकेशर, रूसा, गुर्च, तगर, दोनों सारिवा, वरियरा, पटोलपत्र, हर्र, बहेड़ा, आँवला, मूर्वा (मुरहरी) ॥५०॥ गुडहल, कदंब, धाय के फूल, वेत, बाँस, करेल, पित्तपापड़ा, जवासा, वाराहीकंद, केतकी की जड़, ब्राह्मीबूटी, मजीठ, ऋषभ (लहसन के तुल्य पर्वतीय औषध) सुगंधवाला ॥ ५१ ॥ इन सब औषधियों को बराबर बराबर अथवा एक एक कर्ष (तोला तोला) भर लेके एक प्रस्थ (६४ तोला) घी में औटावे और एक द्रोण १६ प्रस्थ जल उसमें डाले फिर दो प्रस्थ आँवले का रस उसमें डाले ॥ ५२ ॥

पक्कं प्रशान्तं गतफेनशब्दं प्रयोजयेत्कुष्ठहरं प्रशस्तम् ॥
तद्रक्तपित्तानिलसन्निपाते विस्फोटदुष्टव्रणविद्रधीनाम् ॥५३॥
किलासकासज्वरगंडमालाग्रन्थ्यर्बुदात्वग्गदवातरक्तम् ॥
घृतं महातिक्तमिदं प्रशस्तं निहन्ति सर्वान् श्वयथून् विचर्चीन्॥५४

जब वह पक जाय उसमें फेन न उठे और शब्द भी न करे शान्त हो जाय तब उसको उतार लेवे और अच्छे पात्र में रख छोड़े यह घी सब कुष्ठ विकारों को दूर कर शरीर को आरोग्य कर देता है और रक्तपित्त, वातविकार, सन्निपात, दुष्ट फोड़े, दुष्ट घाव, विद्रधिरोग ॥ ५३ ॥ दाह, खाँसी, ज्वर, गंडमाला, गाँठ, अर्बुद, त्वचागत रोग, वातरक्त इन सब रोगों को हरता है यह महातिक्त घी सब प्रकार की सूजन और खुजली से उत्पन्न सब रोगों को हितकारी है अर्थात् इन सब रोगों को नष्ट करता है ॥ ५४ ॥

मस्तकरोगनाशक षडबिन्दुघृत ।

शुण्ठीविडङ्गयष्ट्याह्वभृङ्गतोयैः शृतं घृतम् ॥

नस्यं षड्बिन्दुदानेन सर्वमूर्द्धगदापहम् ॥ ५५ ॥

सोंठ, वायविडंग, मुलहठी इन तीनों के चूर्ण को भँगरा के रस के साथ घी में पचावे और पच जाने पर घी को छान कर रख छोड़े इस घी के छ बूँद नास देने से यह घी सब प्रकार के शिर रोगों को नष्ट कर देता है ॥ ५५ ॥

वातविकारनाशक दशमूल घृत ।

दशमूलस्य निर्यूहैर्जीवनीयैः पलोन्मितैः ॥
क्षीरेण च घृतं पक्वं तर्पणं पवनार्तिजित् ॥
क्वाथेन त्रिगुणं सर्पिः प्रस्थसाध्यं पयःसमम् ॥ ५६ ॥

दशमूल का काढा अथवा रस, और जीवनीय गण (मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जेठीमधु, जीवंती, अष्टवर्ग) का रस अथवा काढ़ा एक एक पल (चार चार तोला) ले के दूध में उसको पचावे यह सिद्ध घी सब प्रकार वात दोषों को दूर कर देता है ॥ ५६ ॥

अश्वगन्धादि घृत ।

अश्वगन्धाकषायेण कल्के क्षीरं चतुर्गुणम् ॥
घृतं पक्वं तु वातघ्नं वृष्यं मांसविवर्द्धनम् ॥ ५७ ॥

असगन्ध का काढ़ा कर उसमें काढ़ा से चौगुना दूध डाल कर उसको घी में पचावे यह सिद्ध घी वात विकार को नाश करने वाला और बल वीर्य को तथा मांस को बढ़ाने वाला है ॥ ५७ ॥

गुडूची घृत ।

अमृतायाः कषायेण कल्केन च महौषधात् ॥
मृद्वग्निना घृतं सिद्धं वातरक्तहरं परम् ॥ ५८ ॥
आमवातादिवातानां कृमिदुष्टव्रणान्यपि ॥
अर्शांसि गुल्मांश्च तथा नाशयत्याशु योजितम् ॥५९॥

गिलोय का काढ़ा कर उसमें सोंठ मिलाय मन्द मन्द आँच से घी में पचावे यह सिद्ध घी वातरक्त विकार को नाश करता है ॥ ५८ ॥ और आम-वातादि दोषों को तथा कृमिरोग, दुष्टव्रण, बवासीर एवं वायगोला आदि रोगों को शीघ्र ही नाश कर देता है ॥ ५९ ॥

वातशूलनाशक शुंठ्यादिघृत।

नागरं क्वाथकल्काभ्यां घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
चतुर्गुणेन तेनाथ केवलेनोदकेन वा ॥ ६० ॥
वातश्लेष्मप्रशमनं अग्निदीपनकं परम् ॥
नागरं घृतमित्युक्तं सामशूलविनाशनम् ॥ ६१ ॥

सोंठ का काढ़ा और कल्क को एक प्रस्थ (६४ तोला) घी में पचावे सोंठ का पानी घी से चौगुना हो ॥६०॥ यह घी वात कफ विकार को नाश कर देता है और जठराग्नि को प्रदीप्त करता है, इस घी को नागर घृत कहते हैं यह आम सहित शूल को नष्ट करने वाला है ॥ ६१ ॥

काशीसादि घृत।

काशीसं द्वे निशे मुस्ते हरितालं मनःशिला ॥
काम्पिल्लकं च गन्धं च विडंगं गुग्गुलं तथा ॥ ६२ ॥
सिद्धकं मरिचं कुष्ठं तुत्थकं गौरसर्षपान् ॥
रसांजनं च सिन्दूरं श्रीवासं रक्तचन्दनम् ॥ ६३ ॥
अरिमेदं निम्बपत्रं करंजं सारिवां वचाम् ॥
मंजिष्ठां मधुकं मांसा शिरीषं लोध्रपद्मकम् ॥ ६४ ॥
हरीतकीं प्रपुन्नाटं चूर्णयेत्कर्षकान्पृथक् ॥
ततस्तु चूर्णमालोड्य त्रिंशत्पलमिते घृते ॥ ६५ ॥

कसीस, हलदी, दारुहलदी, नागरमोथा, हरताल, मनशिल, कवीला, गन्धक, वायविडंग, गूगल ॥ ६२ ॥ मोम, काली मिर्च, कूट, नीला थोथा, सफेद सरसों, रसौत, सेंदुर, देवदारु, लाल चन्दन ॥ ६३ ॥ खैर, नीम के पत्ता, कंजा, गौरीसर, बच, मंजीठ, मुलहठी, जटामांसी, सिरस, लोध, पद्माख ॥ ६४ ॥ हर्र, चकवड़ इन सबको अलग अलग एक एक कर्ष (तोला तोला) भर लेके चूर्ण करे और उस चूर्ण को तीस पल (१२० तोला) घी में पचावे ॥ ६५ ॥

स्थापयेत्ताम्रपात्रेषु घर्मे सप्त दिनानि च ॥
अस्याभ्यङ्गेन कुष्ठानि दद्रुपामाविचर्चिकाः ॥ ६६ ॥
शूकदोषविसर्पाश्च विस्फोटा वातरक्तजाः ॥
शिरस्फोटोपदंशाश्च नाडीदुष्टव्रणानि च ॥ ६७ ॥
शोफा भगन्दराश्चैव लूता शाम्यति देहिनाम् ॥
शोधनं रोपणं चैव सर्ववर्णकरं मतम् ॥ ६८ ॥

अनन्तर उस घी को ताँबे के पात्र में रख कर सात दिन तक घाम में रक्खे, इस घी के उबटन से कुष्ठ रोग, दाद, खाज, खुजली ॥ ६६ ॥ शूकरोग, विसर्परोग, फोड़ा, वातरक्त, शिररोग, उपदंश (गरमी) नाड़ीव्रण और दुष्टव्रण ॥ ६७ ॥ सूजन, भगन्दर, मकरी का विष ये रोग मनुष्यों के इस घी के मर्दन से नाश हो जाते हैं, यह घी कोठे को शुद्ध कर देता है, रंग को ठीक कर देता है, काले और सफेद दाग तथा झाई आदि रोगों को दूर कर देता है ॥ ६८ ॥

पंचतिक्तक घृत।

वृषनिंबामृता व्याघ्रीपटोलानां शृतेन च ॥
कल्केन पक्वं सर्पिस्तु निहन्याद्विषमज्वरान् ॥ ६६ ॥
पांडुं कुष्ठं विसर्पं च कृमीनर्शांसि नाशयेत् ॥

अडूसा, नीम की छाल, गुर्च, भटकटैया, परवर के पत्ते, इन सबको कल्क विधि से घी में पचावे यह सिद्ध घी विषम ज्वरादि रोगों को नाश करता है ॥ ६६ ॥ और पांडुरोग, कुष्ठरोग, विसर्प, कृमिरोग, तथा बवासीर रोग को नाश कर देता है ॥

पुष्टिकारक कामदेवघृत।

अश्वगन्धा तुलैका स्यात्तदर्धं गोक्षुरस्तथा ॥ ७० ॥
बलाऽमृता शालिपर्णी विदारी च शतावरी ॥
पुनर्नवा स्वच्छशुण्ठी काश्मर्यास्तु पलान्यपि ॥ ७१ ॥

पद्मबीजं शटीबीजं दद्याद्दशपलं घृतम् ॥
चतुर्द्रोणं पयः पक्त्वा पादशेषं शृतं नयेत् ॥ ७२ ॥
जीवनीयगणं कुष्ठ पद्मकं रक्तचन्दनम् ॥
पत्रकं पिप्पली द्राक्षा कपिकच्छुफलं तथा ॥ ७३ ॥
नीलोत्पलं नागपुष्पं सारिवे द्वे तथा बला ॥
पृथक्कर्षसमा भागा शर्करायाः पलद्वयम् ॥ ७४ ॥
रसस्य पौंड्रकेक्षूणामाढकैकं समाहरेत् ॥
घृतस्य चाष्टकं दत्त्वा पाचयेन्मृदुवह्निना ॥ ७५ ॥

असगन्ध एक तुला (४०० तोला,) गोखरू उसका आधा (२०० तोला) ॥ ७० ॥ खरियरा, गुर्च, सरिवन, विदारीकन्द, शतावरि, साँठ की जड़, सफेद दूव, सोंठ, खंभारि बेल इन सब औषधियों को एक एक पल (४।४ तोला) लेके ॥ ७१ ॥ कमलगट्टा, कचूरबीज, एक एक पल (चार चार तोला) लेवे और दश पल (४० तोला) घी लेकर चार द्रोण (६४ प्रस्थ) अर्थात् चौसठ सेर जल में आँच पर चढ़ा कर पचावे जब चौथाई रह जाय तब उतार लेवे ॥ ७२ ॥ फिर उसमें जीवनीयगण (मापपर्णी मुद्गपर्णी जेठी मधु जीवंती अष्टवर्ग) कूट, पद्माख, लाल चन्दन, तेजपात, पीपर, दाख, कैंच के बीज ॥ ७३ ॥ नील कमल, नागकेशर, दोनों गौरीसर, खरैटी यह सब अलग अलग एक एक कर्ष (तोला तोला) प्रमाण लेवे और मिश्री दो पल (आठ तोला) प्रमाण लेवे ॥ ७४ ॥ फिर पौंड़ा ईख का रस एक आढक (२५६ तोला) डाल कर पचावे उसमें घी आठ पल डाल कर मन्द मन्द आँच से पचावे जब घी सिद्ध हो जाय तब उतार कर रख छोड़े ॥ ७५ ॥

घृतमेतन्निहन्त्याशु रक्तपित्तं सुरक्षितम् ॥
हलीमकं पाण्डुरोगं वर्णभेदं स्वरक्षयम् ॥ ७६ ॥
वातरक्तं मूत्रकृच्छ्रं पार्श्वशूलं तु कारयेत् ॥
शुक्रक्षयमुरोदाहं कार्श्यमोजक्षयं तथा ॥ ७७ ॥
स्त्रीणां चैव प्रजननं गर्भदं शुक्रदं नृणाम् ॥
कामदेवघृतं नाम हृद्यं बल्यं रसायनम् ॥ ७८ ॥

यह सिद्ध घी बहुत पुराने रक्तपित्तरोग को हलीमकरोग को, पांडुरोग को, वर्ण भेद और स्वर भंग को ॥ ७६ ॥ क्षय को, हृदय में दाह को, दुर्बलता को, तथा ओजक्षय को निरन्तर नष्ट करता है ॥ ७७ ॥ एवं स्त्रियों के सन्तान उत्पन्न करने वाला यह कामदेव नामक घी हृदय को पुष्ट करने वाला बल को बढ़ाने वाला और रसायन है ॥ ७८ ॥

रुधिरविकारनाशक मंजिष्ठादिघृत।

मंजिष्ठा च हरिद्रा च देवदारुहरीतकी ॥
शृंगवेरं ह्यतिविषा वचा कटुकरोहिणी ॥ ७९ ॥
हिंगुतश्चाक्षमात्रेण तत्सिद्धमवतारयेत् ॥
एतन्मांजिष्ठकं सर्पिर्बहून् रोगान्निवारयेत् ॥ ८० ॥
हिक्कां श्वासं ज्वरं कुष्ठं ग्रहणीं पांडुरोगताम् ॥
प्रमेहमधुमेहांश्च कृमिगुल्ममरोचकम् ॥ ८१ ॥
कासं शोषमुदावर्तमपस्मारं तथैव च ॥
अर्शांसि श्वयथुं चैव गण्डमालां तथोदरम् ॥ ८२ ॥

मजीठ, हलदी, देवदारु और हरीतकी (हर्र) अदरख वा सोंठ, अतीस, वच, कुटकी ॥ ७९ ॥ हींग इन औषधियों को एक एक अक्ष (तोला तोला) प्रमाण ले के घी में पकावे जब घी सिद्ध हो जाय तब उतार लेवे, यह मांजिष्ठ नामक घी बहुत रोगों को दूर करता है ॥ ८० ॥ और हिचकी श्वास (दमा) ज्वर, कुष्ठरोग, संग्रहणी और पांडुरोग, प्रमेह, मधुप्रमेह, कृमिरोग, वायगोला, अरुचि ॥ ८१ ॥ खाँसी, सूजन, उदावर्त, मृगीरोग, तथा ववासीर, शोथरोग, गंडमाला और उदररोग को नाश कर देता है ॥ ८२ ॥

संग्रहणीनाशक कल्याण गुड़।

पाठाधान्यजवान्यजाजिहवुषाचव्याग्निसिंधूद्भवैः
सश्रेयस्यजमोदकीटरिपुभिः कृष्णाजटासंयुतैः ॥
सव्योषैः सफलत्रिकैः सत्रुटिभिस्त्वक्पत्रजैरौषधैः
प्रत्येकं पलिकैः सतैलकुडवैः सार्द्धं त्रिवृन्मुष्टिभिः ॥ ८३ ॥

सर्वैरामलकीरसस्य तुलया सार्द्धं तुलार्द्धं गुडं
सम्पाच्यो भिषजाऽवलेहवदयं प्राग्भोजनाद्भुज्यते ॥
ये केचिद्ग्रहणीगदा सगुदजाः कासा सशोफामयाः
सश्वासं श्वयथुं शिरोदररुजः कल्याणकस्तां जयेत् ॥८४॥

पाढ़, धनियाँ, अजवायन, जीरा, कबावचीनी, चव्य, चीता, सेंधानमक, पीपर, अजमोद, वायविडंग, पिपलामूल, सोंठ, मिर्च, पीपर, आँवला, हर्र, बहेड़ा, छोटी इलायची, तज, तेजपात, नागकेशर इन प्रत्येक औषधियों को एक एक पल (४।४ तोला) लेके एक कुडव (१६ तोला) तेल और निसोत आधी मुष्टी (२ तोला) ॥ ८३ ॥ इन सबको आँवला का रस एक तुला (१०० पल) अर्थात् चार सौ तोला और गुड़ आधा तुला (२०० तोला) में मिला कर वैद्य जन भली भाँति अवलेह विधि से पचावे जब सिद्ध हो जाय तब उतार लेवे जो कोई भोजन करने से पहले इस कल्याण गुड़ को खाते हैं उनके संग्रहणीरोग, गुदारोग, खाँसी, सूजन, श्वास, कंठशोथ, शिरपीड़ा, उदर विकार इनमें से कोई भी रोग हो इन सब रोगों को यह कल्याण गुड़ नाश कर देता है ॥ ८४ ॥

इति श्रीमत्पण्डितसीतारामकृतायां योगचिन्तामणिभाषा
टीकायां घृताऽधिकारो नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथ

तैलाधिकारो नाम षष्ठोऽध्यायः प्रारभ्यते ॥ ६ ॥

नारायणतैल सर्ववातविकार पर ।

बिल्वोऽग्निमन्थः स्योनाकः पाटला पारिभद्रकः ॥
प्रसारिण्यश्वगन्धा च बृहती कंटकारिका ॥ १ ॥
बला चातिबला चैव श्वदंष्ट्रा सपुनर्नवा ॥
एषां दशपलान्भागांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत् ॥ २ ॥
पादशेषे परिस्रावे दापयेत्तैलमाढकम् ॥
शतपुष्पा देवदारुमांसीशैलेयकं वचा ॥ ३ ॥
चन्दनं तगरं कुष्टमेला पर्णीचतुष्टयम् ॥
रास्ना तुरगगन्धा च सैन्धवं सपुनर्नवम् ॥ ४ ॥
एषां द्विपलिकान्भागान् पेषयित्वा विनिःक्षिपेत् ॥
शतावरीरसं चैव तैलतुल्यं प्रदापयेत् ॥ ५ ॥
आजं वा यदि वा गव्यं दद्यात्क्षीरं चतुर्गुणम् ॥
शनैर्विपाचयेत्सर्वं तत्सिद्धमवतारयेत् ॥ ६ ॥

वेल की गूदी, अरणी, सोना पाढ़ा अथवा अरलू, पाड़र, नीम की छाल, गंध प्रसारणी अथवा लाजवन्ती, असगन्ध; दोनों कटाई ॥ १ ॥ वरियरा, गँगेरन, गोखरू, साँठ की जड़, यह सब औषधियाँ दश पल प्रमाण लेकर चार द्रोण अर्थात् चौसठ सेर जल में पचावे ॥ २ ॥ जब चौथाई जल शेष रह जाय तब एक आढ़क (४ प्रस्थ) अर्थात् चार सेर तेल उसमें डाले अनन्तर सौंफ, देवदारु, जटामांसी

अथवा बालछड़, छड़ीला, वच ॥ ३ ॥ चन्दन, तगर, कूट, इलायची और चारो पर्णी अर्थात् पृष्टिपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, शालपर्णी, रासन, असगन्ध, सेंधा नमक, गदापुरैना ॥ ४ ॥ इन औषधियों को दो दो पल (८।८ तोला) लेकर महीन पीसे फिर शतावरि का रस तेल के बराबर (४ सेर) डाले ॥ ५ ॥ तदनन्तर बकरी अथवा गाय का दूध चौगुना डाल कर मन्द मन्द आँच से पचावे जब तेल सिद्ध हो जाय तब उतार कर अच्छे पात्र में रख छोड़े ॥ ६ ॥

पाने बस्तौ तथाभ्यङ्गे भोज्ये चैव प्रशस्यते ॥
अश्वो वा वातसंभग्नो गजो वा यदि वा नरः ॥७॥
पङ्गुलः पीठसर्पी च तैलेनानेन सिद्ध्यति ॥
अधोभागाश्च ये वाताः शिरोमध्यगताश्च ये ॥८॥
दन्तशूलहनुस्तम्भे मन्यास्तम्भे गलग्रहे ॥
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा ज्वरक्षीणाश्च ये नराः ॥९॥
बधिरा लग्नजिह्वाश्च विकला मन्दमेधसः ॥
मन्दप्रजा च या नारी या च गर्भं न विन्दति ॥१०॥
कुरण्डमंत्रवृद्धिश्च येषां तेषामिदं हितम् ॥
यथा नारायणो देवो दुष्टदैत्यविनाशकः ॥११॥
तथेदं वातरोगाणां तैलं नारायणं स्मृतम् ॥१२॥

यह नारायण तेल पान करने में, बस्तिकर्म में उबटन करने अर्थात् मालिश करने में और भोजन से पहले सेवन करने में हितकारी है, तथा यह तेल घोड़ा वा हाथी अथवा मनुष्य के वातविकार, भग्नरोग ॥ ७ ॥ पंगुरोग, पीठभग्न इन सब रोगों को नाश कर देता है और नीचे के अंगो की वातपीड़ा, शिर के बीच में प्राप्त वातविकार ॥ ८ ॥ दाँतो की पीड़ा, हनुस्तंभ, (ठोंडी का रोग) मन्यास्तम्भ, गलग्रह (कंठ रोग) इन्द्रियों की क्षीणता, वीर्य की क्षीणता, ज्वर से उत्पन्न क्षीणता ॥ ९ ॥ कानों से बहिरा होना, जीभ का लगना, विकलता, बुद्धि की मन्दता, स्त्री के थोड़े संतान होना, बहुत काल में संतान उत्पन्न होना, तथा जो गर्भ नहीं रहता हो ॥ १० ॥ एवं जिसके पोता बढ़ गये हों, आतें चढ़ आती हों, जिनके यह रोग होवें उनको यह नारायण तेल हितकारी है जिस प्रकार नारायण, भगवान् दुष्ट दैत्यों के विनाश करने वाले हैं ॥ ११ ॥ उसी प्रकार यह नारायण नामक तैल सब प्रकार के वात रोगों को नाश करने वाला कहा है ॥ १२ ॥

लाक्षादि तैल—जीर्णज्वर आदि पर।

चन्दनाम्बुनखं वाप्यं यष्टीशैलेयपद्मकम् ॥
मंजिष्ठा सरला दारु शट्येला नागकेशरम् ॥१३॥
पत्रं चैला मुरा मांसी कंकोलं तगराम्बुदम् ॥
हरिद्रे सारिवे तिक्तं लवंगागरुकुंकुमम् ॥१४॥
त्वग्रेणुनलिकांस्त्वेभिस्तैलमस्तुचतुर्गुणम् ॥
लाक्षारससमं सिद्धं ग्रहघ्नं बलवर्णवत् ॥१५॥
अपस्मारज्वरोन्मादकृशतानां विनाशनम् ॥
गात्राणां स्फोटनं दाहं कण्डुजीर्णज्वरापहम् ॥१६॥

सफेद चन्दन, नेत्रवाला अथवा सुगन्धवाला, नख (सुगंध द्रव्य नखी) कूट, मुलहठी, शिलाजीत, पद्माख, मजीठ, निशोथ, देवदारु, कचूर, इलायची, नागकेशर ॥ १३ ॥ पत्रज, बालछड, तालीसपत्र, जटामासी, कंकोल, तगर, मोथा, हलदी, गौरीसर, कुटकी, लौंग, अगरु, केशर ॥ १४ ॥ दालचीनी, रेणुका, चीता इन औषधियों को लेवे इनसे चौगुना तेल और सबके बराबर लाख का रस मिला कर आंच पर मन्द मन्द औटावे जब तेल सिद्ध हो जावे तब उतार कर रख छोड़े, यह लाक्षादि तेल गलग्रह को नष्ट करता है और शरीर के रंग को शुद्ध करता है ॥ १५ ॥ एवं मृगीरोग, क्षयीरोग, उन्माद (पागलपन) दुबलापन, इनको विनाश करता है, तथा अंगों का टूटना, जलन, खुजली और जीर्णज्वर को दूर करता है ॥ १६ ॥

अथवा।

लाक्षाढकं क्वाथयित्वा जलस्य चतुराढकैः ॥
चतुर्थांशं शृतं नीत्वा तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥१७॥
ततस्तक्राढकं गोश्च तत्रैव विनियोजयेत् ॥
शतपुष्पामश्वगन्धां हरिद्रां देवदारु च ॥१८॥
कटुका रेणुका मूर्वा कुष्ठं च मधुयष्टिका ॥
चन्दनं मुस्तकं रास्नां पृथक् कृत्वा प्रमाणतः ॥ १९ ॥

चूर्णयेत्तत्र निक्षिप्य साधयेन्मृदुवह्निना ॥
अस्याभ्यङ्गात्प्रशाम्यन्ति सर्वेऽपि विषमज्वराः ॥ २० ॥
वातपित्ते क्षये दाहे गर्भिणीपुष्टिदं मतम् ॥
कासश्वासासृग्विकारकंडूशूलभ्रमेषु च ॥ २१ ॥

एक आढक (चार सेर) लाख को चार आढक (१६ सेर) जल के साथ आँच पर चढ़ा कर काढ़ा करे जब चौथाई रह जाय तब मीठा तेल एक प्रस्थ (सेर भर) डाल कर पचावे ॥ १७ ॥ अनन्तर एक आढक (चार सेर) गाय का मठा उसमें मिलावे और सौंफ, असगन्ध, हलदी, देवदारु ॥ १८ ॥ कुटकी, रेणुका, मूर्वा (मुरहरी) कूट, मुलहठी, चन्दन, नागरमोथा, रासन इन सबको पृथक् पृथक् तोला तोला भर लेवे ॥ १९ ॥ फिर सबको महीन पीस कर चूर्ण बनाय उसमें डाले और मन्द मन्द आँच से पचावे इस लाक्षादि तेल के अभ्यङ्ग (मालिश करने) से सब प्रकार के विषम ज्वर नाश हो जाते हैं ॥ २० ॥ और वात पित्त में, क्षयरोग में, दाह में यह तेल हित करने वाला है, गर्भवती स्त्री को यह तेल लगाने से अंगों को पुष्ट करता है, तथा खांसी, श्वास, रुधिरविकार, खुजली, शूल और चित्तभ्रम इन रोगों को नाश कर देता है ॥ २१ ॥

मरिचादितैल—दद्रुपामा (दाद खाज) आदि पर ।

मरिचचन्दनदारुनिशाद्वयं जलदमनःशिलालशाकद्रसैः ॥
त्रिवृतयाश्वहरोऽर्कपयोविषैः सुरभिमूत्रयुतं विपचेद्भिषक् ॥ २२ ॥
कटुकतैलमिदं मरिचादिकं कठिनचर्मदलास्रकापहम् ॥
बहुलमण्डलसिध्मविचर्चिकाप्रवरकुष्ठकिलासविसर्पजित् ॥ २३ ॥

कालीमिर्च, सफेद चन्दन, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, नागरमोथा, मैनशिल, हरताल, थूहर का रस, निसोथ, असगन्ध, मदार का दूध, तेलिया मीठा इन सब औषधियों में वैद्य जन गोमूत्र मिला कर आँच पर चढ़ा कर इनको पचावे ॥ २२ ॥ फिर कड़ुआ तेल डाल कर सिद्ध करे जब तेल सिद्ध हो जाय तब उतार लेवे यह मरिचादि तैल चर्मरोग, दाद, बड़े चकत्ता, सीपरोग, खाज, कोढ़ और फोड़ा तथा विसर्प आदि रोगों को जीत लेता है इन रोगों को दूर कर देता है ॥ २३ ॥

बृहन्मरिचादि तैल ।

मरिचं त्रिफला दन्तीक्षीरमार्कशकृद्रसैः ॥

देवदारुहरिद्रे द्वे मांसी कुष्ठं सचन्दनम् ॥ २४ ॥
विशाला करवीरं च हरितालं मनःशिला ॥
चित्रको लांगली लाक्षा विडंगं चक्रमर्दकम् ॥ २५ ॥
शिरीषकुटजौ निम्बस्सप्तपर्णस्नुहीमृताः ॥
शम्याको नक्तमालश्च खदिरं पिप्पली वचा ॥ २६ ॥
ज्योतिष्मती च पलिका विषं च द्विपलं नयेत् ॥
आढकं कटुतैलस्य गोमूत्रं च चतुर्गुणम् ॥ २७ ॥
मृत्पात्रे लोहपात्रे च शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥
पक्त्वा तैलवरं ह्येतत्कर्षयेत्कोष्टकं व्रणम् ॥ २८ ॥

काली मिर्च, आँवला, हर्र, बहेड़ा, जमालगोटा की जड़, मदार का दूध, थूहर का दूध, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, जटामासी, कूट, चन्दन ॥२४॥ इन्द्रायन, कनेर की जड़, हरताल, मैनशिल, चीता, कलिहारी, लाख, वायविडंग, पमार के बीज ॥२५॥ सिरस की छाल, कुड़े की छाल, नीम की छाल, सतौना अथवा छतिवन, सेहुंड़, गुर्च, अमलतास, कंजा, खैरसार, पीपर, वच ॥ २६ ॥ मालकांगनी इन सब औषधियों को एक एक पल (चार चार तोला) लेवे और तेलिया मीठा दो पल (आठ तोला) लेवे, कडुआ तेल एक आढ़क (चार सेर) तथा गोमूत्र चौगुना अर्थात् सोलह सेर लेवे ॥ २७ ॥ फिर इन सबको मिट्टी अथवा लोहे के पात्र में मन्द मन्द आंच से पचावे जब सिद्ध हो जाय तब उतार लेवे यह बृहन्मरिचादि तेल कुष्टरोग और व्रण रोग को नष्ट कर देता है ॥ २८ ॥

पामाविचर्चिकाकण्डूदद्रुविस्फोटकानि च ॥
वलितं पलितं छायानीलीव्यङ्गत्वमेव च ॥ २९ ॥
अभ्यङ्गेन प्रणश्यंति सौकुमार्यं च जायते ॥
प्रथमे वयसि स्त्रीणां नस्यमस्य तु दीयते ॥ ३० ॥
जरामपि तथा प्राप्य नाम्ना नायाति विक्रियाम् ॥
बलिवर्दस्तुरंगो वा गजो वा वायुपीडितः ॥
त्रिभिरभ्यञ्जनैर्वाढं भवेन्मारुतविक्रमः ॥ ३१ ॥

खाज, किलकिली, खुजली, दाद, विस्फोटक (शरीर को फोड़कर निकली हुई फुंसियां जिन्हें देवी निकलना कहते हैं) अर्थात् शीतलारोग, वाल वहुत सफेद होना, मुख पर भाई नीलापन और व्यंगता ॥ २९ ॥ इस वृहन्मरिचादि तेल के मर्दन से ये रोग नाश हो जाते हैं देह सुन्दर और स्वच्छ हो जाती है, इस तेल का पहली अवस्थावाली अर्थात् नवयौवना स्त्री को नास देवे ॥ ३० ॥ बुढ़ापा में भी इस तेल को शरीर में मले तो देह पुष्ट होय और कुछ विकार नहीं होवे तथा वैल, घोड़ा, हाथी यह जीव जो वातविकार से पीडित होवें तो तीन दिन यह तेल मलने से वे वायु के तुल्य पराक्रमी हो जावें ॥ ३१ ॥

विषगर्भ तैल-वातविकार पर।

विषं च पुष्करं कुष्टं वचा भार्ङ्गी शतावरी ॥
शुण्ठी हरिद्रे लशुनं विडंगं देवदारु च ॥ ३२ ॥
अश्वगन्धाऽजमोदा च मरिचं ग्रन्थिकं बला ॥
रास्ना प्रसारणीशिग्रुगुडूची हवुषाऽभया ॥ ३३ ॥
दशमूलानि निर्गुंडी मिशी पाठा च वानरी ॥
विशाला शतपुष्पा च प्रत्येकं पलिकान्मितान् ॥३४॥
चतुर्गुणैर्जलैः पक्त्वा पादशेषं शृतं नयेत् ॥
तिलतैलं क्षिपेत्प्रस्थं तथैरण्डञ्च सार्षपम् ॥ ३५ ॥
धत्तूरं चांडभृंगार्करसान्प्रस्थमितान्क्षिपेत् ॥
पाचयेद्गोमयरसैस्तैलशेषं समुद्धरेत् ॥ ३६ ॥

तेलिया मीठा, पुहकरमूल, कूट, वच, भारंगी, शतावरि, सोंठ, हलदी, लहसुन, वायविडंग, देवदारु ॥ ३२ ॥ असगन्ध, अजमोद, काली मिर्च, पिपलामूल, खरैटी, रासन, गन्ध प्रसारणी, सहिजन, गिलोय, हाऊवेर, हर्र ॥ ३३ ॥ दशमूल, सँभालू, मेथी, पाढ़, कैंच के वीज, इन्द्रायन की जड़, सौंफ इन औषधियों को एक एक पल (चार चार तोला) प्रमाण लेवे ॥ ३४ ॥ और सवसे चौगुने जल में आंच पर मन्द मन्द पचावे जव चौथाई शेष रह जाय तव उसमें एक एक प्रस्थ अर्थात् सेर सेर भर तिल का तेल अंडी का तेल तथा सरसों का तेल डाल देवे ॥ ३५ ॥ अनन्तर धतूरा, अंडा, भँगरा, मदार इन वृक्षों के पत्तों का रस एक एक प्रस्थ, तथा गोवर का रस डाल कर पचावे जव तेल मात्र शेष रह जाय तव उतार लेवे ॥ ३६ ॥

पलमेकं विषं चात्र सूक्ष्मं कृत्वा विनिक्षिपेत् ॥
सर्वेषु वातरोगेषु सदाभ्यंगे विधीयते ॥ ३७ ॥
सन्धिवाते सन्निपाते त्रिकपृष्ठकटिग्रहे ॥
पक्षाघाते तथार्द्धांगे गात्रकम्पेऽतिदारुणे ॥ ३८ ॥
कुब्जके च धनुर्वाते गृध्रस्यां च प्रतानके ॥
विषगर्भमिदं तैलं योजनीयं सदा बुधैः ॥ ३९ ॥

और उसमें एक पल (४ तोला) विष (तेलिया मीठा) महीन पीस कर मिला देवे, यह विषगर्भ तेल सब प्रकार के वात रोगों में सदैव मलने से हितकारी कहा है ॥ ३७ ॥ सन्धियों में प्राप्त वातविकार में, सन्निपात में, त्रिक (कटि के ऊपरी भाग में, पीठ में, कटि में जो वात विकार हो, पक्षाघात तथा आधे अंग में वायु से विकार हो, दारुण अंगकंप हो ॥ ३८ ॥ कुबड़ापन हो, धनुर्वात, गृध्रसी और प्रतान वायु हो ये सब रोग इस विषगर्भ तैल के मर्दन से दूर हो जाते हैं, बुद्धिमान जन सदैव इन रोगों में यह तेल देवें ॥ ३९ ॥

तथाच—

कनकश्चापि निर्गुंडी तुम्बिनो सपुनर्नवा ॥
वानरी याऽश्वगन्धा च प्रपुन्नाटः सचित्रकः ॥ ४० ॥
सौभांजनं काकमाची कलिहारी तु निम्बकः ॥
महानिम्बेश्वरी चैव दशमूली शतावरी ॥ ४१ ॥
कारेल्ली सारिवे द्वे च श्रीपर्णी च विदारिका ॥
वज्रार्कौ मेषशृंगी च करवीरद्वयं तथा ॥ ४२ ॥
काकजंघा त्वपामार्गस्तथा स्यात्सुप्रसारिणी ॥
त्रिफला तत्समांशेन रसं तैलं समानि च ॥ ४३ ॥
कृष्णस्य तिलतैलं च तैलमेरण्डसार्षपम् ॥
पचेदेकत्र सर्वं तत्तैलसिद्धं च बुद्धिमान् ॥ ४४ ॥
त्रिकट्वश्वगन्धा च रास्ना कुष्ठं च निम्बकम् ॥

देवदारुकलिंगं च द्वौ क्षारौ लवणानि च ॥ ४५ ॥
तुत्थं कटुफलं पाठाभार्ङ्गी च नवसादरम् ॥
गंधकं पुष्करं मूलं शिलाजतु शटी वचा ॥ ४६ ॥
एतानि कर्षमात्राणि तैलशेषे विनिक्षिपेत् ॥
प्रसृतं च विषं दद्यात् सूक्ष्मं चूर्णीकृतं क्षिपेत् ॥ ४७ ॥

कनक (धतूरे) के बीज, सँभालू, कडुई तोमड़ी, साँठ की जड़, कौंच के बीज, असगंध, पँवार के बीज, चीता ॥ ४० ॥ सहिजन की छाल, मकोय, कटियारी, नीम की छाल, बकायन, दशमूल, शतावरी ॥ ४१ ॥ करेला, दोनों सारिवा, खंभारी, विदारीकंद, सेहुंड़, मदार, मेढ़ासिंगी, लाल सफेद कनेर ॥ ४२ ॥ कौआ गोड़ी, ओंगा अथवा लटजीरा, लाजवन्ती, आँवला, हर्र, बहेड़ा, इन सबका रस बराबर लेवे और सबके बराबर ॥ ४३ ॥ काले तिल का तेल, अंडी का तेल, सरसों का तेल डाल कर इन सबको इकट्ठा आँच पर रख कर मन्द मन्द पचावे फिर बुद्धिमान् वैद्य ॥ ४४ ॥ सोंठ, मिर्च, पीपरि, असगन्ध, रासन, कूट, नीम की छाल, देवदारु, इन्द्रयव, सज्जी, जवाखार, पाचों नमक ॥ ४५ ॥ नीला थोथा, कायफल, पाढ़, भारंगी, नौसादर, गन्धक, पुहकरमूल, शिलाजीत, कचूर, बच ॥ ४६ ॥ इन सब औषधियों को एक एक कर्ष अर्थात् तोला तोला भर लेके तेलमात्र शेष रह जाने पर डाल देवे फिर उसमें एक प्रसृत (२ पल) विष (तेलिया मीठा) महीन पीस कर डाले ॥ ४७ ॥

विषगर्भमिदं तैलं सर्वव्याधीन्व्यपोहति ॥
कुक्षिभ्रूपृष्ठिगंडेषु सन्धानं शोफ एव च ॥ ४८ ॥
गृध्रसी च शिरोवायुस्सर्वाङ्ग स्फुटनं तथा ॥
दण्डापतानकाष्टीलं कर्णनादश्च शून्यता ॥ ४९ ॥
कम्पनं चोर्ध्ववातश्च बाधिर्यं पलितं तथा ॥
गण्डमालापचीग्रन्थी शिरःकम्पापतंत्रके ॥ ५० ॥
अनेन सर्ववाताश्च सन्निपातास्त्रयोदश ॥
वनमभ्यागते सिंहे पलायन्ते यथा मृगाः ॥
तथा वातेषु सर्वेषु योजनीयं भिषग्वरैः ॥ ५१ ॥

यह विषगर्भ तेल सब रोगों को हरता है, कुक्षिरोग में और मौंह, पीठ, कनपटी, संधि इन अंगों की पीड़ा, सूजन ॥ ४८ ॥ गृध्रसी, शिर में प्राप्त वायु, सब अंगों का फूटना, प्रतानवायु, पेट की गांठ, कान में शब्द होना, सुन्नवायु ॥ ४९ ॥ कंपवात, ऊर्ध्ववायु, बहिरापन तथा केशपाक, गंडमाला, अपची, वात, शिरकंप और अपतंत्र ॥ ५० ॥ इन सब वात रोगों को और तेरह प्रकार के सन्निपात को यह विषगर्भ तेल इस प्रकार नाश कर देता है जिस प्रकार वन में सन्मुख आजाने से मृगों के झुण्ड भाग जाते हैं, वैसे ही सब वात रोगों को भगाने के निमित्त श्रेष्ठ वैद्यों को उचित है कि इस विषगर्भ तेल का प्रयोग करें अर्थात् यह तेल रोगी को देवें ॥ ५१ ॥

षड्बिन्दुतैल— शिररोग पर।

एरण्डमूलं तगरं शताह्वा जीवन्तिरास्नालवणोत्तमं च ॥
भृङ्गं विडङ्गं मधुयष्टिका च महौषधं चेति तिलस्य तैलम् ॥५२॥
एतैर्विपक्वैः पयसा च तुल्यं चतुर्गुणे भृङ्गरसे च सम्यक् ॥
षड्बिन्दवो नासिकयोपयुक्ताः सर्वान्निहन्युः शिरसो विकारान् ॥
च्युतांश्च केशान्स्खलितांश्च दन्तान्दृढमूलांश्च दृढीकरोति ॥
सुपर्णनागप्रतिमं च चक्षुर्बुद्धिं बलं चाभ्यधिकं करोति ॥५४॥

अंडी की जड़, तगर, शतावरि, जीवंती, रासन, सेंधा नमक, भँगरा, वायविडंग, मुलहठी, सोंठ, तिलों का तेल ॥ ५२ ॥ इन औषधियों के बराबर दूध लेवे पहले तेल को दूध में पकावे फिर तेल से चौगुना भँगरा का रस डाल कर औषधियों का काढा डाले जब काढा पक जाय तब उतार लेवे, यह षड्बिन्दु तैल है इसके छ बूंद नाक में डालने से सब प्रकार के वात रोग दूर हो जाते हैं ॥ ५३ ॥ यह तेल गिरते हुए बालों को जमाता है और हिलते हुए दांतों को दृढ़ (पुष्ट) करता है, गरुड़ और नाग के समान नेत्रों की ज्योति को बढाता है, बुद्धि और बल को अधिक करता है ॥ ५४ ॥

शतावरीतैल—वातविकार पर।

शतावरीरसो ग्राह्यः पाच्यो वा यंत्रपीडितः ॥
प्रभूतं तद्रसं क्षिप्त्वा तैलस्याढकमेव च ॥ ५५ ॥
दधिक्षीरेण विपचेत् द्रव्याण्येतानि दापयेत् ॥

शतपुष्पा वचा कुष्ठं मांसी शैलेयचन्दनैः ॥ ५६ ॥
प्रियङ्गुपद्मकं मुस्ता ह्रीबेरोशीरकट्फलम् ॥
सैन्धवं मधुकं लोध्रं गैरिकं रक्तचन्दनम् ॥ ५७ ॥
चंडा एला मुरा स्पृक्का नलिका पद्मकेशरम् ॥
श्रीवेष्टकं सर्जरसं जीवकर्षभकौ शटी ॥ ५८ ॥
पतंगरेणुका दार्वी खर्जूरं सारिवा तथा ॥
मंजिष्ठामधुकं चैव द्रव्यैरेतैः पलोन्मितैः ॥ ५९ ॥
मध्यपाकं विजानीयात् ततस्तमवतारयेत् ॥
पथ्यं पाने तथाभ्यंगे नस्ये भोज्ये च दापयेत् ॥ ६० ॥

पहले शतावरि का रस लेकर पकावे फिर उसको यंत्र से खींच कर उसमें एक आढ़क (चार सेर) तेल डाले ॥ ५५ ॥ अनन्तर दही और दूध डाल कर पचावे फिर यह औषधियाँ डाले, सौंफ, वच, कूट, जटामासी, शिलाजीत, चन्दन ॥५६॥ मालकागनी, पद्माख, नागरमोथा, हाऊवेर, खस, कायफल, सेंधा नमक, मुलहठी, गेरू, लाल चन्दन ॥५७॥ कंनेर, इलायची, मुरहरी, बालछड़, विद्रुमलता अथवा छार छबीला, कमलकेशर, देवदारु, राल, जीरा, ककरासिंगी, कचूर ॥ ५८ ॥ सँभालू, रेणुका, दारुहलदी, खजूरफल, गौरीसर, मजीठ, मुलहठी इन औषधियों को एक एक पल (चार चार तोला) प्रमाण लेकर छोड़े ॥ ५९ ॥ फिर जब जान लेवे कि तेल पक गया तब उसको आँच से उतार लेवे इस शतावरी तेल को पथ्य में पीने को और मर्दन करने को, नास लेने को और भोजन में देना चाहिये ॥ ६० ॥

पीड्यमाने तथावाते पक्षाघाताधिमन्थके ॥
अर्दिते कर्णशूले च ऊरुस्तम्भे कटिग्रहे ॥ ६१ ॥
वमने च शिरःकम्पे सूतिकायां प्रदापयेत् ॥
मन्यास्तम्भे धनुःकम्पे अस्थिभंगे च दारुणे ॥ ६२ ॥
तथा सर्वगते वायौ शुष्यमाणेषु धातुषु ॥
अनार्तक्षीणरेतस्सु वन्ध्या या गर्भिणीषु च ॥ ६३ ॥

वृष्यं पुनर्नवाकारं बलमारोग्यदं महत् ॥
शतावरीतैलमिदं सर्ववातविकारनुत् ॥ ६४ ॥

वात विकार से पीड़ित होने में, पक्षाघात रोग में, अंग पीड़ा में, कान के शूल में, ऊरुस्तंभ में, कटि की पीड़ा में ॥ ६१ ॥ वमन में, शिरकंप में और सूतिका रोग में यह तेल देवे, तथा जावड़ा के स्तंभ में, धनुष्वात में हडफूटन में ॥ ६२ ॥ सर्वाङ्ग वात में, धातु के सूख जाने पर, वीर्य क्षीण हो जाने पर इस तेल को देवे, एवं वंध्या स्त्री को और गर्भवती स्त्री को यह तेल हितकारी है ॥ ६३ ॥ यह तेल बलदायक है, पुनर्नवाकार वृद्धि करने वाला है, महान् आरोग्य देने वाला है, यह शतावरी तेल सब प्रकार के वात विकार को नाश करने वाला है ॥ ६४ ॥

बलादितैल—वातविकार पर ।

बलाशतं गुडूच्याश्च पादं रास्नार्द्धभागकम् ॥
जलाढकशतैः पक्त्वा शतभागस्थिते रसे ॥ ६५ ॥
दधिमस्त्विक्षुनिर्यासे शुक्ततैलाढके शनैः ॥
पचेच्छागीपयोऽर्द्धांशं कल्कैरेभिः पलोन्मितैः ॥६६॥
शटीसरलदार्व्येलामंजिष्ठागरुचन्दनैः ॥
पद्मका त्रिफला मुस्ता सूर्यपर्णी च रेणुभिः ॥ ६७ ॥
यष्ट्याह्वसुरसाव्याघ्रीनखर्षभकजीवकैः ॥
पलाशरसकस्तूरीनलिकाजातिकोशकैः ॥ ६८ ॥
स्पृक्काकुंकुमशैलेयामालतीकट्फलाम्बुभिः ॥
त्वक्कुन्दरसकर्पूरीतुरुस्कश्रीनिवासकैः ॥ ६९ ॥
लवङ्गनखकंकोलकुष्टमांसीप्रियंगुभिः ॥
स्थौरेयतगरं वापि वचादमनकच्छुकैः ॥ ७० ॥
सनागकेशरं सिद्धे दद्याच्चात्रावतारिते ॥
पलमात्रं ततः पूतं विधिना तत्प्रयोजयेत् ॥ ७१ ॥

बला (बरियरा) सौ पल, उससे चौथाई गुर्च अर्थात् पचीस पल गिलोय, गुर्च से आधा भाग अर्थात् साढ़े बारह पल (५० तोला) रासनि, इनको लेके सौ

आढ़क (४०० सेर) जल में पकावे जब सौ पल शेष रह जाय तब उतार लेवे ॥६५॥ फिर उसमें दही, मठा, गुड़ और एक आढ़क सफेद तिल का तेल डाल कर मन्द आँच से पकावे फिर आधे आढ़क (२सेर) बकरी के दूध में काढ़ा कर एक पल प्रमाण नीचे लिखी औषधी डाले ॥६६॥ कचूर, सफेद निशोथ, देवदारु, इलायची, गजीठ, अगरू, चन्दन, पद्माख, आँवला, हर्र, बहेड़ा, नागरमोथा, मुद्गपर्णी अथवा माषपर्णी, रेणुका ॥ ६७ ॥ मुलहठी, रासनि, कटैया, नखी, ऋषभक, जीरा, ढाक का रस, कस्तूरी, निशोथ, जायफल ॥ ६८ ॥ स्पृक्का नामक सुगन्ध द्रव्य, केशर, शिलाजीत, चमेली के फूल, कायफल, नेत्रवाला, वाला, तज, कुन्दरस, कपूर, लोबान, चीढ़ ॥ ६९ ॥ लौंग, कलोजी, काली मिर्च, कूट, जटामासी, मालकागनी, दुद्धी, तगर, वच, दौना के फूल, कौंच के बीज ॥ ७० ॥ नागकेशर इन सब औषधियों को एक एक पल लेके मिलावे और मन्द आँच से पचावे जब तेल सिद्ध हो जाय तब उतार लेवे और विधिपूर्वक यह तेल काम में लावे ॥ ७१ ॥

बलादि तैल गुण।

कासं श्वासं ज्वरं मूर्च्छा छर्दिगुल्मक्षतक्षयान् ॥
दौर्बल्यं शिरसस्तापं सर्वधात्वावृतानिलम् ॥ ७२ ॥
प्लीहशोषावपस्मारमलक्ष्मीं च प्रणाशयेत् ॥
बलातैलमिदं श्रेष्ठं वातव्याधिविनाशनम् ॥ ७३ ॥

यह तेल खाँसी, श्वास, ज्वर, मूर्च्छा, वमन, वायगोला, क्षत (घाव) क्षयरोग, दुर्वलता, शिरपीड़ा सब धातुओं में प्राप्त वातविकार ॥ ७२ ॥ ताप-तिल्ली, सूजन, मृगी, शरीर में मलीनता इन सब रोगों को नष्ट करता है, यह बलादि तैल श्रेष्ठ है वात रोगों को नाश करने वाला है ॥ ७३ ॥

प्रसारणीतैल—वातविकार पर।

प्रसारणीक्काथपयोऽम्बुतक्रमस्त्वारनालं विपचेत्तु तैलम् ॥
कल्कीकृतं विश्वघनाम्बुकुष्ठं मांसीशताह्वामरदारुसेव्यः ॥७४॥
शैलेयरास्नागरुसारिवा च सिन्धूत्थबिल्वानलमन्थचोचैः ॥
तगरलताम्भोजपुनर्नवा स्यात्स्योनाकयष्ट्याह्वकुटन्नटैश्च ॥७५॥
छिन्नोद्भवादाव्यभयाकरंजमोदानिशाह्वैःसफलत्रिकैश्च ॥
एरण्डगोकण्टकजीवकैश्च तत्साधितं हन्त्यनलोत्थरोगान् ॥७६॥
सर्वांश्च दोषानपि पक्षघातान् वाताश्रितान्मानहनुग्रहादान्॥

सगृध्रसीविश्वविबाहुशोषान् हृन्मूर्द्ध संस्थांश्च गदांश्च तांस्तान् ॥
सशुष्कभग्नम्लाङ्गयष्टिं योऽसाध्यतामुल्बणमारुतेन ॥
नीतः पुमांस्तस्य भवेदवश्यं प्रसारणीतैलमिदं हिताय ॥७८॥

लाजवन्ती का काढ़ा बना कर उसमें दूध, काँजी, मठा और दही को क्रम से डाल कर पचावे फिर तेल डाल कर पचावे; जब तेल रह जाय तब उसमें सोंठ, सोंया, नेत्रबाला, कूट, जटामासी, सौंफ, देवदारु ॥ ७३ ॥ शिलाजीत, रासनि, अगरू, गौरीसर, सेंधानमक, बेल, अरणी, तज, तगर, मालकागनी, कमल, साँठ की जड़, सोनापाढ़ा अथवा अरलू, मुलहटी, मैनशिल ॥ ७५ ॥ गुर्च, दारुहलदी, हर्र, कंजा, मेदा, हलदी, त्रिफला, अंडी की जड़, गोखरू, जीवक, यह औषधियां डाल कर तेल को सिद्ध कर ले, यह तेल वात विकार से उत्पन्न रोगों को हरता है ॥ ७६ ॥ और जठराग्नि को प्रदीप्त करता है तथा पक्षाघात, वात विकार से प्रगट अफरा, हनुग्रह, गृध्रसी, बाहुरोग, हृदय पर सूजन, शिर पीड़ा और भी सब वात रोगों को ॥ ७७ ॥ एवं शुष्क भग्न, दारुण अंगफूटन, असाध्यपन अर्थात् देह में शिथिलता, उल्वण सन्निपात इस प्रकार वात जनित रोगों से पीड़ित मनुष्यों के रोग नाशार्थ यह प्रसारणी तैल हितकारी है ॥ ७८ ॥

चन्दनादि तैल ।

चन्दनं पद्मकं कुष्ठमुशीरं देवदारु च ॥
नागकेशरपत्रैलात्वङ्मांसीतगरं जलम् ॥ ७९ ॥
जातीफलं पूगफलं कुंकुमं जातिपत्रिका ॥
नखं कुन्दुरुकस्तूरीचंडाशैलेहृदं मनः ॥ ८० ॥
पतङ्गं पुष्करं मुस्ता रक्तचन्दनसारिवा ॥
शटी कर्पूरमंजिष्ठा लाक्षायष्टिप्रियंगुभिः ॥ ८१ ॥
शतपुष्पा वरी मूर्वा अश्वगन्धामहौषधम् ॥
पद्मकेशरश्रीविल्वसरलागरुरेणुभिः ॥ ८२ ॥
स्पृक्का लवंगकङ्कोलं द्रव्यैरेभिर्द्विकर्षकैः ॥
दशमूलकषायस्य भागा षष्ट्यायसस्तथा ॥ ८३ ॥
यवकोलकुलत्थानां बलामूलस्य चैकतः ॥

निक्वाथ्यभागो भागश्च तैलस्य च चतुर्गुणः ॥
ततः पक्वं विजानियात्क्षिप्रं तदवतारयेत् ॥
शुभे पात्रे विनिक्षिप्तमौषधैः ससुगन्धिभिः ॥ ८५ ॥

सफेद चन्दन, पद्माख, कूट, खस, देवदारु, नागकेशर, पत्रज, छोटी इलायची, तज, जटामांसी अथवा बालछड़, तगर, सुगन्धवाला ॥ ७९ ॥ जायफल, सुपारी, केशर, ज विन्त्री, खखूदनि, शल्लकी का गोंद, कस्तूरी, छारछबीला, शिलाजीत ॥८०॥ पतंग, पुहकरमूल, मोथा, लाल चन्दन, गौरीसर, कचूर, कपूर, मजीठ, लाख, मुलहठी, मालकागनी ॥ ८१ ॥ सौंफ, शतावरि, मूर्वा, असगन्ध, सोंठ, कमल केशर, वेल, निशोथ, अगरु, रेणुका ॥ ८२ ॥ गठिवन, लौंग, कंकोल, मिर्च इन औषधियों को दो दो कर्ष (दो दो तोला) प्रमाण लेवे और दशमूल का काढ़ा साठ भाग करे तथा ॥ ८३ ॥ इन्द्रजौ, वेर और कुलथी का काढ़ा कर सबको इकट्ठा कर चौगुना तिल्ली का तेल डाले और पचावे ॥ ८४ ॥ फिर जब जान ले कि भली भाँति पक गया तब उसको शीघ्र उतार लेवे और स्वच्छ पात्र में सुगन्धित औषधियों को मिला कर रख छोड़े ॥ ८५ ॥

स्त्रीणां स्त्रीवृन्दभर्तॄणामलक्ष्मीकलिनाशनम् ॥
सर्वकाले प्रयोगेण कान्तिलावण्यपुष्टिदम् ॥ ८६ ॥
जीर्णज्वरं सदाहं च शीतं च विषमज्वरम् ॥
शोषापस्मारकुष्ठघ्नं वन्ध्यानां च सुतप्रदम् ॥ ८७ ॥
अशीतिं वातजान् रोगान् वातरक्तं विशेषतः ॥
विनिर्मितमिदं तैलं आत्रेयेण महर्षिणा ॥ ८८ ॥
अस्य प्रयोगात्तैलस्य जरां न लभते नरः ॥
चन्दानादि त्विदं तैलं लोकानां च हितप्रदम्॥ ८९ ॥

इस चन्दनादि तेल के लगाने से स्त्रियों और पुरुषों के शरीर की शोभा बढ़ती है, शरीर का मल दूर हो जाता है, सब काल में इस तेल का सेवन करे तो शरीर की कांति बढ़ती है, सुन्दरता आ जाती है, यह तेल पुष्टिदायक है ॥ ८६ ॥ यह तेल जीर्णज्वर, जलन, शीतविकार, विषमज्वर देह का सूखना, मृगी और कुष्ठरोग को नाश करता है, तथा स्त्रियों को पुत्र प्रदान करता है ॥ ८७ ॥ अस्सी प्रकार के वात रोगों को हरता है, विशेष करके वातरक्त विकार को दूर करता है, यह तेल महर्षि आत्रेय जीने बनाया है ॥ ८८ ॥ इस चन्दनादि तेल के

मर्दन से मनुष्य को बुढ़ापा नहीं सताता है यह तेल लोक—जनों को हितकारी है अर्थात् मंगलदायक है ॥ ८९ ॥

वज्रतैल कुष्ठदद्रु रोग पर।

वज्रीक्षीरं रविक्षीरं तथा धत्तूरचित्रकम् ॥
महिषीविड्भवं द्रावं सर्वांशं तिलतैलकम् ॥ ९० ॥
पक्त्वे तैलावशेषं तु गोमूत्रेऽथ चतुर्गुणम् ॥
तैलावशेषं पक्त्वा च तत्तैलं प्रस्थमात्रकम् ॥ ९१ ॥
गन्धकाऽग्निशिलातालुविडंगातिविषाविषम् ॥
तिक्तकोशातकीकुष्टं वचा मांसी कटुत्रिकम् ॥ ९२ ॥
निशादारु च यष्ट्याह्वं सर्जिक्षारं च जीरकम् ॥
देवदारु च कर्षांशचूर्णं तैले विमिश्रयेत् ॥
वज्रतैलमिति ख्यातमभ्यङ्गात्सर्वकुष्ठनुत् ॥ ९३ ॥

थूहर का दूध, धतूरे का रस, तथा चीते का रस, भैंस के गोबर का रस, इन सबके बराबर तिल का तेल डाल कर ॥ ९० ॥ मन्द आँच से पचावे जब तेल रह जाय तब उसमें चौगुना गोमूत्र डाल देवे जब फिर केवल तेल रह जाय तब एक प्रस्थ (सेर भर) तेल और डाल देवे ॥ ९१ ॥ अनन्तर गन्धक, चीता मैनशिल, हरताल, वायविडंग, अतीस, विष (तेलिया मीठा) कुटकी, तोरई के बीज, कूट, वच, जटामासी, त्रिकुट (मिर्च पीपर सोंठ) ॥ ९२ ॥ दारुहलदी, मुलहठी, सज्जीखार, जीरा, देवदारु इन औषधियों को एक एक कर्ष (तोला तोला) प्रमाण लेकर चूर्ण करे और उस तेल में मिला देवे यह प्रसिद्ध वज्र नामक तैल सब प्रकार के कुष्ठरोगों को नष्ट करता है ॥ ९३ ॥

कालानलतैल कुष्ठरोग पर।

त्रिक्षारं पटुपंच कोलरजनी तालं शिलागन्धकम्
सिंदूरं रसराजरामठनृपं लोहं रसानाञ्जनम् ॥
कुष्टं तुत्थकदारुवेल्लमहिजं स्नुह्यर्कदुग्धप्लुतम्
पाच्यं सर्षपतैलमष्टदधिकं कुष्ठे हि कालानलम् ॥९४॥

सज्जी, जवाखार, सोहागा, पाँचो नमक, येर, हलदी, हरताल, मैनशिल, गन्धक, सिंदूर, पारा, हींग, भँगरा, लोहसार, रसौत, कूट, नीलाथोथा, दारुहलदी, वायविडंग, चिरायता, थूहर का दूध, मदार का दूध, इन सबको बराबर लेके आठपल सरसों का तेल और आठ पल दही मिला कर पचावे जब तेल सिद्ध हो जाय तब उतार लेवे यह कालानल तैल कुष्ठरोग में सेवन करे इसके मर्दन से कोढ़ जाता रहता है॥ ९४॥

सिन्दूरादि तैल।

सिन्दूरं चन्दनं मांसी विडंगं रजनीद्वयम्॥
प्रियंगुः पद्मकं कुष्ठं मंजिष्ठा खदिरं वचा॥ ९५॥
जात्यर्कत्रिवृतानिम्बकरंजविषमेव च॥
कृष्णाछत्रकलोध्रं च प्रपुन्नाटं च संहरेत्॥ ९६॥
अम्लपिष्टानि सर्वाणि योजयेत्तैलमात्रया॥
अभ्यङ्गेन प्रयुंजीत सर्वकुष्ठविनाशनः॥ ९७॥
पामाविचर्चिकाकच्छुविसर्पेषु हितं मतम्॥
रक्तपित्तोत्थितान् हन्ति रोगानेवंविधान् बहून्॥९८॥

सिंदूर, सफेद चन्दन, जटामासी, वायविडंग, दोनों हलदी (हलदी दारुहलदी) मालकांगनी, पद्माख, कूट, मजीठ, खैर, वच॥ ९५॥ चमेली, मदार का दूध, नीम का छाल, कंजा तेलिया मीठा, पीपर, छतौन, लोध, पमार के बीज॥ ९६॥ इन औषधियों को लेकर इमली के रस में पीसे फिर आँच पर चढ़ा कर तेल में पचावे जब तेल मात्र रह जाय तब उतार लेवे; इस सिन्दूरादि तेल के मलने से सब प्रकार के कुष्ठरोग नष्ट हो जाते हैं॥ ९७॥ तथा खाज, किलकिली, दाद, फोड़ा इन रोगों में यह तेल परम हितकारी है यह तेल रक्तपित्त से उत्पन्न अनेक प्रकार के रोगों को दूर कर देता है॥ ९८॥

गुञ्जादि तैल गंडमाला रोगपर।

गुञ्जामूलं फलं तैलं तोयं द्विगुणितं पचेत्॥
तस्याभ्यङ्गेन संमर्देद्गण्डमालां सुदारुणाम्॥ ९९॥

घुघुची की जड़, घुघुची और तेल इनको दूने जल में मन्द मन्द आंच से पचावे इस गुंजादि तेल के मर्दन से दारुण गंडमाला रोग का नाश हो जाता है ॥ ९९ ॥

भल्लातकतैल कुष्ठरोग पर।

भल्लातकं त्र्यूषणमक्षचूर्णं कुष्ठं च गुंजात्रिफला च तैलम् ॥
क्षारांश्च पंचाथ विपाचिताश्च अभ्यंजनाद्धन्ति च कुष्ठदद्रून् १००

भिलावा, सोंठ, मिर्च, पिपर, बहेड़े का चूरा, कूट, घुघुची, आंवला, हर्र बहेड़ा, कड़ुआ तेल, पाँचों नमक इन सबको लेकर मन्द आंच से पचावे यह सिद्ध तेल मलने से कोढ़ और दाद नष्ट हो जाता है ॥ १०० ॥

सिंदूरादि तैल—पामा (खाज) पर।

सिंदूरार्द्धपलं पिष्टं जीरकस्य पलं तथा ॥
कटुतैलं पचेत्ताभ्यां सद्यः पामाहरं परम् ॥ १०१ ॥

सेंदुर आधा पल (२ तोला) जीरा एक पल (४ तोला) इन दोनों को कड़ुए तेल में पचावे, यह तेल पामा (खाज) रोग को शीघ्र हर लेता है ॥१०१॥

पामा (खाज) पर लेप।

रसं गन्धं मरिचतुत्थं सिन्दूरं जीरकद्वयम् ॥
गोघृतेन समायुक्तं सर्वकण्डूर्विनश्यति ॥ १०२ ॥

पारा, गंधक, मिर्च, नीलाथोथा, सेंदुर, स्याह सफेद दोनों जीरे, इनको पीस गाय के घी में मिला कर लगाने से यह लेप सब प्रकार की खुजली को दूर करता है ॥ १०२ ॥

अर्कतैल—पामा आदि पर।

अर्कपत्रं रसे पक्वं हरिद्राकल्कसंयुतम् ॥
शोषयेत्सार्षपं तैलं पामाकच्छूविचर्चिका ॥१०३ ॥

मदार के पत्तों के रस में हलदी का काढ़ा मिला कर पचावे और सरसों

का तेल उसमें डाल कर सो जावे इस तेल के लगाने से पामा (खाज) कच्छु (दाद) विचर्चिका (फिलफिली) रोग का नाश हो जाता है ॥ १०३ ॥

नीलिकादितैल—केशविकार पर ।

नीलिका केतकीकन्दं भृंगराजः कुरंटकः ॥
तथार्जुनस्य पुष्पाणि बीजकाचसमानपि ॥ १०४ ॥
कृष्णास्तिलाश्च तगरं पद्ममूलं तथैव च ॥
अयोरजः प्रियंगुश्च दाडिमत्वग्गुडूचिका ॥ १०५ ॥
त्रिफला पद्मकाष्ठं च कल्कैरेभिः पृथक् पृथक् ॥
कर्षमानं पचेत्तैलं त्रिफलाक्वाथसंयुतम् ॥ १०६ ॥
भृंगराजरसेनैव सिद्धं केशस्थिरीभवे ॥
अकालपलितं कंडूमिन्द्रलुप्तं च नाशयेत् ॥ १०७ ॥

नील वृक्ष का पौधा, केतकी जड़, भँगरा, पीले फूल का पियाबासा, अर्जुन वृक्ष के फूल, विजयसार, बहेड़ा इन द्रव्यों को बराबर लेकर ॥ १०४ ॥ काले तिल, तगर, कमल की जड़, लोहसार, मालकागनी, अनार की छाल, गिलोय ॥ १०५ ॥ हर्र, बहेड़ा, आँवला, पद्माख इन सबको अलग अलग एक एक कर्ष (तोला तोला) भर लेकर त्रिफला के काढ़ा समेत तिल के तेल में मन्द आँच से पचावे ॥ १०६ ॥ फिर भँगरा का रस उसमें डाल कर तेल को सिद्ध करे, यह नीलिकादि तेल केशों को जमाता है अर्थात् इस तेल के लगाने से बाल काले हो जाते हैं और जहाँ के बाल गिर गये हों वहाँ पर इस तेल के मलने से उग आते हैं ॥ १०७ ॥

क्षारादितैल—व्रण (घाव) आदि पर ।

शुक्तिशम्बूकशंखानां दीर्घवृन्तान्समाह्निकान् ॥
समभागान्समादाय खरमूत्रेण भावयेत् ॥ १०८ ॥
क्षाराष्टभागं विपचेत्तैलं सर्षपजं बुधः ॥
इदमन्तः पुरे देयं तैलमात्रेण पूजितम् ॥ १०९ ॥
बिन्दुरेकः पतेद्यत्र तत्र रोम पुनर्नहि ॥

इत्थं नाडीव्रणे तैलमश्विभ्यामेव निर्मितम् ॥ ११० ॥
अर्शांसि कुष्ठरोगांश्च पालादद्रूविचर्चिका ॥
क्षारतैलमिदं श्रेष्ठं सर्वक्लेशहरं परम् ॥ १११ ॥

कुष्ठी अथवा सीपी, घोंघा, शंख, अरलू, सोनामाखी इनको बराबर लेके गधे के मूत्र में बुझावे ॥१०८॥ अनन्तर आठवाँ भाग क्षार लेके बुद्धिमान् जन सरसों के तेल में पचावे तेल मात्र रह जाने पर यह तेल घर में स्त्रियों को देवे ॥ १०९ ॥ इसका एक बूंद जहाँ गिर जाय वहाँ फिर रोम नहीं जमता है नाड़ी व्रण में हितकारी ऐसे इस तेल को अश्विनीकुमार ने निर्माण किया है ॥ ११० ॥ बवासार, कोढ़, खाज, दाद, किलकिली इन रोगों में यह क्षार तैल हितकारी है यह तेल सब क्लेशों को नष्ट कर देता है ॥ १११ ॥

कासीसादि तैल—स्तनविकार पर।

कासीसतुरगगन्धासाम्बरगजपिप्पलीविपकेन ॥
तैलेन यान्ति वृद्धिस्तनयोनिवराङ्गलिङ्गानि ॥११२॥
कटीतटनिकुंजेषु संस्थितो वातकुंजरः ॥
एरण्डतैलसिंहस्य गन्धमाघ्राय गच्छति ॥ ११३ ॥

कसीस, असगन्ध, लोध, गजपीपर, इनको अंडी के तेल में पचावे इस कासीसादि तेल के मर्दन से स्तनयोनि आदि अंग वृद्धि को प्राप्त होते हैं ॥ ११२ ॥ कमर में स्थित जो वातविकार रूपी हाथी वह इस एरण्ड तैल रूपी सिंह की गंध को सूंघ कर दूर चला जाता है ॥ ११३ ॥

इति श्रीमत्पण्डित सीतारामकृतायां योगचिन्तामणि भाषाटीकायां
तैलाधिकारो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथ

मिश्राधिकारो नाम सप्तमोऽध्यायः प्रारभ्यते ॥ ७ ॥

तत्रादौ विषयसंख्या ।

गुग्गुलुः शंखकद्रावो गन्धकं च शिलाजतु ॥
स्वर्णताम्रादिवंगादिसारमंडूरमारणम् ॥ १ ॥
अभ्रकं तस्य सत्त्वं च पारदं तालकं तथा ॥
नागताम्रं च माक्षीकं मनःशिलादिशोधनम् ॥ २ ॥
रसास्तथाऽऽसवारिष्टलेपाश्च मलमागुदम् ॥
नस्यं च रुधिरस्रावं विरेको वमनं तथा ॥ ३ ॥
स्वेदबन्धे रणोद्भूलरोष्टगंडूषधूपवत् ॥
तक्रपानकटीरोहं हिमाघामादि कथ्यते ॥ ४ ॥
केचित्साधारणा योगाः केचित्कायचिकित्सकाः ॥
वन्ध्यौषधं तथा कर्म विपाकं किंचिदुच्यते ॥
ज्वरादिरोगसंख्या च तेषामुत्पत्तिकारणम् ॥
राजप्रशस्तिरध्याये सप्तमे परिकीर्तिताः ॥ ६ ॥

अब मिश्र (बहुत से मिले हुये विषयों का) अधिकार नामक सातवाँ अध्याय प्रारंभ किया जाता है ॥ तहाँ पहले विषय संख्या लिखते हैं कि इस अध्याय में इतने विषय हैं ॥ योगराज आदि सात गूगूल, शंखद्राव, गंधक और शिलाजीत शोधन, सोना, ताँवा और वंग आदि मारण, मंडूर विधि ॥ १ ॥ अभ्रक का सत, पारा शोधन, पारा मारण, हरताल का शोधन मारण, नाग, ताँवा, सोनामाखी, मैनशिल आदि का शोधन ॥ २ ॥ रसक्रिया और आसव, अरिष्ट,

लेप, मलहम, नस्य, रक्तस्राव, विरेचन, वमन ॥ ३ ॥ स्वेद (पसीना) की क्रिया, संधेरा (बफ़ारा) उबटन, रोटी बाँधना, कुल्ला कराना, धूनी देना, मठा पिलाना, कटिपर चढ़ना, शीत और गरमी पहुंचाना ॥ ४ ॥ कुछ थोड़े से साधारण प्रयोग, देह चिकित्सा, बाँझ की औषधी, संक्षेप कर्म विपाक कहा गया है ॥ ५ ॥ ज्वर आदि रोगों की संख्या, उनकी उत्पत्ति के कारण, राजा तथा ग्रन्थ की प्रशंसा ये सब विषय इस मिश्राधिकार नामक सातवें अध्याय में कहे हैं ॥ ६ ॥

योगराज गुग्गुल ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः ॥
कुष्ठं हिंग्वजमोदा च सर्षपा जीरकद्वयम् ॥ ७ ॥
रेणुकेन्द्रयवा पाठा विडंगं गजपिप्पली ॥
कटुकाऽतिविषा भार्ङ्गी वचा मौर्वीति भागतः ॥८॥
प्रत्येकं शाणमात्राणि द्रव्याणि त्वेकविंशतिः ॥
द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्च त्रिफला द्विगुणा भवेत् ॥ ९ ॥
एभिश्चूर्णीकृतैः सर्वैः समो देयस्तु गुग्गुलुः ॥
घृतेन पिंडं संकुट्य धारयेद्घृतभाजने ॥ १० ॥
गुटिकाः शाणमात्रास्तु कृत्वा ग्राह्याः यथोचिताः ॥
गुग्गुलुर्योगराजोऽयं त्रिदोषघ्नो रसायनम् ॥ ११ ॥

पीपर, पिपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ, कूट, हींग, अजमोद, सरसों, दोनों जीरा ॥ ७ ॥ रेणुका, इन्द्रयव, पाढ़, वायविडंग, बड़ी पीपर, कुटकी, अतीस, भारंगी, वच, मरोरफली इन सब ॥ ८ ॥ इकीस औषधियों में प्रत्येक औषधियों को एक एक टंक (चार चार माशे) प्रमाण लेवे और सब द्रव्यों से दूना त्रिफला लेवे ॥ ९ ॥ फिर इन सबका चूर्ण करे और सब चूर्ण के बराबर गूगल को शुद्ध करके उसमें मिलावे, अनन्तर घी के साथ उसको सान कर पिंड बनाय घी के चिकने पात्र में धरे ॥ १० ॥ एक टंक प्रमाण की गोली बना कर इस योगराज गूगल को बलानुसार सेवन करे यह योगराज गूगल रसायन है और वात, पित्त, कफ जनित विकार, (सन्निपात) को नाश करने वाला है ॥ ११ ॥

सर्वान् वातामयान्कुष्ठान् अर्शांसि ग्रहणीगदान् ॥
प्रमेहं वातरक्तं च नाभिशूलं भगन्दरम् ॥ १२ ॥

उदावर्त्तं क्षयं गुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ॥
मन्दाग्निश्वासकासांश्च नाशयेदरुचिं तथा ॥ १३ ॥
रेतोदोषहरः पुंसो रजोदोषहरः स्त्रियः ॥
पुंसामपत्यजनको वन्ध्यानां गर्भदस्तथा ॥ १४ ॥
रास्नादिकाथसंयुक्तो विविधं हन्ति मारुतम् ॥
काकोल्यादिशृतात्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥ १५ ॥
दार्वीशृतेन मेहांश्च गोमूत्रेण च पांडुताम् ॥
मेदोवृद्धिं च मधुना कुष्ठं निंबशृतेन च ॥ १६ ॥
छिन्नाक्काथेन वातास्रं शोफं शूलं कफामयान् ॥
पाटलाकाथसहितो विषं मूषकजं जयेत् ॥ १७ ॥
त्रिफलाक्काथसहितो नेत्रार्तिं हन्ति दारुणाम् ॥
पुनर्नवादिक्काथेन हन्यात्सर्वोदराणि च ॥ १८ ॥
मैथुनाहारपानानां त्यागो नैवात्र विद्यते ॥ १९ ॥

यह योगराज गूगल सब वात रोगों को, कुष्ठरोगों को, बवासीर और संग्रहणी रोग को और प्रमेह, वातरक्त, नाभिशूल, भगंदर ॥ १२ ॥ और उदावर्त्त, क्षयरोग, वायगोला, मृगी, हृदय पीड़ा, मन्दाग्नि तथा श्वास, खाँसी, अरुचि इन रोगों को नाश कर देता है ॥ १३ ॥ एवं मनुष्यों के वीर्यदोष और स्त्रियों के रज-दोष को हरता है, मनुष्यों के सन्तान उत्पन्न कराने वाला तथा बाँझ स्त्रियों को गर्भ देने वाला है ॥ १४ ॥ यह योगराज गूगल रासनि आदि के काढ़ा के साथ सेवन करने से अनेक प्रकार के वात रोगों को हरता है, काकोली आदि के काढ़ा के साथ पित्तरोग को दूर करता है, अमलतास के काढ़ा के साथ कफ विकार को नाश करता है ॥ १५ ॥ दारुहलदी के काढ़ा के साथ सब प्रकार के प्रमेह रोग को हरता है, और गोमूत्र के साथ सेवन करने से पांडुरोग को दूर करता है, शहत के साथ सेवन करने से मेद वृद्धि को हरता है और नीम की छाल के काढ़ा के साथ सेवन करने से अठारह प्रकार के कुष्ठ रोगों को दूर करता है ॥ १६ ॥ गुर्च के काढ़ा के साथ सेवन करने से वातरक्त, सूजन, शूल और कफ जनितरोगों को नष्ट करता है, पाडरि के काढ़ा के साथ सेवन करने से मूसों से उत्पन्न विष को दूर करता है ॥ १७ ॥ त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आँवला) के काढ़ा के साथ सेवन करने से आंखों की दारुण पीड़ा को दूर करता है पुनर्नवा आदि के काढ़ा के साथ सेवन करने से सब उदर रोगों को नाश करता है ॥ १८ ॥ इस

योगराज गूगल के सेवन करने में मैथुन कर्म, खान पान का त्याग नहीं है ऐसा जानना चाहिये ॥ १९ ॥

अथवा—

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः ॥
पाठाविडंगेन्द्रयवाहिंगुभाङ्गींवचान्वितैः ॥ २० ॥
सर्षपातिविषाजाजीजीवकारेणुकान्वितैः ॥
गजकृष्णाजमोदा च मूर्वाकटुकमिश्रितम् ॥ २१ ॥
समभागान्वितैरेतैस्त्रिफला द्विगुणा भवेत् ॥
त्रिफलासहितैरेतैः समभागस्तु गुग्गुलुः ॥ २२ ॥
गुग्गुलस्य समं क्षीरं क्षीरादर्धं च सर्पिषः ॥
सर्पिः षोडश गोमूत्रं साधितं गुग्गुलीसह ॥ २३ ॥
त्रिफलासमभांड्रं लोहं चैवं चतुर्गुणम् ॥
मधुना परिप्लुतं चैव भेषजं तत्प्रकारयेत् ॥ २४ ॥
योगराज इति ख्यातो भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ॥
अर्शांसि वातगुल्मं च पांडुरोगमरोचकम् ॥ २५ ॥
नाभिशूलमुदावर्तं प्रमेहान् वातशोणितम् ॥
भगंन्दरं क्षयं कुष्ठं हृद्रोगं ग्रहणीगदम् ॥ २६ ॥
अग्निसंदीपनं चैव श्वासं कासं तथैव च ॥
रेतोदोषाश्च ये पुंसां योनिदोषाश्च योषिताम् ॥
ते सर्वे नाशमायान्ति योगराजप्रभावतः ॥ २७ ॥

पीपर, पिपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ, पाढ, वायविडंग, इन्द्रयव, हींग, भारंगी, वच ॥ २० ॥ सरसों, अतीस, स्याहज़ीरा, सफेद जीरा, सँभालू, बड़ी पीपर, अजमोद, मरोरफली, कुटकी ॥ २१ ॥ इन औषधियों को बराबर लेके इनसे दूना त्रिफला मिलाय सबके बराबर गूगल लेवे ॥ २२ ॥ गूगल के बराबर दूध, दूध से आधा घी, घी से सोलह गुणा गोमूत्र लेकर गूगल सहित सबको

आँच पर चढ़ा कर मन्द मन्द पकावे ॥ २३ ॥ और उसमें त्रिफला के बराबर मंडूर, चौगुना लोहसार मिलावे, यह औषधि शहत में मिला कर सेवन करना चाहिये ॥ २४ ॥ यह योगराज गूगल है प्रातः काल उठ कर इसको खाय, इसके सेवन से ववासीर, वातदोष, वायगोला, पाँडुरोग, अरुचि ॥ २५ ॥ नाभिशूल, उदावर्त, प्रमेह, वातरक्त, भगन्दर, क्षयी, कुष्ठरोग, हृदयरोग, संग्रहणी रोग इन सबको दूर करता है ॥ २६ ॥ यह गूगल जठराग्नि को प्रदीप्त करता है, श्वास और खाँसी को हरता है, पुरुषों के वीर्यदोष और स्त्रियों के रजदोष से जो रोग उत्पन्न हो जाते हैं वे सब रोग योगराज गूगल के प्रभाव से नाश हो जाते हैं ॥ २७ ॥

किशोर गुग्गुल ।

त्रिफलायास्त्रयः प्रस्थाः प्रस्थैका चामृता भवेत् ॥
संक्षिप्य लोहपात्रेषु सार्द्धद्रोणाम्बुना पचेत् ॥ २८ ॥
जलमर्धशृतं ज्ञात्वा गृह्णीयाद्वस्त्रगालितम् ॥
तत्र क्वाथे क्षिपेच्छुद्धं गुग्गुलं प्रस्थसंमितम् ॥ २९ ॥
पुनः प्रदेयं तत्पात्रे दार्व्या संचालयेन्मुहुः ॥
सान्द्रीभूतं च यज्ज्ञात्वा गुडपाकसमाकृतिः ॥ ३० ॥
चूर्णीकृत्वा ततस्तत्र द्रव्याणीमानि निक्षिपेत् ॥
पथ्या द्विपलिका ज्ञेया गुडूची पलिका मता ॥३१॥
षडक्षं त्र्यूषणं प्रोक्तं विडंगानि पलार्द्धकम् ॥
कर्षं कर्षं त्रिवृद्दन्त्यौ पीडितं स्निग्धभाजने ॥ ३२ ॥

हर्र, बहेड़ा, आंवला तीन प्रस्थ (तीन सेर) गुर्च एक प्रस्थ लेके लोहे के पात्र में आधा द्रोण (आठ सेर) जल मिलाय पचावे ॥ २८ ॥ जब जाने कि आधा जल रह गया तब उतार कर कपड़े से छान ले, फिर उस काढ़ा में शुद्ध गूगल एक प्रस्थ (सेर भर) ॥ २९ ॥ डाल कर पकावे और कलछी से वारंवार चलाता जाय और उसको गुड़ के पाक के समान गाढ़ा जान कर ॥ ३० ॥ आगे लिखे हुए द्रव्यों का चूर्ण उसमें मिलावे। हर्र दो पल (८ तोला) गुर्च एक पल (४ तोला) ॥ ३१ ॥ सोंठ मिर्च पीपर छ तोला, और वायविडंग आधा पल (२ तोला) निशोथ और दन्ती एक एक कर्ष (तोला तोला भर) लेकर सबको मिलाय चिकने पात्र में रक्खे ॥ ३२ ॥

गुटिकां शाणिकां कृत्वा युंज्याद्दोषाद्यपेक्षया ॥
अनुपाने भिषक् दद्यात् कोष्णं नीरं पयोऽथवा ॥३३॥
मंजिष्ठादिशृतेनापि युक्तं युक्तिमता परम् ॥
जयेत्सर्वाणि कुष्ठानि वातरक्तं त्रिदोषजम् ॥ ३४ ॥
सर्वव्रणानि गुल्मांश्च प्रमेहपीडितास्तथा ॥
तथैवोदरमन्दाग्निकासश्वयथुपांडुताः ॥ ३५ ॥
हन्ति सर्वामयानीत्थं सुखयुक्तो रसायनः ॥
कैशोरकाभिधानोऽयं कुर्यात्कैशोरकं वलम् ॥ ३६ ॥
अम्लं तीक्ष्णमजीर्णं च व्यवायं श्रममातपम् ॥
मद्यं रोषं त्यजेन्सम्यग्गुणार्थी पुरसेवकः ॥ ३७ ॥

अनन्तर उस किशोर गूगल की एक एक टंक (चार चार माशे) की गोलियाँ वनाकर दोष आदि को भली भाँति समझ कर वैद्य जन अनुपान में गरम जल के साथ देवे अथवा दूध के संग देवे ॥ ३३ ॥ अथवा युक्ति से मजीठ आदि काढ़ा के साथ बुद्धिमान् वैद्य देवे, यह किशोर गूगल सब कुष्ठरोगों को जीत लेता है और वातरक्त, सन्निपात ॥ ३४ ॥ सब प्रकार के घाव, वायगोला, तथा प्रमेह पीड़िका, उदररोग, मन्दाग्नि, खाँसी, सूजन, पांडुरोग ॥ ३५ ॥ इन सब रोगों को हरता है, सुखी करता है और रसायन है, यह किशोरगूगल किशोर अवस्था वाले के समान वलवान् करता है ॥ ३६ ॥ जो इस किशोर गूगल का सेवन करे उसको खटाई, चरपरी वस्तु, अजीर्णकारी पदार्थ, परिश्रम, सूर्य का घाम, क्रोध करना आदि परित्याग कर देना चाहिये, औषधि के गुण के निमित्त इन सबको त्याग देवे ॥ ३७ ॥

त्रिफला गुग्गुल ।

त्रिपलं त्रिफलाचूर्णं कृष्णाचूर्णं पलोन्मितम् ॥
गुग्गुलं पंचपलिकान् कुट्टयेत्सर्वमेकतः ॥ ३८ ॥
ततस्तु गुटिकां कृत्वा प्रयुञ्जाद्वह्न्यपेक्षया ॥
भगन्दरं गुल्मशोफमर्शांसि च विनाशयेत् ॥ ३९ ॥

त्रिफला (हर्रे बहेड़ा आंवला) का चूर्ण तीन पल (१२ तोला) पीपर का चूर्ण एक पल (४ तोला) और गूगल पाँच पल (२० तोला) इन सबको एक साथ मिला कर कूटे ॥ ३८ ॥ फिर उसकी गोलियाँ बना कर अग्नि के बलानुसार देवे तो भगन्दर, वायगोला, सूजन और बवासीर रोग को यह त्रिफला गूगल समूल नष्ट कर देता है ॥ ३९ ॥

कांचनार गुग्गुल ।

काञ्चनारत्वचो ग्राह्यं पलानां दशकं बुधैः ॥
त्रिफला षट्पला कार्या त्रिकटु स्यात्पलत्रयम् ॥ ४० ॥
पलैकं वरुणःकार्यं एलात्वक्पत्रकं तथा ॥
प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात्सर्वानेकत्र चूर्णयेत् ॥ ४१ ॥
यावत्सर्वमिदं चूर्णं तावन्मात्रस्तु गुग्गुलुः ॥
संकुट्य सर्वमेकत्र पिंडं कृत्वा च धारयेत् ॥ ४२ ॥
गुटिकाः शाणिकाः कृत्वा प्रातर्ग्राह्या यथोचिताः ॥
गंडमालां जयन्त्युग्रामपचामर्बुदं तथा ॥ ४३ ॥
ग्रन्थीन् व्रणानि गुल्मांश्च कुष्ठानि च भगन्दरम् ॥
प्रदेयश्चानुपानार्थं क्वाथो मुंडतिकाभवः ॥ ४४ ॥
क्वाथः खदिरसारस्य पथ्याक्वाथो यवोष्णकः ॥
काञ्चनारश्च विज्ञेयो गुग्गुलुः सर्वदोषनुत् ॥ ४५ ॥

बुद्धिमान् वैद्य कचनार की छाल दशपल (४० तोला) लेवे और त्रिफला छः पल (२४ तोला) लेवे त्रिकुटा (पीपर मिर्च सोंठ) तीन पल (१२ तोला) लेवे ॥ ४० ॥ वरना की छाल एक पल (४ तोला) लेवे तथा इलायची, तज, तेजपात, एक एक कर्ष (तोला तोला भर) लेवे सबको एकत्र कर चूर्ण बनावे ॥ ४१ ॥ फिर जितना यह सब चूर्ण हो उतना ही गूगल उसमें मिला कर कूटे फिर सब एकत्र कर टिकिया बना लेवे और रख छोड़े ॥ ४२ ॥ अनन्तर एक एक टंक (चार चार माशे भर) की गोलियाँ बना लेवे फिर बला-नुसार प्रातः समय गोली खाय तो गंडमाला, अपची, अर्बुद ॥ ४३ ॥ गाँठरोग, घाव, वायगोला, कोढ़ और भगन्दर इन सब रोगों का नाश होता है, इसका अनुपान यह है कि मुंडी के काढ़ा के साथ इस गूगल को देवे ॥ ४४ ॥ अथवा

कत्था के काढ़ा के साथ देवे, यह कचनार गूगल सब दोषों को जीत लेता है ऐसा जानना चाहिए ॥ ४५ ॥

गोक्षुरादि गुग्गुल ।

अष्टविंशतिसंख्यानि पलान्यानीय गोक्षुरात् ॥
विपचेद्षड्गुणे नीरे क्वाथो ग्राह्योऽर्द्धशेषतः ॥ ४६ ॥
ततः पुनः पचेत्तत्र पुरमष्टपलं क्षिपेत् ॥
गुडपाकसमाकारं ज्ञात्वा तं तत्र निःक्षिपेत् ॥ ॥ ४७ ॥
त्रिकटु त्रिफला मुस्तं चूर्णन्तु पलसप्तकम् ॥
ततः पिंडीकृतस्तस्य गुटिकामपि योजयेत् ॥ ४८ ॥
हन्यात्प्रमेह कृच्छ्रं च प्रदरं मूत्रघातकम् ॥
वातास्रं पित्तरक्तं च शुक्रदोषं तथाऽश्मरीम् ॥ ४९ ॥

गोखरू अट्ठाईस पल (११२ तोला) प्रमाण लेवे और उसे छः गुणे (साढ़े दश सेर) जल में औटावे जब आधा जल रह जाय ॥४६॥ तब फिर उसमें आठ पल (आधा सेर) गूगल मिला कर चला देवे जब गुड़ के पाक के तुल्य गाढ़ा हो जाय तब आगे लिखी औषधियाँ उसमें डाल देवे ॥ ४७ ॥ त्रिकुटा (पीपर मिर्च सोंठ) त्रिफला (आँवला हर्र बहेड़ा) नागरमोथा इनका चूर्ण सात पल प्रमाण डाले फिर उन सबकी पिंडी बनाय एक एक टंक (चार चार माशा) की गोलियाँ बना लेवे और सेवन करे ॥ ४८ ॥ ये गोक्षुरादि गूगल की गोलियाँ प्रमेह, सुजाक, प्रदर, मूत्राघात, वातरक्त, रक्तपित्त और वीर्य दोष, तथा पथरी इन रोगों को नष्ट कर देता है ॥ ४९ ॥

सिंहनाद गुग्गुल ।

फलत्रिकोशारविडङ्गदन्तीपुनर्नवाम्भोधरवह्निशिवौ ॥
रास्नाऽमृताभीरुसुराह्वदार्वीसग्रन्थिकैलेभकणापलांशैः ॥५०॥
द्रोणाम्भसो गुग्गुलतुल्यभागैरर्द्धं शृतः सूक्ष्मपटान्तपूतैः ॥
भूयःशृतैरङ्गुलिधेयरूपो लेहः सुशीतो भुवि भाजनस्थः ॥५१॥
सुचूर्णितत्र्यूषणजन्तुहन्त्री छिन्नोद्भवादार्व्यभयात्रिजातैः ॥

त्रिवृत्समै रक्षमितं विचूर्ण्य निधाय गुप्तं यवधान्यपूते ॥
मासे स्थितं प्राश्य शुभेऽह्नि शुद्धः प्रयात्यरोगं रुजितो मनुष्यः ५२

हर्र, बहेड़ा, आँवला, खस, वायविडंग, जमालगोटा की जड़, साँठी, नागरमोथा, चीता, सोंठ, रासनि, गुर्च, शतावरि, हलदी, देवदारु, पिपलामूल, इलायची, बड़ी पीपर यह औषधियाँ एक एक पल (४।३ तोला) लेवे ॥ ५० ॥ और जल एक द्रोण (१६ सेर) गूगल सब औषधियों के बराबर लेकर डाले, मन्द मन्द आँच से पचाने पर जब आधा जल रह जाय तब महीन कपड़ा से छाने फिर धीमी आँच से औटा कर गाढ़ा हो जाने पर उतार ले ॥५१॥ फिर मिर्च, पीपर, सोंठ, वायविडंग, गुर्च, दारुहलदी, हर्र, त्रिजात (तज तेजपात इलायची) निशोथ इन सबको एक एक अक्ष (तोला तोला भर) ले चूर्ण करके उसमें मिलावे और जौ अथवा धानों में एक महीना भर रख छोड़े फिर अच्छा दिवस विचार कर उस दिन से यह सिंहनाद गूगल सेवन करे तो रोगी मनुष्य आरोग्य हो जाता है ॥ ५२

शोफोदरप्लीहरुजोविकारनाभिव्रणार्शो ग्रहणीप्रदोषैः ॥
सवातरक्तैः सकलैश्च कुष्ठैर्विमुच्यते पांडुगदैश्च घोरैः ॥५३॥
प्रभंजने रोगमहत्तरूणां विवर्धनो भोगबलायुषां च ॥
नासाध्यमस्तीति विकारजातं ख्यातस्तु नाम्ना भुवि सिंहनादः ५४

इस गूगल के सेवन से सूजन, उदर विकार, तापतिल्ली रोग, नाभि विकार, घाव, बवासीर, संग्रहणी दोष, वातरक्त सब प्रकार के कोढ़ और कठिन पांडुरोग ये सब रोग दूर हो जाते हैं ॥ ५३ ॥ यह गूगल रोगरूपी बड़े बड़े वृक्षों को उखाड़ने को वायु के समान है। सुखभोग, बल और आयु को बढ़ाने वाला है, इसके प्रभाव से कोई रोग असाध्य नहीं होता है इसीसे यह गूगल पृथ्वी में सिंहनाद नाम से प्रसिद्ध है ॥ ५४ ॥

चन्द्रप्रभा गुग्गुल।

बिल्वं व्योषफलत्रिकं त्रिलवणं द्विक्षारचव्यानि च
श्यामापिप्पलमूलमुस्तककणामाक्षीकधान्यात्वचः।
षड्ग्रन्थामरदारुवारणकणाभूनिम्बदन्तीनिशा
पत्रैलातिविषापिचुप्रमितयो लोहस्य कर्षाष्टकम् ॥५५॥

त्वक्क्षीरं पलिकं परं दशपलान्यष्टौ शिलाजिन्मतां
मत्स्यंडी कुडवोन्मितेनिगुटिकां संयोज्य कुर्याद्भिषक् ॥
तन्नैकां प्रतिवासरं सहविषा चौद्रेण लिह्यादिमां
तक्रं चैव पयोरसं मधुयुतं तावत्पिबेन्मात्रया ॥ ५६ ॥

बेल की गूदी, त्रिकुटा (मिर्च पीपर सोंठ) त्रिफला (आँवला हर्र बहेड़ा) तीनों नमक (कच सोंचर सेंधा) दोनों खार (सज्जी जवाखार) चव्य, श्यामा (गुर्च) पिपलामूल, नागरमोथा, कणा (सफेद जीरा) सोनामाखी, धनियाँ, तज, फंजा, देवदारु, बड़ी पीपर, चिरायता, जमालगोटा की मींगी, हलदी, तेजपात, इलायची, अतीस, नीम की छाल इन सबको बराबर बराबर लेवे लोहसार आठ कर्ष (८ तोला भर) लेवे ॥ ५५ ॥ वंशलोचन एक पल (४ तोला भर) गूगल दशपल (४० तोला) और शिलाजीत आठ पल (३२ तोला) मत्स्यण्डी (मीश्री) एक कुडव (१६ तोला) इन सबको वैद्यजन एकत्र करे और एक एक टंक (चार चार माशा) की गोलियाँ बनावे, फिर प्रतिदिन एक गोली घी अथवा शहत के साथ सेवन करे ऊपर से बलानुसार मठा अथवा दूध में शहत मिला कर पीवे अपने में जितना बल हो उसीके अनुसार औषध सेवन करे ॥ ५६ ॥

अर्शांसि प्रदरं ज्वरं सुविषमं नाडीव्रणानश्मरीं
कृच्छ्रं विद्रधिमग्निमान्द्यमुदरं पांड्वामयं कामलाम् ॥
यक्ष्माणं सभगन्दरं सपिडिकागुल्मप्रमेहारुचिं
रेतोदोषमुरःक्षतं कफमरुत्पित्तार्तिमुग्रां जयेत् ॥ ५७ ॥
वृद्धं संजनयेद्युवानमसमोजस्कं बलं वर्द्धयेत् ॥
एतस्यां न निषिद्धमन्नमसकृत्स्वेच्छागमं मैथुनम् ॥
विख्याता गुटिकेयमश्वितरा चन्द्रप्रभा नामत-
श्चन्द्रानन्दकरी करोति रुचिरां चन्द्रेण तुल्यां तनुम् ॥५८॥

यह गूगल सेवन करने से बवासीर, प्रदर, ज्वर, विषमज्वर, नाड़ीव्रण, पथरी, सुजाक, विद्रधि, जठराग्नि की मन्दता अर्थात् मन्दाग्निरोग, उदररोग, पांडुरोग, कामला, यक्ष्मा, भगन्दर, पिड़िका, वायगोला, प्रमेह, अरुचि, वीर्य-विकार, उरःक्षत, कफवात पित्तजनित दारुण पीड़ा इन रोगों को नाश करता है ॥ ५७ ॥ यह गूगल बूढ़े मनुष्यों को युवावस्था वाले के तुल्य करता है, वीर्य

और वल को वढ़ाता है, इसके सेवन करने पर मैथुन करने में दोष नहीं है परंतु एक वार प्रसंग करना चाहिये, दूसरी वार कदापि मैथुन की इच्छा नहीं करना चाहिये, यह प्रसिद्ध चन्द्रप्रभा नाम गुटिका चन्द्रमा के समान आनन्द देने वाली और चन्द्रमा के तुल्य ही देह की शोभा को वढ़ाती है ॥ ५८ ॥

शंखद्राव ।

स्फटिका च यवक्षारं शोरोऽथ नवसादरम् ॥
समभागैस्त्वथाभिश्च शंखद्रावो रसो मतः ॥ ५६ ॥
काचकूपीद्वयं नीत्वा दत्त्वा कर्पटमृत्तिकाम् ॥
एकस्य विवरं कृत्वा भृत्वा चान्याः सदौषधीः ॥ ६० ॥
गजकुंभास्ययंत्रेण चुल्ल्यां च खर्परोपरि ॥
धृत्वा दत्त्वा च मन्दाग्निं तद्रसं काचभाजने ॥ ६१ ॥
गृहीत्वा स्थापयेत्सम्यक् ग्रहणीयं शुभे दिने ॥
शंखो द्रवति तन्मध्ये शंखद्रावस्ततो मतः ॥ ६२ ॥

स्फटिका (फटकरी) जवाखार, शोरा, नौसादर इन चारों द्रव्यों को समान भाग लेवे इनसे निकले हुए रस को शंखद्राव कहते हैं ॥५९॥ इस रस को निकालने के निमित्त पहले एक काँच की कुप्पी कपड़ मिट्टी करके रक्खे और एक कुप्पी में छेद कर उसमें औषधी भर लेवे ॥ ६० ॥ इसको गजकुम्भ यंत्र करके चूल्हे पर चढ़ा देवे और मन्द मन्द आँच करे जव औषधियों का रस दूसरी शीशी में आ जाय ॥ ६१ ॥ तव उसे लेकर रख छोड़े और अच्छे दिन में नियमपूर्वक सेवन करे इसमें शंख अथवा कौड़ी डाल देने से गल जाती है इसीसे इसको शंखद्राव कहते हैं ॥ ६२ ॥

कुंभकेन प्रमुंचेत जिह्वाग्रे तालुकोपरि ॥
दन्ताः पतन्ति लग्नेऽस्मिन् शेषरोगस्य का कथा ॥६३॥
अखिलोदररोगाणां निहन्त्यागुल्मकस्य च ॥
कालिजं प्लीहकं हन्ति हृद्रोगं ग्रहणीं यकृत् ॥ ६४ ॥
उर्ध्वश्वासं कफं कासं आमवातं विनाशयेत् ॥
कान्तिं नीरोगतां पुष्टिं जठराग्निं विवर्धयेत् ॥६५॥

इस शंखद्राव को रुई के फोहा में भिगो कर जीभ के आगे तालू पर लगा देवे, दाँतों में नहीं लगे क्योंकि दाँतों में लगने से दाँत गिर जाते हैं शेष रोग का तो कहना ही क्या है ॥ ६३ ॥ यह शंखद्राव सब प्रकार के उदर रोगों को और वायगोला को, तथा कालिज, तापतिल्ली, हृदयरोग, संग्रहणी, यकृत् (कलेजा का रोग) इन रोगों को हरता है ॥ ३४ ॥ तथा ऊर्ध्व श्वास, कफ, खाँसी, आमवात इन रोगों को नाश करता है और शरीर की कांति (शोभा) को, आरोग्यता और पुष्टि को बढ़ाता है जठराग्नि को प्रबल करता है ॥ ६५ ॥

गन्धक विधि ।

लोहपात्रे विनिक्षिप्य घृतमग्नौ प्रतापयेत् ॥
तप्ते घृते तत्समानं क्षिपेद्गन्धकजं रसम् ॥६६॥
गलितं गन्धकं ज्ञात्वा दुग्धमध्ये विनिक्षिपेत् ।
एवं गधकंशुद्धिः स्यात्सर्वकार्येषु योजयेत् ॥६७॥

लोहे के एक पात्र में घी डाल कर आँच पर रख कर तपावे जब घी भली भाँति तप जावे तब उसके समान गन्धक उसमें छोड़ देवे ॥ ६६ ॥ गन्धक गल जाने पर उसको दूध में डाल देवे इस रीति से सब काम में लाने योग्य शुद्ध गन्धक हो जाता है अर्थात् गन्धक को इस प्रकार शुद्ध करके काम में लावे ॥ ६७ ॥

तथाच ।

दुग्धे घृते निम्बरसे भृङ्गराजरसेऽथवा ॥
गन्धकं शोधयेत्प्राज्ञो दोलायंत्रेण वाससा ॥६८॥
सदुग्धभांडेऽपि पटास्थितोऽयं शुद्धो भवेत्कूर्मपुटेन गन्धः ॥
सदुग्धभांडस्य मुखे सुवस्त्रं बद्धं क्षिपेद्गन्धकसूक्ष्मखंडान् ॥
विमुद्रयित्वा समितादिना तन्मन्दाग्निना याममुगं पचेच्च ६९

बुद्धिमान् वैद्य गन्धक को दूध में, घी में, नीम के रस में अथवा भँगरा के रस में शोधे, एक हाँडी में गन्धक को कपड़ा की पोटली में लपेट कर रख कर दोलायंत्र द्वारा मंद आँच देवे ॥ ६८ ॥ फिर एक हाँडी में दूध भर कर उसमें कपड़े से लिपटे गन्धक को रख कर मन्द मन्द आँच देवे इस प्रकार कूर्म पुट से गंधक शुद्ध हो जावे तब निकाल कर महीन पीसे और बारीक पुष्ट वस्त्र में बाँध

मुद्रा कर के दिन भर अर्थात् चार पहर तक यंत्र में रक्खे अनन्तर दो पहर मन्दी आँच से पचावे तो गन्धक शुद्ध हो जाता है ॥ ६९ ॥

शोधितं गन्धकं यावत्तावती त्रिफला भवेत् ॥
द्वयोस्तुल्या सिता देया कर्षार्द्धं खादयेत्सुधीः ॥७०॥
कंडूविचर्चिकादद्रूसिध्ममण्डलकुष्ठनुत् ॥
अम्लक्षारहिंगुतैलमग्नितापं च वर्जयेत् ॥७१॥

जितना शुद्ध गन्धक हो उतना ही त्रिफला, और गन्धक त्रिफला के बराबर मिश्री मिला कर रख छोड़े, बुद्धिमान् वैद्य रोगी को आधा कर्ष (दो टंक) अर्थात् आठ मासा भर खाने को देवे ॥ ७० ॥ यह शुद्ध गन्धक खाज, विचर्चिका, दाद, सेहुआँ, चकत्ता, कोढ़ इन सब रोगों को दूर करता है, इसके सेवन में खटाई, खरी पदार्थ, हींग, तेल, आग तापना त्याग कर देवे ॥ ७१ ॥

शिलाजतु शोधन ।

शिलाजतु समानीय ग्रीष्मतप्तशिलाजतु ॥
गोदुग्धैस्त्रिफलाक्काथैर्भृङ्गद्रावैश्च मर्दयेत् ॥
आतपे दिनमेकैकं तत्सिद्धं शुद्धतां व्रजेत् ॥ ७२ ॥

अच्छा शिलाजीत लेकर उसे ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की धूप से तपा कर गौ के दूध के साथ और त्रिफला के काढ़ा के साथ तथा भँगरा के रस के साथ घोटे, एक एक दिन पुट देता जाय और धूप में सुखाता जाय तो शिलाजीत शुद्ध हो जाता है ॥ ७२ ॥

अथवा—

मुख्यं शिलाजतुशिलासूक्ष्मखंडं प्रकल्पयेत् ॥
निक्षिप्यात्युष्णपानीये यामैकं स्थापयेत्सुधीः ॥ ७३ ॥
मर्दयित्वा ततो नीरं गृह्णीयाद्वस्त्रगालितम् ॥
स्थापयित्वा च मृत्पात्रे धारयेदातपे पुनः ॥ ७४ ॥
आलोड्य च पुनस्तस्मादुपरिस्थ घनं जयेत् ॥
अधःस्थितं च यच्छेषं तस्मिन्नीरे विनिक्षिपेत् ॥ ७५ ॥

विसर्व्व धारयेद्‌घर्मे पूर्ववच्चैव तं नयेत् ॥
एवं पुनः पुनर्नीत्वा द्विमासाभ्यां शिलाजतु ॥ ७६ ॥
शुद्धत्कार्यक्षमं वह्नौ क्षिप्तं लिङ्गोपमं भवेत् ॥
निर्धूमं च ततः शुद्धं सर्वकर्मसु योजयेत् ॥७७॥
एलापिप्पलिसंयुक्तं माषमात्रं तु भक्षयेत् ॥
मूत्रकृच्छ्रं मूत्ररोधं हन्ति मेहं तथा क्षयम् ॥ ७८ ॥

असली शिलाजीत के छोटे छोटे टुकड़े कर के गरम पानी में एक पहर तक भि वे ॥ ७३ ॥ फिर मल कर कपड़े से छान ले और मिट्टी के पात्र में रख कर धूप में रख देवे ॥ ७४ ॥ अनन्तर उसको मथे, मथने पर जो म ाई ऊपर आवे उसे लेता जाय और नीचे जो पानी शेष रहे उसे फेंक देवे ॥ ७५ ॥ ऐसे मलता जाय और धूप में रख रख कर ऊपर की मलाई लेता जाय और नीचे का पानी फेंकता जाय, इसी रीति से दो महीना पर्यन्त शिलाजीत को शुद्ध करे ॥ ६ ॥ इस प्रकार शुद्ध किये हुए शिलाजीत की पहिचान यह है कि अग्नि पर रखने से यढ़ कर लंबा हो जाता है और धुआँ नहीं उठता है, जब इस प्रकार परीक्षा में कार्य के योग्य हो जाय तब उसे शुद्ध जान कर सब कामों में ग्रहण करे ॥ ७७ ॥ इलायची और पीपर के संग माशा भर खावे तो यह शिलाजीत सुजाक, मूत्र का रुक जाना और प्रमेह तथा क्षयरोग को नाश करता है ॥ ७८ ॥

स्वर्णादिधातु मारण।

तैले तक्रे गवां मूत्रे कांजिके च कुलत्थके ॥
तप्ततप्तानि सिंचेत द्रावे द्रावे तु सप्तधा ॥७९॥
सुवर्णरौप्यताम्राणां पत्राण्यग्नौ प्रतापयेत् ॥
प्रसिंचेत्तप्ततप्तानि तैले तक्रे च संस्थिते ॥८०॥
गोमूत्रे च कुलत्थानां कषाये च त्रिधा त्रिधा ॥
एवं स्वर्णादिलोहानां विशुद्धिः सम्प्रजायते ॥८१॥

तेल, मठा, गाय का मूत्र और काँजी इनमें अलग अलग धातु को तपा तपा कर सात सात बार बुझावे ॥ ७९ ॥ सोना, चाँदी, तांबा इनके पत्रों को तपा तपा कर तेल, मठा में ॥ ८० ॥ और गाय के मूत्र तथा कुलथी के काढ़ा में

तीन तीन बार बुझावे इस प्रकार सोना आदि की और लोहा आदि की शुद्धि हो जाती है ॥८१॥

मृगांक विधि।

स्वर्णस्य द्विगुणं सूतमम्लेन सह मर्दयेत् ॥
तद्गोलकसमं गन्धं निदध्यादधरोत्तरम् ॥८२॥
गोलकं च ततो रुद्ध्वा शरावदृढसम्पुटे ॥
त्रिंशद्वनोपलैर्दद्यात्पुटेनैव चतुर्दश ॥८३॥
निरुत्थं जायते भस्म गन्धो देयः पुनः पुनः ॥८४॥

सोने के दूने पारे को लेकर खटाई के साथ घोटे फिर गोली बनाय उसके बराबर गन्धक लेकर पारा को नीचे ऊपर रख कर संपुट करे ॥ ८२ ॥ फिर दो सकोरों के संपुट में दृढ़तापूर्वक रख कर कपड़ मिट्टी करे और तीस विनुआ कंडों की आँच देवे इस प्रकार चौदह पुट देवे ॥ ८३ ॥ और बार बार गन्धक डाले तो वह ऐसा भस्म हो जाता है कि फिर नहीं उठता है ॥ ८४ ॥

अथवा—

भूर्जवत्सूक्ष्मपत्राणि हेम्नः सूक्ष्माणि कारयेत् ॥
तुल्यानि तानि सूतेन खल्वे क्षिप्त्वा विमर्दयेत् ॥८५॥
कांचनाररसेनैव ज्वालामुख्या रसेन वा ॥
लांगल्या वा रसैस्तावद्यावद्भवति पिष्टकम् ॥८६॥
तथा हेम्नश्चतुर्थांशं टंकणं तत्र निक्षिपेत् ॥
पिष्टं मौक्तिकचूर्णं च स्वर्णाद्द्विगुणितं क्षिपेत् ॥८७॥
तेषु सर्वं समं गन्धं क्षिप्त्वा चैकत्र मर्दयेत् ॥
तेषां कृत्वा ततो गोलं वासाभिः परिवेष्टयेत् ॥८८॥
पश्चान्मृदा वेष्टयित्वा शोषयित्वा च साधयेत् ॥
शरावसंपुटस्यान्ते तत्र मुद्रां प्रयोजयेत् ॥८९॥

लवणापूरिते भाण्डे धारयेत्तं च सम्पुटम् ॥
मुद्रां दत्वा शोपयित्वा बहुभिर्गोमयैः पचेत् ॥६०॥

सोने के पत्र भोजपत्र के तमान वारीक कतरे और उतने ही पारे के साथ खरल में डाल कर घोटे ॥ ८५ ॥ अनन्तर कचनार का रस या ज्वालामुखी का रस अथवा करियारी के रस के साथ तब तक घोटे, जब तक पिट्ठी हो जाय ॥८६॥ फिर उसमें सोने से चौथाई सोहागा डाले और सोने से दूना मोती चूरा डाले ॥ ८७ ॥ फिर उनके बराबर गंधक डाल सबको इकट्ठा कर घोटे तदनन्तर उनका गोला बना कर कपड़े से लपेटे ॥ ८८ ॥ पश्चात् मिट्टी लपेट कर सुखावे सूख जाने पर दो सकोरों के संपुट में रख कपड़ मिट्टी कर सुखा लेवे ॥ ८६ ॥ अनन्तर मिट्टी की हाँड़ी नीचे ऊपर नमक भर बीच में उस संपुट को रख कपड़ मिट्टी कर सुखा लेवे और बहुत से बिनुआ कंडों की आँच देवे ॥ ६० ॥

ततः शीते समाहृत्य गन्धं सूतसमं क्षिपेत् ॥
धृत्वा च पूर्ववत्खल्वे पचेद्गजपुटेन च ॥६१॥
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा गुंजायुग्मं प्रयोजयेत् ॥
अष्टाभिर्मरिचैर्युक्ता कृष्णात्रययुता तथा ॥९२॥
विलोक्य देया दोषादीनेकैका रसरक्तिका ॥
सर्पिषा मधुना चापि देया पथ्यं च भोजयेत् ॥६३॥
मृगांकोऽयं रसो हन्यात्कृशत्वं बलहीनताम् ॥
श्लेष्माणं ग्रहणीं कासं श्वासं क्षयमरोचकम् ॥
अग्निं च कुरुते दीप्तं कफवातान्नियच्छति ॥९४॥

फिर शीतल हो जाने पर गन्धक को पारा के बराबर लेकर उसमें डाले और पूर्व रीति के अनुसार खरल में घोट कर गजपुट की आँच देवे ॥ ९१ ॥ स्वांग शीत होने उपरान्त उसे उतार कर निकाल लेवे और दो रत्ती भर मात्रा आठ मिर्चों के साथ तथा तीन पीपर सहित ॥ ९२ ॥ दोष आदि को देख कर एक एक रत्ती से छ रत्ती तक घी और शहत के साथ दिया जा सकता है, परंतु पथ्य भोजन करे, अर्थात् परहेज से रहे गरिष्ट और रोगवर्द्धक कोई पदार्थ नहीं खावे ॥ ९३ ॥ यह मृगांक रस दुर्बलता और बलहीनता (कमजोरी) को हरता है और कफ, संग्रहणी, खाँसी, श्वाँस, क्षय और अरुचि इन रोगों को नाश करता है जठराग्नि को प्रदीप्त करता है कफवात विकार को दूर करता है ॥ ९४ ॥

तथाच—

शुद्धं सूतं स्वर्णपत्रं जम्बीरे मर्दयेत्समम् ॥
तयोर्द्विगुणिता मुक्ता त्रिभिस्तुल्यं तु गन्धकम् ॥९५॥
टंकणं गन्धकादर्द्धं सर्वं जम्बीरजैर्द्रवैः ॥
मर्द्यं यामेन तद्गोलं वस्त्रे बद्ध्वा विपाचयेत् ॥९६॥
दोलायंत्रेण पाताले यामादुद्धृत्य शोषयेत् ॥
ततो मृण्मयभाण्डान्तर्लवणं चाङ्गुलीद्वयम् ॥९७॥
क्षिप्त्वा तद्धि क्षिपेत्पूर्वं गोलकं वस्त्रवेष्टितम् ॥
लवणैः पूरयेद्भाण्डं मुद्रयित्वा दिनं पचेत् ॥९८॥
चुल्ह्यां क्रमाग्निना सिद्धो मृगाङ्कोऽयं महारसः ॥
राजरोगनिवृत्त्यर्थं देयो गुंजामितो घृते ॥ ९९ ॥
दशभिर्मरिचैःसार्द्धं पिप्पल्या मधुनाऽपि च ॥ १०० ॥

तथा शुद्ध पारा, सोने के पत्र वरावर लेके जँभीरी के रस में घोटे और दोनों से दूना मोती चूरा फिर तीनों के वरावर गन्धक लेवे ॥ ९५ ॥ गन्धक से आधा सोहागा लेकर सबको जंभीरी के रस के साथ एक पहर भर घोट कर उसका गोला वनाय वस्त्र में लपेट कर मन्द आँच से पकावे ॥ ९६ ॥ दोलायंत्र करके पाताल यंत्र में पकने पर एक पहर के उपरान्त निकाल लेवे और फिर सुखा लेवे और मिट्टी की हाँड़ी में नीचे ऊपर दो दो अंगुल नमक ॥ ९७ ॥ भर उसमें वह गोला रख कपड़ मिट्टी कर उस लवण से पूरित हाँड़ी को मुद्रा कर एक दिन भर पकावे ॥ ९८ ॥ चूल्हे पर क्रम से आँच देवे सो इस प्रकार कि पहले धीमी आँच देवे फिर मध्यम आँच फिर अधिक आँच देने से यह मृगांक रस सिद्ध होता है इस मृगांक रस को राजरोग निवारणार्थ घी के साथ एक रत्ती प्रमाण देवे ॥ ९९ ॥ अथवा दशमिर्च वा पीपर और शहत के संग देवें अर्थात् मिर्च शहत में अथवा पीपर शहत में मिला कर देवे ॥ १०० ॥

राजमृगांक रस।

सूतभस्म त्रयो भागा भागैकं भस्म हेमकम् ॥
मृतताम्रस्य भागैकं शिलागन्धकतालकम् ॥ १०१ ॥

प्रतिभागद्वयं शुद्धमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥
वराटं पूरयेत्तेन छागीक्षीरेण टंकणम् ॥ १०२ ॥
क्षिप्त्वा तेन मुखं रुद्ध्वा मृद्भाण्डे तन्निरोधयेत् ॥
शुष्कं गजपुटे पक्त्वा चूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम् ॥ १०३ ॥
रसो राजमृगाङ्कोऽयं चतुर्गुंजः क्षयापहः ॥
दशपिप्पलिका क्षौद्र एकोनत्रिंशदूषणैः ॥ १०४ ॥

तीन भाग पारे की भस्म, एक भाग तांबे की भस्म, शिलाजीत, गन्धक, हरताल ॥ १०१ ॥ यह तीनों प्रत्येक दो दो भाग शुद्ध लेवे और सबको इकट्ठा कर अर्थात् मिला कर चूर्ण करे उस चूर्ण को कौड़ियों में भरे बकरी के दूध और सुहागा से ॥ १०२ ॥ उसके मुख को बन्द कर मिट्टी की हांड़ी में धरे फिर कपड़ मिट्टी करके सुखा लेवे फिर गज पुट में रख कर मन्द आँच से पकावे और स्वाँग शीतल हो जाने पर निकाल लेवे ॥ १०३ ॥ यह राजमृगांक, रस चार रत्ती मात्रा दश पीपर शहत और उनतीस काली मिर्च के साथ रोगी को देने से क्षयरोग को दूर करता है ॥ १०४ ॥

ताम्र (तांबा) मारण ।

सूक्ष्माणि ताम्रपत्राणि कृत्वा संशोधयेद्बुधः ॥
वासरत्रयमम्लेन ततः खल्वे विमर्दयेत् ॥ १०५ ॥
पादांशं सूतकं दत्वा याममम्लेन मर्दयेत् ॥
तत उद्धृत्य पात्राणि लेपयेद्द्विगुणेन च ॥ १०६ ॥
गन्धकेनाम्लपिष्टेन तस्य कुर्य्याच्च गोलकम् ॥
धृत्वा तद्गोलकं भांडे शरावेण च रोधयेत् ॥ १०७ ॥
वालुकाभिः प्रपूर्याथ विभूतिलवणाम्बुभिः ॥
दत्वा भाण्डमुखे मुद्रां ततश्चुल्ल्यां विपाचयेत् ॥ १०८ ॥
क्रमवृद्धाग्निना सम्यक् यावद्यामचतुष्टयम् ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य मृतंताम्रं शुभं भवेत् ॥ १०९ ॥

ताँबे के पत्रों को बारीक कतरे और बुद्धिमान् वैद्य उनको भली भाँति शोधे, फिर तीन दिन पर्यन्त खटाई के साथ खरल में डाल कर घोटे ॥ १०५ ॥ फिर चौथाई पारा डाल कर इमली के रस में तीन पहर तक घोटे, अनन्तर ताँबे के पत्रों को निकाल कर दूना गन्धक नीबू के रस में घोट उन पत्रों पर लेपे और गोली बना कर उस गोली को दो सकोरों के मध्य में रख कर कपड़मिट्टी करे फिर एक मिट्टी की हाँड़ी में ॥ १०६ ॥ १०७ ॥ वालू भरे, अथवा नमक भर कर बीच में सकोरा रख देवें और हांड़ी को कपड़मिट्टी कर चूल्हे पर चढ़ा कर पकावे ॥ १०८ ॥ आँच को क्रम से पहले मन्द फिर मध्यम फिर तेज आँच चार पहर तक देवे जब स्वाँग शीतल हो जाय तब उतार लेवे यह सुन्दर ताम्र भस्म हो जाती है इस को ताम्रेश्वर रस कहते हैं ॥ १०९ ॥

ताम्र भस्म गुण।

ऊर्ध्वश्वासं कफं कासं हृद्रोगं पांडुतां क्षयम् ॥
जयेत्प्रमेहकुष्ठार्शशोफशूलाग्निमन्दताम् ॥ ११० ॥
अशुद्धं वातमुत्क्लेदं मूर्च्छादोषं करोति च ॥
अपक्वं कान्तिधातुघ्नं भ्रमशूलोष्मकुष्ठकृत् ॥ १११ ॥
न विषं विषमित्याहुस्ताम्रं तु विषमुच्यते ॥
एको दोषो विषे ताम्रे चाष्टौ दोषा प्रकीर्तिताः ॥११२॥
भ्रमो मूर्च्छा विदाहश्च स्वेदः क्लेदस्तथा तमः ॥
अरुचिश्चित्तसन्तापस्ताम्रे दोषा प्रकीर्तिताः ॥ ११३ ॥

यह शुद्ध ताँबे की उत्तम भस्म ऊपर की श्वाँस, कफ, खाँसी, हृदयरोग, पाँडुरोग, क्षयी, प्रमेह, कोढ़, बवासीर, सूजन, शूल, मन्दाग्नि इन रोगों को हरती है ॥ ११० ॥ और यदि ताँबा अशुद्ध हो भली भांति नहीं शोधा हो तो वातविकार, व्याकुलता, मूर्च्छा इन दोषों को उत्पन्न करता है और बिना पका अर्थात् कच्चा ताँबा कान्ति और धातु को नष्ट कर देता है, भ्रम, शूल, गरमी और कुष्ठरोग को उत्पन्न करता है ॥ १११ ॥ विष को विष नहीं कहते हैं अपक्व तांबा ही विष कहा गया है क्योंकि विष में एक ही दोष है और ताँबे में आठ दोष कहे गये हैं ॥ ११२ ॥ वे दोष यह हैं, भ्रम, मूर्च्छा, जलन, पसीना आना, व्याकुलता, तम (क्रोध) अरुचि, चित्त में संताप, यह आठ दोष ताँबे में कहे गये हैं ॥ ११३ ॥

वंग भस्म ।

मृत्पात्रे द्राविते वंगे चिंचाश्वत्थत्वचो रसः ॥
चिप्त्वा क्षिप्त्वा चतुर्थांशमयोदर्व्या प्रचालयेत् ॥११४॥
ततो द्वियाममात्रेण वंगभस्म प्रजायते ॥
प्रमेहदाहपांडुघ्नं पुष्टिकांतिबलप्रदम् ॥ ११५ ॥

वंग (राँगे) को मिट्टी के खपरे में गलावे और इमली पीपर की छाल का रस चौथाई चौथाई उसमें डाल कर लोहे की कलछी से चलावे ॥ ११४ ॥ तब दो पहर में वंग भस्म हो जाता है वह प्रमेह, जलन, पांडु इन रोगों को दूर करता है और पुष्टि, कान्ति एवं बल को बढ़ाता है ॥ ११५ ॥

सीसा मारण ।

अश्वत्थचिंचात्वग्भस्म भस्मतुल्या मनःशिला ॥
जम्बीरैरारनालैश्च पिष्ट्वा रुद्ध्वा पुटे पचेत् ॥ ११६ ॥
स्वाङ्गशीतं पुनः पिष्ट्वा विंशत्यंशशिलात्मकः ॥
नागसिन्दूरवर्णाभो जायते सर्वकार्यकृत् ॥ ११७ ॥

पीपर वृक्ष और इमली की छाल की राख करे फिर राख और राख के बराबर मैनशिल लेकर जँभीरी के रस और कांजी में पीस कर सीसे के पत्रों के ऊपर लेप करे और पुट में रख क्रम से आँच देकर फकावे ॥ ११६ ॥ जब स्वाँग शीतल हो जाय तब निकाल कर पीसे फिर बीसवां भाग मैनशिल के साथ संपुट कर के फूँक देवे जब उसका रंग सिन्दूर के समान लाल हो जाय तब सब काम करे अर्थात् उसको काम में लावे ॥ ११७ ॥

सार मारण ।

शुद्धं लोहभवं चूर्णं पातालगरुडीरसैः ॥
गोमूत्रत्रिफलाक्वाथैर्मर्दयित्वाऽग्निना पुटेत् ॥ ११८ ॥
अर्कदुग्धैः पुन पिष्ट्वा पुटे यामचतुष्टयम् ॥
पुनः कन्यारसैः पिष्ट्वा पचेद्गजपुटेन च ॥ ११९ ॥

पुटत्रयं कुमार्य्याश्च अर्कदुग्धपुटत्रयम् ॥
एवं सप्तपुटैर्मृत्युं लोहचूर्णमवाप्नुयात् ॥ १२० ॥
यथा यथा प्रदीयन्ते पुटास्तु बहवो यतः ॥
तथा तथा विवर्द्धन्ते गुणाश्चास्य सहस्रशः ॥ १२१ ॥
तावल्लोहे पुटे देयं यावच्चूर्णीकृतो जले ॥
निस्तरङ्गो लघु तोये समुत्तरति हंसवत् ॥ १२२ ॥
तावद्विचूर्णयेदेतद्यावत्कज्जलिसन्निभम् ॥
करोति निहतं नेत्रे नैव पीडा मनागपि ॥ १२३ ॥

शुद्ध किये हुए लोहे के चूर्ण को पाताल गरुड़ी अर्थात् छिरहटी के रस के साथ घोटे फिर गाय के मूत्र और त्रिफला के काढ़ा के साथ घोट कर अग्नि की आंच देवे ॥ ११८ ॥ फिर मदार के दूध में चार पहर भावना देकर घीग्वार के पाठा के रस से पीस कर गजपुट में फूंक देवे ॥ ११९ ॥ अनन्तर घीग्वार के पाठा की तीन भावना और मदार के दूध की तीन भावना देवे इस प्रकार सात पुट में लोह चूर्ण मर जाता है अर्थात् लोहसार रस बन जाता है ॥ १२० ॥ परंतु जैसे जैसे अधिक पुट दिये जाते हैं वैसे वैसे इस लोहसार के गुण भी असंख्य बढ़ते हैं ॥ १२१ ॥ तब तक लोह चूर्ण को पुट देवे जब तक जल पर तैरने नहीं लगे यह स्थिर जल पर हलका होकर हंस के समान तैरने लगता है ॥ १२२ ॥ तथा तब तक लोह चूर्ण को पुट देवे जब तक काजल के तुल्य स्याह न हो जाय इस काजल के लगाने से नेत्रों में पीड़ा नहीं होती है ॥ १२३ ॥

आयुःप्रदाता बलवीर्यकर्ता रोगप्रहर्ता मदनस्य कर्ता ॥
अयःसमानं न हि किंचिदन्यत् रसायनं श्रेष्ठतमं हितं च ॥ १२४ ॥

यह आयु को देने वाला, बल और वीर्य को बढ़ाने वाला, रोगों को हरने वाला, कामदेव को जगाने वाला है इस लोहसार के तुल्य दूसरा कोई परमोत्तम और हितकारी रसायन नहीं है ॥ १२४ ॥

मण्डूर विधि ।

अक्षाङ्गारे धमेत्किट्टं लोहजं तद्द्रवां जलैः ॥
सिंचयेत्तप्ततप्तं च सप्तवारं पुनः पुनः ॥ १२५ ॥

चूर्णयित्वा ततः काथैर्द्विगुणैस्त्रिफलाभवैः ॥
पचेत्ततश्चार्कदुग्धैर्मण्डूरं जायते परम् ॥१२६॥
त्रिफलात्रिकटुमुस्ताग्निविडंगैः सगुडा गुटी ॥
तक्रेण पीतमथवा मासं वा सप्तसप्तकैः ॥१२७॥
ऊर्ध्वश्वासे पाण्डुरोगे शोफे आमानिले कृमौ ॥
मृद्भक्षितविकारेषु वारिरोगे च शस्यते ॥१२८॥

लोहे के कीट को बहेड़े के अंगारों में तपावे और गोमूत्र में बुझावे ऐसे सात बार तपा तपा कर बुझावे ॥ १२५ ॥ फिर लोह कीट को चूर्ण कर दूने त्रिफला के काढ़ा में मिलाय मदार के दूध में भावना देकर उसे संपुट में रख कर आंच देवे तो वह पक जाने पर बहुत उत्तम मंडूर बन जाता है ॥ १२६ ॥ अनन्तर त्रिफला अर्थात् आंवला हर्र बहेड़ा और त्रिकुटा अर्थात् सोंठ मिर्च पीपर, नागरमोथा, चीता, वायविडंग, इन सबको डाल कर सुन्दर गोलियां बनावे इन को गुड़ के साथ सेवन करे अथवा मठा के साथ पीवे एक महीना अथवा उनचास दिन पर्यन्त सेवन करे ॥ १२७ ॥ यह मांडूर रस ऊपर की श्वाँस, पाँडुरोग, सूजन, आमवात, कृमिरोग, मिट्टी खाने से जो विकार हो जाय, पानी लगने से जो विकार उत्पन्न हो जाय इन सब रोगों को दूर करने के निमित्त हितकारी है अर्थात् इन सब रोगों को यह मंडूर रस नाश कर देता है ॥ १२८ ॥

अभ्रक मारण ।

कृष्णाभ्रकं धमेद्वह्नौ ततो दुग्धेन सिंचयेत् ॥
भिन्नपत्रं ततः कृत्वा तंदुलीयाम्लयोर्द्रवैः ॥१२९॥
भावयेदष्टयामन्तदेवं शुद्ध्यति चाभ्रकम् ॥
बध्वा धान्ययुतं वस्त्रे मर्दयेत्कांजिकैस्सह ॥ १३० ॥
आदायाम्लगतं शुद्धं शुद्धधान्याभ्रकं भवेत् ॥
अर्कक्षीरैर्दिनं पिष्ट्वा चक्राकारं च कारयेत् ॥१३१॥
वेष्टयेदर्कपत्रांश्च सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥
पुनर्मर्द्यं पुनः पाच्यं सप्तवारं प्रयत्नतः ॥१३२॥
ततो वटजटाकाथैस्तद्वद्देयं पुटत्रयम् ॥

म्रियते नात्र संदेहः सर्वकार्येषु योजयेत् ॥
निश्चन्द्रमभ्रकं तत्स्याज्जरामृत्युरुजापहम् ॥१३३

काले अभ्रक को लेकर आग में तपावे फिर दूध में बुझा अनन्तर अभ्रक के अलग अलग पत्र वारीक कतर कर चावल के पानी और इमली के रस में ॥ १२९ ॥ आठ पहर भावना देवे तो अभ्रक शुद्ध हो जाता है तदनन्तर धान्य सहित उसे कपड़े में बांध कर कांजी में रगड़े ॥ १३० ॥ तो शुद्ध धान्याभ्रक होता है फिर मदार के दूध में एक दिन घोट कर टिकिया बनावे ॥ १३१ ॥ अनन्तर मदार के पत्तों को टिकिया के चारों ओर लपेट कर अच्छे प्रकार गजपुट में पकावे फिर घोटे फिर पकावे इस प्रकार यत्न से सात वार आंच देवे ॥ १३२ ॥ फिर वड़ वृक्ष की जटा के काढ़े में तीन पुट देवे तो निस्संदेह अभ्रक मर जाता है उसे सब कामों में लावे अच्छा मरा हुआ अभ्रक बुढ़ापा और मृत्युतुल्य रोग को नाश करता है ॥ १३३ ॥

अमृतीकरण ।

क्षिप्त्वाभ्रेण घृतं तुल्यं लोहपात्रे विपाचयेत् ॥
घृतजीर्णे तदभ्रन्तु सर्वकार्येषु योजयेत् ॥१३४॥

अभ्रक के तुल्य घी को लेवे और उन दोनों को लोहे की कड़ाही में पकावे जब घी सूख जाय तब उसे उतार लेवे और उस अभ्रक को सब कामों में लेवे ॥ १३४ ॥

अथवा—

कृष्णभ्रकं समादाय द्विप्रस्थं चूर्णयेद्बुधः ॥
गोमूत्रालोडितं भाण्डे क्षिप्त्वा वह्नौ दिनं पचेत् ॥ १३५ ॥
अर्कदुग्धैः पुनःपिष्ट्वा कृत्वा हि वटिकाः शुभाः ॥
वेष्टयित्वार्कपत्रैश्च खपरस्थाः पुनः पचेत् ॥ १३६ ॥
एवमेवार्कदुग्धस्य दद्यात्सप्तपुटानि च ॥
पुटत्रयं कुमार्याश्च त्रिफलायाः पुटत्रयम् ॥ १३७ ॥
गुडस्य च पुटे दत्वा पुन पंचामृतैः पचेत् ॥
ततो वटजटाक्काथैः सम्यग् देयं पुटत्रयम् ॥ १३८ ॥

एवं निश्चन्द्रतां याति सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
मृतमभ्रं हरेन्मृत्युं जरापलितनाशनम् ॥ १३९ ॥
योजितं चानुपानेन सर्वरोगहरं स्मृतम् ॥ १४० ॥

दो प्रस्थ (दो सेर) काला अभ्रक चूर्ण करके गोमूत्र में मिलावे और घोटे फिर मिट्टी की हांड़ी में रख कर एक दिन पकावे ॥ १३५ ॥ अनन्तर मदार के दूध में घोट कर टिकिया बनावे फिर उस टिकिया को मदार के नरम पत्तों में लपेट कर ठीकरे में रख कर पकावे ॥ १३६ ॥ इसी प्रकार मदार के दूध की सात भावना देवे और पकावे फिर घीग्वार के पाठा के रस की तीन भावना देकर त्रिफला के रस की तीन पुट देवे ॥ १३७ ॥ अनन्तर गुड़ की एक पुट देकर पंचामृत में पकावे, तदनन्तर बड़ वृक्ष की जटा के काढ़ा की तीन पुट भली भांति देवे ॥ १३८ ॥ इस प्रकार अभ्रक भली भाँति भस्म हो जाता है सो सब रोगों में वर्ता जाता है। मरा हुआ अभ्रक मृत्यु को दूर करता है और बुढ़ापे के सब क्लेशों को नाश कर देता है ॥ १३९ ॥ उचित अनुपान के साथ देने से यह अभ्रक सब रोगों को हरने वाला कहा है ॥ १४० ॥

धातु सत्व प्रकार।

गुडं च गुग्गुलं चैव लाक्षापामारुडटंकणम् ॥
ऊर्णं मीनं समादाय समभागानि कारयेत् ॥ १४१ ॥
द्रावयेत्सर्वसत्त्वानि पाषाणादपि मृत्तिका ॥

अथवा—

लाक्षां मीनं पयश्छागं टंकणं मृगशृंगकम् ॥ १४२ ॥
पिण्याकं सर्षपा शिग्रुं गुंजोर्णा गुडसैंधवम् ॥
यवतिक्ता घृतं क्षौद्रं यथालाभं विचूर्णयेत् ॥ १४३ ॥
एभिर्विमिश्रिताः सर्व धातवो गाढवह्निना ॥
मूषाध्माताः प्रजायन्ते मुक्तसत्वा न संशयः ॥ १४४ ॥

गुड़, गूगल, पँवार, सोहागा, ऊन, मछली इन सबको समान भाग लेकर ॥ १४१ ॥ मूषक संपुट में सबका सत्व निकाले इसी प्रकार पत्थर और मिट्टी तक का भी सत्व निकाल लेवे। अथवा लाख, मछली, बकरी का दूध,

सुहागा, हिरण का सींग ॥ १४२ ॥ सरसों की खली, सहँजना, घुँघुची, ऊन, गुड़, सेंधानमक, जौ, कुटकी, घी, शहत यथालाभ इन्हें लेकर चूर्ण करे ॥ १४३॥ इन द्रव्यों में मिला कर सब धातुओं का सत तेज आँच से मूषक संपुट द्वारा वैद्य जन निकाल लेते हैं ॥ १४४ ॥

मृतधातु जीवनोपाय ।

घृतमधुटंकणगुंजागुडेन पिंडीकृतो मृतो धातुः ॥
स पुनर्जीवति यदा तदा निरुत्थो मृतो धातुः ॥ १४५।

घी, शहत, सुहागा, घुंघुची, गुड़ इनमें धातु को मिला कर पिंडी बनावे तो मरी हुई धातु जीवित होती है, जो नहीं जीवे तो उस धातु को जानिये कि ठीक नहीं शुद्ध हुई ॥ १४५ ॥

रस सिन्दूर ।

ये क्षीणा गतवीर्याश्च कथं सीदन्ति ते नराः ॥
ईश्वरेण त्विदं प्रोक्तं हरगौरीरसायनम् ॥ १४६ ॥

जो मनुष्य क्षीणवीर्य अथवा वीर्यहीन हैं वह मनुष्य क्यों दुःखी होते हैं उनके निमित्त ईश्वर ने हरगौरी रसायन वर्णन किया है ॥ १४६ ॥

पारद शोधन ।

कुमारी चित्रकं व्याधिमूलकांकुल्यवारिणा ॥
पृथक् पृथक् चतुर्यामं मर्दयेत्सर्वकर्मसु ॥ १४७ ॥
अंकोलेन विषं हन्ति पावकं हन्ति चित्रकैः ॥
राजवृक्षैर्मलं हन्ति कुमारी सप्तकंचुकैः ॥ १४८ ॥

ग्वार का पाठा, चीता, कूट, अंकोल की जड़ इनके रस से अलग अलग चार पहर तक पारा को खरल करे तब सब कामों में लेवे ॥ १४७ ॥ अंकोल से खरल किये हुए पारे का विष नष्ट हो जाता है और चीता से खरल किये हुए पारे का दाह दूर हो जाता है, अमलतास से खरल करने पर पारे का मल जाता रहता है, घीग्वार के पाठा से खरल करने पर पारे की सात काँचली दूर हो जाती है ॥ १४८ ॥

पारद भाग।

रसभागो भवेदेको द्विगुणो गन्धको मतः ॥
खल्वे कज्जलसंकाशं काचकुप्यां क्षिपेत्सुधीः ॥ १४६ ॥
खर्परे वालुकापूर्णे स्थापयेत्तत्र कूपिकाम् ॥
इष्टिकां च मुखे दत्त्वा कृत्वा कर्पटमृत्तिकाम् ॥ १५० ॥
सप्तविंशतियामैश्च त्रिभिः कूपैर्विपाचयेत् ॥
पश्चादूर्ध्वं समायाति रसं ज्ञात्वा विचक्षणः ॥ १५१ ॥
हंसपादसमं वर्णं निष्पन्नं रसमादिशेत् ॥
गुंजायुग्मं प्रदातव्यं सिता दुग्धानुपानयुत् ॥ १५२ ॥
प्रमेहे कासश्वासेषु षण्ढे क्षीणेऽल्पवीर्यके ॥
हरगौरीरसो देयः सर्वरोगप्रशान्तये ॥ १५३ ॥

एक भाग पारा, दो भाग गंधक को खरल में घोट कर कजली करे फिर उसको काँच की शीशी में भर देवे ॥ १४६ ॥ फिर वालुका यंत्र में रख कर ऊपर नीचे वालू भर देवे और पक्की ईंट से उसका मुँह भर बन्द कर देवें तब कपड़ मिट्टी करे ॥ १५० ॥ उसको सत्ताईस पहर तक तीन शीशियों में पकावे जब वह उड़ कर ऊपर को आ जाय तब चतुर वैद्य जान ले कि रस बन गया ॥ १५१ ॥ वह रस शिंगरफ के रंग के समान रंग वाला हो जाता है उसको दो रत्ती प्रमाण मिश्री और दूध के अनुपान के साथ देवे ॥ १५२ ॥ प्रमेह, खाँसी, श्वास, नपुंसकत्व, क्षीणता, वीर्य की न्यूनता इन सब रोगों की शान्ति के निमित्त हरगौरी रस देवे अर्थात् यह गौरी रसायन सब रोगों को शान्त करता है ॥ १५३ ॥

अथवा—

सूतकं च समादाय द्विगुणं गंधकं क्षिपेत् ॥
ततश्च कज्जलीं कृत्वा काचशीश्यां तु धारयेत् ॥ १५४ ॥
मृन्मयीं मुद्रिकां दत्त्वा नन्दसंख्याप्रमाणतः ॥
पृथक्भांडं तु संस्थाप्य वालुकाद्ध्प्रमाणतः ॥ १५५ ॥

मध्ये च शीशिकां धृत्वा मुखे मुद्रां च कारयेत् ॥
द्वात्रिंशद्याममग्निश्च स्वाँगशीतोऽवतारयेत् ॥ १५६ ॥
रससिन्दूरनामेदं भास्करेण विनिर्मितम् ॥
गुंजायुग्मं सदा ग्राह्यं नागवल्लीदलैस्सह ॥ १५७ ॥

पारा लेके उसमें दूनी गन्धक मिलावे फिर कजली करके काँच की शीशी में भर देवे ॥ १५४ ॥ और उसका मुँह वन्द करके नव वार कपड़ मिट्टी करे फिर अलग एक पात्र में आधे भाग तक वालू भरे ॥ १५५ ॥ और उसके वीच में शीशी रख कर मुख को वन्द कर देवे फिर वत्तीस पहर तक आँच देवे जब स्वाँग शीतल हो जाय तव उतार लेवे ॥ १५६ ॥ यह रस सिंदूर नाम रस भास्कर वैद्यराज ने निर्माण किया है इसको प्रतिदिन दो रत्ती प्रमाण पान के साथ सेवन करे ॥ १५७ ॥

मदन मुद्रा।

नागेन्द्रसिक्थकमयोमलसर्जिकाभि-
लाक्षा च चुम्बकमधूफलभूर्जपत्रम् ॥
संकुट्यमानमतसीफलतैलमिश्रं
श्रीपारदस्य मरणे मदनाख्यमुद्रा ॥१५८॥

सेंदुर, मोम, लोहे की कीटी, सज्जी, लाख, चुंवक पत्थर, महुआ फल, भोजपत्र इनको लेकर कूटे और अलसी के तेल में मिलावे यह पारा के मरने में मदन नाम की मुद्रा है ॥ १५८ ॥

अथवा—

औदुम्बरार्कवटदुग्धपलं पलं च
लाक्षा पलं पलचतुष्टयभूर्जपत्रम् ॥
संकुट्य सर्वमतसीपलतैलमिश्रं
श्रीपारदस्य मरणे मदनाख्यमुद्रा ॥१५९॥

गूलर, मदार, वड इनका दूध एक पल (चार चार तोला) लेके एक पल

(४ तोला भर) लाख और चार पल (१६ तोला) भोजपत्र सहित सबको कूट कर तुलसी के तेल में मिलावे यह पारा के मरने में मदन नामवाली मुद्रा है ॥ १५६ ॥

वज्रमुद्रा।

खड़ी खदिरभस्मांबु लवणैरथवा ध्रुवम् ॥
कारीषभस्मलवणाम्बु द्वाभ्यां मुद्रा प्रकीर्तिता ॥१६०॥

खड़िया, खैर की भस्म, नमक का पानी, अथवा केवल भस्म और नमक का पानी इन दोनों करके वज्रमुद्रा बनती है ॥ १६० ॥

पारदगुण।

श्रीपारदेनैव शरीरशुद्धिर्नानागदानां हरणे समर्थः ॥
करोति पुष्टिं हरते च मृत्युं कल्पायुषं चापि करोति नूनम् ॥१६१॥
पारदः सकलरोगपारदो राजयक्ष्मशरणैकपारदः ॥
सर्वरोगमपि हन्ति तत्क्षणात् नागवल्लिरसराजभक्षणात् ॥१६२॥
मूर्च्छितो हरते व्याधिं बद्धः खेचरतां व्रजेत् ॥
सर्वसिद्धिकरो नीलो निश्चलो मुक्तिदायकः ॥१६३॥

इस पारा से शरीर की शुद्धि होती है, यह पारा अनेक रोगों को दूर करने को समर्थ है, तथा देह को पुष्ट करता और मृत्यु को हरता है निश्चय करके कल्प की आयु करता है अर्थात् आयु को बढ़ाता है॥ १६१ ॥ एवं पारा सब रोगों से पार कर देता है और पारा राजयक्ष्मा रोग का नाश करने वाला है, पान के साथ सेवन करने से पारा तुरन्त ही सब रोगों को नाश करता है ॥ १६२ ॥ मूर्च्छित पारा सब रोगों को हरता है, बँधा पारा आकाश में चलने की सामर्थ्य देता है, नील पारा सब सिद्धि करता है और निश्चल पारा मुक्तिदायक होता है ॥ १६३॥

तारे गुणाशीति तदर्धकान्ते वंगे चतुःषष्टि रवौ तदर्धम् ॥
हेम्नः शतैकं गगने सहस्रं वज्रे गुणा कोटिरनन्तसूते ॥१६४॥
संस्कारहीनं खलु सूतराजं यः सेवते तस्य करोति बाधाम् ॥
देहस्य नाशं विदधाति नूनं कुष्ठान्समग्रान् जनयेन्नराणाम् १६५

तार (चाँदी) में अस्सी गुण होते हैं उसके आधे चालीस गुण कांतिसार में हैं, वंग में चौसठ गुण और उसके आधे बत्तीस गुण ताँबे में तथा सोना में सौ गुण, एवं अभ्रक में एक हजार गुण, हीरा में एक करोड़ गुण और पारा में अनन्त गुण हैं ॥ १६४ ॥ संस्कार हीन पारे का सेवन जो मनुष्य करता है वह पारा उसको बाधा पहुँचाता है और शरीर को निश्चय करके कष्ट देता है सब प्रकार के कुष्ठ रोगों को उत्पन्न कर देता है ॥ १६५ ॥

विकारो यदि जायेत पारदान्मलसंयुतात् ॥
गंधकं सेवयेद्धीमान्पाचितं विधिपूर्वकम् ॥१६६॥
गन्धकं माषयुग्मं च नागवल्लीदलैस्सह ।
खादेत्पारदसंग्रस्तो दोषशान्तिस्तदा भवेत् ॥ १६७ ॥

यदि मल सहित पारा से विकार उत्पन्न हो जाय तो बुद्धिमान पुरुष विधिपूर्वक गन्धक का सेवन करे ॥ १६६ ॥ दो रत्ती प्रमाण शुद्ध गन्धक पान के साथ खाय तो पारा से उत्पन्न विकार शान्त हो जाता है ॥ १६७ ॥

पारदविकार शान्ति ॥

द्राक्षाकूष्माण्डखण्डाश्च तुलसी शतपुष्पिका ।
लवंगतजनागं च गन्धकेन समांशकम् ॥१६८॥
कर्षमात्रपयो भुक्तं सर्पिर्दुग्धं ततः पिबेत् ॥
सर्वयोगान्तरासाध्यसूतदोषविकारनुत् ॥ १६९ ॥
नागवल्लीरसं प्रस्थं भृंगराजरसं समम् ॥
तुलसीरसप्रस्थं च छागदुग्धं समांशकम् ॥ १७० ॥
मर्दयेत्सर्वगात्रेषु यामयुग्मं दिनत्रये ॥
स्नानं शीतलनीरेण सूतदोषप्रशान्तये ॥ १७१ ॥

मुनक्का, पेठा, शक्कर, तुलसीदल, सौंफ, लौंग, तज, नागकेशर, गन्धक इन सब द्रव्यों को बराबर लेकर चूर्ण करे ॥ १६८ ॥ एक कर्ष (तोला भर) लेके गोदुग्ध के साथ सेवन करे अर्थात् तोला भर चूर्ण फाँक कर ऊपर से गाय का दूध पीवे और घी खाय तो पारा से उत्पन्न विकार शान्त हो जाता है ॥ १६९ ॥ तथा पान का रस एक प्रस्थ (सेर भर) भँगरा का रस सेर भर, तुलसी दल

का रस सेर भर और सेर भर बकरी का दूध ॥ ७० ॥ इनको सब शरीर में तीन दिन दो दो पहर तक मले और शीतल जल से स्नान करे तो पारे का विकार शान्त हो जाता है ॥ १७१ ॥

शुद्धं सूतं समं गन्धं वटक्षीरं विमर्दयेत् ॥
पाचयेन्मृत्तिकापात्रे वटकाष्ठैर्विचालयेत् ॥ १७२ ॥
स्वल्पाग्निना दिनं पाच्यंभस्मसूतं भवेद्ध्रुवम् ॥
द्विगुंजं नागपत्रेषु पुष्टमग्नेश्च वृद्धिकृत् ॥ १७३ ॥

शुद्ध किया हुआ पारा और उसीके बराबर शुद्ध गंधक को लेकर बर्गद के दूध में खरल करे और मिट्टी के पात्र में पकावे और बट वृक्ष की लकड़ी से चलाता जाय ॥ १७२ ॥ मन्द आँच से एक दिन भर पकने देवे तो अवश्य पारा भस्म हो जाता है उसको पान के साथ दो रत्ती भर सेवन करे तो देह को पुष्ट करता है और जठराग्नि को प्रदीप्त कर क्षुधा आदि को बढ़ाता है ॥ १७३ ॥

हरताल शोधन मारण ।

तालकं कणशः कृत्वा तच्चूर्णं कांजिके क्षिपेत ॥
दोलायंत्रेण यामेकं ततः कूष्मांडजैर्द्रवैः ॥ १७४ ॥
तिलतैलं पचेद्यामं यामं च त्रिफलाजलैः ॥
एवं यंत्रे चतुर्यामं पाच्यं शुद्ध्यति तालकम् ॥१७५॥
शुद्धं स्यात्तालकं छिन्नं कूष्माण्डसलिले तत ॥
चूर्णोदके पृथक्तैले भस्मीभूतं न दोषकृत् ॥ १७६ ॥

हरताल के छोटे छोटे टुकड़े कतर कर कांजी में डाल देवे और दोला यंत्र द्वारा एक पहर पर्यन्त पकावे फिर एक पहर कुम्हड़े के रस में पकावे ॥१७४॥ फिर तिल के तेल में एक पहर त्रिफला के काढ़ा में एक पहर पकावे ऐसे चार पहर यंत्र द्वारा पकावे तो हरताल शुद्ध हो जाता है ॥ १७५ ॥ हरताल के बारीक टुकड़े पेठा के रस में पकाने से हरताल शुद्ध हो जाता है यह भी मत है फिर उसको तेल में पकावे तो हरताल भस्म हो जाता है और दोष को नहीं करता है ॥ १७६ ॥

अथवा—

तालं विचूर्णयेत्सूक्ष्मं मद्यं नागार्जुनीद्रवैः ॥
सहदेव्या बलायाश्च मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥ १७७ ॥
तत्तालं रोटकं कृत्वा तच्छायायां विशोषयेत् ॥
हंडिकायंत्रमध्यस्थं प्लुत्तभस्म तलोपरि ॥ १७८ ॥
वालुकायंत्रतो पाच्यं भेदितं चंडवह्निना ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ १७९ ॥

हरताल का वारीक चूर्ण पीस कर नागार्जुन के रस में खरल करे तथा सहदेई और कंघी के रस में दो दिन खरल करे ॥ १७७ ॥ फिर उस हरताल की टिकिया बना कर छाया में सुखावे और हाँडी में पकरिया की भस्म नीचे ऊपर रख कर वह टिकिया धर देवे ॥ १७८ ॥ फिर उसको वालुका यंत्र द्वारा तेज आँच से पकावे और स्वाँग शीतल हो जाने पर निकाल लेवे और सब योगों में उसकीयोजना करे ॥ १७९ ॥

रसकपूर विधि ।

पारदः स्फटिका चैव हीराकासीसमेव च ॥
सैन्धवं समभागाश्च विंशांश नवसादरम् ॥ १८० ॥
खल्वे विमर्द्य सर्वाणि कुमारीरसभावना ॥
क्रमवृद्धाग्निना पक्वो रसः कर्पूरसंज्ञकः ॥ १८१ ॥

पारा, फिटकरी, हीराकसीस, सेंधा इनको समान भाग लेवे इनसे वीसवाँ भाग नौसादर लेवे ॥ १८० ॥ सबको खरल में डाल कर घोटे और घीग्वार के रस की भावना देवे फिर क्रम से पहले मन्द फिर मध्यम फिर तेज आँच से पकावे तो इसको रसकपूर कहते हैं ॥ १८१ ॥

सूतं संशोध्य चक्राभं कृत्वा लिप्त्वा च हिंगुना ॥
द्विस्थालीसंपुटे धृत्वा पूरयेल्लवणेन च ॥ १८२ ॥

अधः स्थाल्यां ततो मुद्रां दद्याद्दृढतरां बुधः ॥
विशोष्याग्निं विधायाधो निषिञ्चेदम्बुनोपरि ॥ १८३ ॥
ततस्तु कुर्यात्तीव्राग्निं तदधः प्रहरत्रयम् ॥
एवं निपातयेदूर्ध्वं रसो दोषविवर्जितः ॥
ऊर्ध्वस्थालीमध्ये लग्नो ग्राह्यो रसो मतः ॥ १८४ ॥

पारा को शुद्ध करके मिट्टी की हाँड़ी में हींग का लेप कर दूसरी हाँड़ी के संपुट में रख कर उसे नमक से भर देवे ॥ १८२ ॥ फिर नीचे की हाँड़ी में पुष्ट मुद्रा देवे और सुखा कर बुध जन उसे चूल्हे पर यथाक्रम क्रम से पहले मंद फिर मध्यम फिर तेज आँच देवे आँच देते समय जल सींचता जाय ॥ १८३ ॥ अनन्तर उसके नीचे तीन पहर तक तेज आँच करे इस प्रकार आँच देने पर जब रस ऊपर चढ़ जाय तब जाने कि रस निर्दोष बन गया ऊपर की हांड़ी में लगे हुए रस को ग्रहण करे और उस उत्तम रस को काम में लावे ॥ १८४ ॥

पारद मुखकरण।

अर्कस्नुहीधत्तूरलांगलीकरवीरकाः ॥
गुंजाहिफेनमित्येताः सप्तोपविषजातयः ॥ १८५ ॥
एतैर्विमर्दितः सूतश्छिन्नपक्षः प्रजायते ॥
मुखं च जायते तस्य धातूंश्च ग्रसते द्रुतम् ॥ १८६ ॥

मदार, थूहर, धतूरा, करियारी, कनेर, घुँघुची, अफीम यह सात उपविष जाति कहे हैं ॥ १८५ ॥ इन उपविषों से पारा मर्दन करे तो छिन्न पक्ष हो जाता है और उसका मुख हो जाता है और वह पारा शीघ्र ही धातु ग्रस जाता है ॥१८६॥

अथवा कटुकक्षारौ राजी लवणपंचकम् ॥
रसोनो नवसारश्च शिग्रुश्चैकत्र चूर्णयेत् ॥ १८७ ॥
समांशैः पारदादेतैर्जम्बीरेण द्रवेण वा ॥
निम्बुतोये कांजिकैर्वा सोष्णखल्वे विमर्दयेत् ॥
अहोरात्रत्रयेण स्याद्रसेषु रुचिरं मुखम् ॥ १८८ ॥

अथवा त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपर) दोनों क्षार (सज्जीखार जवाखार) राई, पाँचो नमक, लहसन, नौसादर, सहिजन इन सबको इकट्ठा करके चूर्ण करे ॥ १८७ ॥ और इनके समान भाग पारा लेके जँभीरी के रस में अथवा नीबू के जल में या काँजी में गरम खरल में डालकर घोटे तीन दिन (२४ पहर) पर्यन्त घोटने से पारे का सुन्दर मुख हो जाता है ॥ १८८ ॥

गन्धक जारण ।

मृत्पिण्डे प्रक्षिपेन्नीरं तन्मध्ये च शरावकम् ॥
महत्कुंडं पिधानाभं तन्मध्ये मेखलामुखम् ॥ १८९ ॥
लिखेच्च मेखलामध्ये स्वर्णेनात्र रसं क्षिपेत् ॥
रसस्योपरि गन्धस्य रजो दद्यात्समांशकम् ॥ १९० ॥
दत्त्वोपरि शरावं च भस्ममुद्रां प्रदापयेत् ॥
तस्योपरि पुटं दद्यात् चतुर्भिर्गोमयापलैः ॥ १९१ ॥
एवं पुनः पुनर्गन्धं षड्गुणं जारयेद्बुधः ॥
गन्धे जीर्णे भवेत्सूतं तीक्ष्णाग्निः सर्वकर्मकृत् ॥ १९२ ॥
धूमसाररसं तारो गन्धकं नवसादरम् ॥
यामैकं मर्दयेदम्लैर्भागं कृत्वा समं समम् ॥ १९३ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य तां च मृद्वस्त्रमुद्रया ॥
विलिप्य परितो वक्त्रे मुद्रां दत्त्वा च शोषयेत् ॥१९४॥
अधः सच्छिद्रपिठरीमध्ये कूपं निवेशयेत् ॥
पिठरीवालुकापूरैर्भृत्वा आकूपकागलम् ॥ १९५ ॥
निवेश्य चुल्ल्यां तदधः कुर्याद्वह्निं शनैः शनैः ॥
तस्मादप्यधिकं किंचित्पावकं ज्वालयेत्क्रमात् ॥१९६॥
एवं द्वादशभिर्यामैर्म्रियते सूतकोत्तमः ॥
स्फोटयेत्स्वांगशीतं तमूर्ध्वगं गन्धकं त्यजेत् ॥१९७॥
अधःस्थं मृतसूतं च सर्वकर्मसु योजयेत् ॥

मिट्टी के एक पात्र में जल भरे फिर उसके बीच में सकोरा धरे उस सकोरे पर एक ढकन ढक देवे फिर उसके चारो ओर गड्हा खोदे ॥ १८९ ॥ फिर उस गड्ढे में सोने के पात्र से रस डालता जाय उस रस के ऊपर रस के बराबर गन्धक का चूर्ण डाले ॥१९० ॥ फिर उसके ऊपर एक सकोरा रख कर भस्म मुद्रा देवे उसके ऊपर पुट देवे और चार बड़े कंडों की आँच देवे ॥ १९१ ॥ ऐसे बार बार गंधक को चतुर वैद्य छ बार जलावे गन्धक के बार बार जलने से पारा शीघ्रकारि होकर सब काम करने वाला होता है ॥ १९२ ॥ पूगन्सार, पारा, फटकड़ी, गन्धक, नौसादर इन सबको बराबर लेकर एक पहर तक खटाई में घोटे ॥ १९३ ॥ अनन्तर उसको काँच की कुप्पी में भर कर उसके संपुट में एक सीसी देवे फिर कपड़मिट्टी करे और धूप में मुद्रा देकर सुखावे ॥ १९४ ॥ नीचे की छेद सहित कुप्पी उसके बीच कुप्पी को रख देवे बालू से गले तक कुप्पी को भर कर बालुका यंत्र में धरे ॥ १९५ ॥ और चूल्हे पर चढ़ाए धीमी धीमी आँच करे फिर क्रम से कुछ अधिक आँच को बढ़ा देवे ॥ १९६ ॥ ऐसे बारह पहर तक आँच देने से पारा बहुत उत्तमता से मर जाता है जब स्वाँग शीतल हो जाय तब ऊपर लगे हुए गन्धक का त्याग कर देवे ॥ १९७ ॥ और नीचे लगे हुए पारे को लेकर सब कामों में लावे ॥

हिंगुल (ईंगुल) से पारानिष्कासन प्रकार।

निंबूरसैर्निम्बपत्ररसैर्वा याममात्रके ॥१९८॥
पिष्ट्वा डमरुमूर्ध्वं च पातयेत्सूतयुक्तवत् ॥
ततः शुद्धं रसं तस्मान्नीत्वा कार्येषु योजयेत् ॥१९९॥

नीबू के रस से अथवा नीम के पत्तों के रस से एक पहर तक इगुर को घोटे ॥ १९८ ॥ फिर डमरू यंत्र में चढ़ावे उससे उड़ कर पारा ऊपर जाय लगता है फिर उस शुद्ध पारे को उससे लेकर कामों में वर्ते ॥ १९९ ॥

हरताल शोधन।

पलाशभस्म मृद्भाण्डं क्षिप्त्वोपरि च तालकम् ॥
तालोपरि पुनर्भस्म दत्वा स्थालीं विमुद्रयेत् ॥२००॥

ढाक की भस्म को मिट्टी की हाँडी में रख कर उसमें हरताल धरे और हरताल पर भस्म रख कर एक थाली की मुद्रा चढ़ावे ॥ २०० ॥

चुल्ह्यां पचेच्चतुर्यामं पश्चात्तत्सिद्धतां व्रजेत् ॥
गाढे तथायसि न्यस्तं निर्धूमं च तदा शुभम् ॥२०१॥
खंडेन रक्तिकामात्रं खादेत्कुष्ठनिवृत्तये ॥
पथ्यं मकुष्टचणकलवणस्नेहवर्जिताः ॥२०२॥

अनन्तर उसको चूल्हे पर चढ़ा कर चार पहर तक आँच देकर पकावे इस प्रकार हरताल सिद्ध हो जाने पर उसकी परीक्षा इस प्रकार करे कि उसमें लोहा गरम करके डाले जो धुआँ न देवे तो जाने कि शुद्ध है ॥ २०१ ॥ कुष्ठरोग को दूर करने के निमित्त उसको एक रत्ती प्रमाण लेकर खाँड़ के साथ खाय और मोठ, चना, नमक, तेल त्याग करे यही पथ्य है ॥ २०२ ॥

तथा—

पलमेकं शुद्धतालं कुमारीरसमर्दितम् ।
शरावसंपुटे क्षिप्त्वा यामान् द्वादश तत्पचेत् ॥२०३॥
हरतालं कर्षमात्रं मर्दितं कन्यकाद्रवैः ॥
सतैले चाथ सत्पात्रे क्षिप्त्वा मन्दाग्निना पचेत् ॥२०४॥

शुद्ध हरताल एक पल लेके घीग्वार के पाठा के रस में घोटे फिर दो सकोरों के संपुट मे रख कर बारह पहर तक पकावे ॥२०३॥ तथा एक कर्ष (तोला भर) हरताल लेकर घीग्वार के रस में घोटे और तेल सहित लोहे के पात्र में रख कर मन्द आँच से पचावे ॥ २०४ ॥

नागताम्र विधि।

मयूरपिच्छानादाय ज्वालयेदाज्यसर्षपैः ॥
गुडगुग्गुलमीनोर्णा टंकणं सर्जिपा मधु ॥२०५॥
गुंजा पिप्पलीलाक्षा च घृतं चैकत्र कारयेत् ॥
धमेत्तदंधमूषायां नागताम्रं प्रजायते ॥२०६॥

मोर के पंख लेके घी और सरसों के साथ जलावे और गुड़, गूगल, मछली, ऊन, सुहागा, सज्जी, शहत ॥ २०५ ॥ घुंघची, पीपर, लाख, घी इन सब को एकत्र करे और सूपक यंत्र बनाय अर्थात् एक हाथ भर गहरा गढ़ा खोद कर मोर पंखों की भस्म धरे ऊपर से औषधियाँ डालता जाय नीचे धौंकता जाय

धौंकनी चुकने पर धौंकना बन्द कर दे जब स्वाँग शीतल हो जाय तब फाण लेवे और गला लेवे तो नाग तांबा बन जाता है ॥ २०६ ॥

सोनामाखी शोधन ।

माक्षिकं स्वेदयेत्पूर्वं कुलत्थकाथयोगतः ॥
अथवा नरसूत्रेण दोलायंत्रे विशुद्ध्यति ॥२०७॥
माक्षिकस्य त्रयो भागा भागैकं सैंधवस्य च ॥
मातुलिंगद्रवैश्चाथ जम्बीरोत्थद्रवैः पचेत् ॥२०८॥
क्षालयेल्लोहजं पात्रं यावत्पात्रं सुलोहितम् ॥
भवेत्ततः सुसिद्धः स्यात्स्वर्णमाक्षिकमृच्छति ॥२०६॥
कुलत्थस्य कषायेण घृततैलेन वा पचेत् ॥
तक्रेण वाजसूत्रेण म्रियते स्वर्णमाक्षिकम् ॥२१०॥

सोनामक्खी को पहले शहत के साथ घोटे अनन्तर कुलथी के काढ़ा में घोटे अथवा मनुष्य के मूत्र से घोटे और दोलायंत्र में शुद्ध करे ॥ २०७ ॥ शहत तीन भाग, सेंधा नमक एक भाग, बिजौरा वा जँभीरी के रस में पकावे ॥ २०८ ॥ फिर लोहे के पात्र में डाल कर हिलावे तब तक हिलावे कि जबतक लाल लाल नहीं हो जाय लाल हो जाय तो जाने सोनामाखी शुद्ध हो गई ॥ २०९ ॥ कुलथी के काढ़ा से अथवा घी तेल से पकावे मठा अथवा बकरी के मूत्र से पकावे तो सोनामाखी मर जाती है ॥ २१० ॥

रूपामाखी शोधन ।

कर्कोटीमेषशृंग्युत्थैर्द्रवैर्जम्बीरजैर्दिनम् ॥
भावयेदातपे तीव्रे विमला शुद्ध्यति ध्रुवम् ॥२११॥

रूपामाखी को लेके ककरी, मेढासिंगी का रस, जँभीरी का रस इनमें एक दिन पर्यन्त भावना देके बहुत तेज धूप में सुखावे तो निश्चय करके रूपामाखी शुद्ध हो जाती है ॥ २११ ॥

मनःशिला शोधन ।

पचेत् त्र्यहमजामूत्रे दोलायंत्रे मनःशिलाम् ॥

भावयेत्सप्तधा पित्ते अजायाः शुद्धिमृच्छति ॥२१२॥

बकरी के मूत्र में तीन दिन तक मैनशिल को दोला यंत्र द्वारा पकावे फिर बकरी के पित्त में सात भावना देवे तो मैनशिल शुद्ध हो जाता है ॥ २१२ ॥

नीलांजन शोधन ।

नीलांजनं चूर्णयित्वा जम्बीरद्रवभावितम् ॥
दिनैकमातपे शुद्धं सर्वकार्येषु योजयेत् ॥२१३॥
एवं गैरिककासीसटंकणानि वराटिका ॥
शंखत्रुटी च कंकुष्टं शुद्धिमायाति निश्चितम् ॥२१४॥

इति धातुशोधनम् ।

सुरमा को बारीक पीस करके एक दिन पर्यन्त जँभीरी के रस की भावना देवे और घाम में सुखावे तब सुरमा शुद्ध हो जाता है उसको सब कामों में बर्ते ॥ २१३ ॥ इसी रीति से गेरू, कसीस, सुहागा, कौड़ी, शंख, फटकरी, खपरिया, निश्चय करके इन सबकी शुद्धि हो जाती है ॥ २१४ ॥

यह धातु शोधन कहा आगे रसक्रिया कहते हैं ।

अथ रसक्रिया । तत्रादौ लोकनाथरस ।

भागौ दग्धकपर्दकस्य च तथा शंखस्य भागद्वयं
भागौ गन्धकसूतयोर्मिलितयोः पिष्ट्वा मरीचादपि ॥
भागानां त्रितयं नियोज्य सकलं निंबूरसैश्चूर्णितं
पीतस्तक्रमनुग्रहण्युपहरं श्रीलोकनाथो रसः ॥१॥

दो भाग कौड़ी की भस्म, दो भाग शंख भस्म, दो भाग गन्धक और पारा भस्म, काली मिर्च पिसी हुई तीन भाग इन सबको कूट कर नीबू के रस में घोट कर गोली बनावे अथवा चूर्ण ही रक्खे और मठा के संग पीवे तो संग्रहणी रोग नाश हो जाता है यह लोकनाथ रस है ॥ १ ॥

अथवा ।

शुद्धो बुभुक्षितः सूतो भागद्वयमितो भवेत्
तथा गन्धकभागौ द्वौ कुर्यात्कज्जलिकां तयोः ॥२॥
सूताच्चतुर्गुणेष्वेव कपर्देषु विनिक्षिपेत् ॥
भागैकं टंकणं दत्त्वा गोक्षीरेण विमर्दयेत् ॥३॥
तथा शंखस्य खंडानां भागान्यष्टौ प्रकल्पयेत् ॥
क्षिपेत्सर्वं पुटस्यान्तश्चूर्णं लिप्तशरावयोः॥४॥
गर्ते हस्तोन्यिते धृत्वा पुटेद्गजपुटेन च ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पिष्ट्वा तत्सर्वमेकतः ॥५॥
षड्गुंजासमितं चूर्णं एकोनत्रिंशदूषणैः ॥
घृतेन वातजे दद्यात् नवनीतेन पित्तजे ॥६॥
क्षौद्रेण श्लेष्मजे दद्यादतीसारक्षये तथा ॥
अरुचौ ग्रहणीरोगे कासे मन्दानले तथा ॥७॥
कासश्वासेषु गुल्मेषु लोकनाथो रसो हितः ॥
तस्योपरि घृतान्नं च भुंजीत कवलत्रयम् ॥८॥
मंचे क्षणैकमुत्तानं शयीतानुपधानके ॥
रसाच्च जायते तापस्तदा शर्करया युतम् ॥९॥
गुडूच्या वाथ गृह्णीयाद्वंशलोचनयाऽथवा ॥

शोधा हुआ क्षुधित पारा दो भाग, गन्धक दो भाग लेके दोनों की कजली करे ॥ २ ॥ उसमें पारा से चौगुनी कौड़ी डाले और एक भाग सुहागा डाल कर गाय के दूध से खरल करे ॥ ३ ॥ फिर शंख की भस्म आठ भाग उसमें डाले अनन्तर सबको लेकर शराव संपुट में रख कर कपड़ मिट्टी करे ॥ ४ ॥ फिर एक हाथ गहिरा गढ़ा खोदे उसको उसमें धरे और गजपुट में आँच देवे जब स्वाँग शीतल हो जावे तब उसे निकाल कर पीस लेवे ॥ ५ ॥ इसका चूर्ण छः रत्ती भर लेके उनतीस काली मिर्च के साथ घी में वात रोगी को देवे तथा मक्खन के

साथ पित्त विकार वाले को देवे ॥ ६ ॥ और शहत के साथ कफरोगी को तथा अतीसार और क्षय रोगी को देवे एवं अरुचि, संग्रहणी, खाँसी तथा मन्दाग्नि रोग में ॥ ७ ॥ कास, श्वास और वायुगोला रोग में यह लोकनाथ रस हित करनेवाला है इसके खाने पर ऊपर से तीन ग्रास अन्न के साथ घी खावे अथवा घी का पक्वान्न तीन बार खावे ॥ ८ ॥ रस खाकर खाट पर विना तकिया लगाये सीधा लेटे यदि रस खाने पर गरमी जान पड़े तो रस को दुबारा सक्कर अथवा मिश्री के साथ खाय ॥ ९ ॥ अथवा गुर्च वा वंशलोचन के साथ रस सेवन करे ॥

कफ कुंजररस ।

रसगन्धौ सापिमासं स्नुह्यर्कं च पयः पलम् ॥
पलं पलं पंचलवणमेकीकृत्वा तु चूर्णयेत् ॥ १० ॥
आलोड्य चार्कदुग्धेन पूरयेत्शंखमध्यतः ॥
पिप्पली विषकवीरं चूर्णं कृत्वा प्रलेपयेत् ॥ ११ ॥
प्रज्वालयेद्याममात्रं सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥
कर्पूरनागपत्रैश्च देया मात्रार्द्धगुंजया॥ १२ ॥
कासं श्वासं च हृद्रोगं कफं पंचविधं तथा ॥
वज्रवद्धन्ति रोगाँश्च रसोऽयं कफकुंजरः ॥ १३ ॥

पारा और गन्धक, सीपी, थूहर और मदार का दूध इनको एक एक पल (४ ४ तोला भर) लेवे, तथा पाँचों नमक एक एक पल लेवे सबको एक में मिला कर चूर्ण करे ॥ १० ॥ और चूर्ण को मदार के दूध में मिला कर शंख में भर देवे और कपड़ मिट्टी करे ॥ ११ ॥ अनन्तर एक पहर तक आँच देवे जब शीतल हो जाय तब निकाल कर महीन पीस कर चूर्ण बनावे वह आधी रत्ती प्रमाण चूर्ण कपूर और पान के साथ देवे ॥ १२ ॥ तो खाँसी, श्वाँस, हृदयरोग, पाँच प्रकार का कफ इन रोगों को वज्र के समान यह कफकुंजर रस दूर कर देता है ॥ १३ ॥

श्वास कुठार रस ।

रसो गन्धो विषं चैव टंकणं च मनःशिला ॥
एतानि टंकमात्राणि मरिचं टंककाष्टकम् ॥ १४ ॥
एकैकं मरिचं दत्वा खल्वे सूक्ष्मं विमर्दयेत् ॥

त्रिकटु टंकषट्कं च दद्यात्पश्चाद्विमर्दयेत् ॥ १५ ॥
रसः श्वासकुठारोऽयं पूर्णखंडेन बुद्धिमान् ॥
श्वासोऽतिदुस्तरं दद्यात् गुंजामात्रं प्रयत्नतः ॥ १६ ॥

पारा, गंधक, विष (तेलिया मीठा) सुहागा, मैनशिल, इनको एक एक टंक (चार चार माशा) लेवे और मिर्च ८ टंक (दो तोला) ॥ १४ ॥ खरल में एक एक मिर्च डाल कर घोटे जिससे महीन पीस जावे, फिर त्रिकुटा अर्थात् मिर्च पीपर सोंठ छः टंक (१॥ तोला) उसमें डाल कर घोटे ॥ १५ ॥ यह श्वास कुठार रस है इस रस को बुद्धिमान् वैद्य यत्नपूर्वक पुरानी खांड़ के संग एक रत्ती प्रमाण कठिन श्वास रोग वाले को देवे ॥ १६ ॥

कालारि रस।

त्रिशाणं पारदं चैव गन्धकं शाणपंचकम् ॥
त्रिशाणं वत्सनागं च पिप्पली दशशाणिका ॥१७॥
लवंगं च चतुःशाणं त्रिशाणं कनकाह्वयम् ॥
टंकणं वह्निशाणं च पंच जातीफलं क्षिपेत् ॥ १८ ॥
मरिचं पंच शाणं स्यादकल्लं च त्रिशाणकम् ॥
करीरार्द्रकनिम्बूकैर्मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ १९ ॥
कालारिरसनामायं वातव्याधिविनाशकः ॥
मर्दने भक्षणे नस्ये द्विगुंजो सन्निपातजित् ॥ २० ॥

पारा तीन टंक (१२ माशा) गन्धक पाँच टंक (सवा तोला) वत्सनाग तीन टंक, और पीपर दश टंक (२॥ तोला) ॥ १७ ॥ लौंग चार टंक (१ तोला) तथा धतूरा तीन टंक, जायफल पाँच टंक ॥ १८ ॥ काली मिर्च पाँच टंक, अकरकरा तीन टंक, और करील अदरख इन सबको लेके तीन दिन तक नीबू के रस में घोटे ॥ १९ ॥ यह कालारि रस है, वह रस वातविकार को नाश करने वाला है इसको मले, खावे, और नस्य लेवे (सूघे) दो रत्ती प्रमाण इसकी मात्रा सन्निपात को जीत लेती है अर्थात् इससे सन्निपात रोग नष्ट हो जाता है ॥ २० ॥

तथाच।

शुद्धं सूतं मृतं ताम्रं गन्धकं नागरं विषम् ॥

जातीफलं लवंगानि कनकं मरिचं सह ॥ २१ ॥
रसाच्च द्विगुणं ग्राह्यं टंकणं भृष्टमेव च ॥
पिप्पली करहाटश्च सर्वार्द्धं ग्राह्यकोविदैः ॥ २२ ॥
कर्षमात्राणि सर्वाणि रसाद्या मरिचान्तकाः ॥
पिष्ट्वा सूक्ष्ममिदं योज्यं नस्यभक्षणयोगयोः ॥ २३ ॥
भावना निम्बुकावल्लीहिमार्दकरसस्तथा ॥
वारत्रयं सदा देयो रसः कालारिसिद्धये ॥ २४ ॥

शुद्ध किया हुआ पारा, मरा हुआ तांबा, गन्धक, सोंठ, विष, जायफल, लौंग, धतूरे के बीज, काली मिर्च ॥ २१ ॥ पारा से दूना सुहागा का फूला लेवे और पीपर, अकरकरा सब से आधा लेवे, बुद्धिमान् वैद्य ॥ २२ ॥ पारा से मिर्च पर्यन्त सब औषधियों को एक एक कर्ष (तोला तोला भर) लेके बहुत महीन पीसे और उसको नास लेने (सूंघने) और खाने में वर्ते ॥ २३ ॥ नीबू ब्राह्मी और अदरख इनके रस की अलग अलग भावना देवे तो कालारि रस सिद्ध हो जाता है ॥ २४ ॥

सर्वे वाताशिरोवाता मेहप्रस्वेद एव च ॥
सूतिकानां च ये रोगा सर्वे नश्यन्ति वेगतः ॥ २५ ॥
रसकालारिसंज्ञोऽयं प्रतीतो बहुषु श्रुतः ॥
शिरोग्रहः कर्णनादो मन्यास्तम्भो हनुग्रहः ॥ २६ ॥
धनुर्वातादयोऽप्येवं बाह्यापामादयस्तथा ॥ २७ ॥

सब वातरोग और शिर की वात, प्रमेह, पसीना, तथा सूतिका स्त्रियों के रोग (प्रसूतिका रोग आदि) ये सब इस रस के सेवन से शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ॥ २५ ॥ यह कालारि रस है बहुत गुणियों ने इसको सुना और अनुभव किया है यह शिर पीडा, कानों में शब्द होना, मन्यास्तंभ, हनुग्रह ॥ २६ ॥ धनुर्वात आदि रोगों को एवं बाहर की खाज आदि रोगों को दूर करता है ॥ २७ ॥

सूचीभरण रस ।

विषं पलमितं सूतं शाणकं चूर्णयेद्द्वयम् ॥

तच्चूर्ण सम्पुटे धृत्वा काचलिप्तशरावयोः ॥२८॥
मृदं दत्वा च संशोष्य ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत् ॥
वह्निं शनैः शनैः कुर्यात्प्रहरद्वयसंख्यया ॥२९॥
ततश्चोद्घाट्य तन्मुद्रामुपरिस्थशरावकात् ॥
संलग्नो यो भवेत्सूतस्तं गृह्णीयाच्छनैः शनैः ॥३०॥
वायुस्पर्शो यथा न स्यात्तथा कुप्यां निवेशयेत् ॥
यावत्सूच्या मुखे लग्नं कुप्यां निर्याति भेषजम् ॥३१॥
तावन्मात्रो रसो देयो मूर्च्छिते सन्निपातके ॥
क्षुरेण प्रस्थिते मूर्ध्नि तत्राङ्गुल्या च घर्षयेत् ॥३२॥
रसभेषजसंपर्कान्मूर्च्छितोऽपि हि जीवति ॥
यदाऽतपो भवेत्तस्य मधुरं तत्र दीयते ॥३३॥

तेलिया मीठा एक पल (४ तोला) पारा एक टंक (४ माशा) इन दोनों का चूर्ण करे उस चूर्ण को कांच की शीशी में भरे और कपड़मिट्टी कर दो सकोरों के संपुट में रख कर ॥ २८ ॥ मुद्रा देवे और कपड़मिट्टी करके सुखा लेवे अनन्तर उसको चूल्हे पर चढ़ा कर दो पहर पर्यन्त धीमी आँच करे ॥ २९ ॥ फिर जब शीतल हो जाय तब उस सम्पुट को खोले, काँच की शीशी पर जो पारा लगा हो उसको धीरे धीरे खुरच लेवे ॥ ३० ॥ जिस प्रकार उसमें वायु नहीं लगे उसी प्रकार उसे लेकर कुप्पी में भर लेवे, सुई के मुख में जितना लगे उतनी औषध शीशी में से निकाल कर ॥ ३१ ॥ उतनी ही मात्रा उस रस की देवे। मूर्छित हुए सन्निपात के रोगी के मस्तक पर चाकू से रख कर अँगुली से रगड़े ॥ ३२ ॥ पारा रूपी इस औषधी के लगने से मूर्छित रोगी भी जी जाता है। जो रोगी का ताप हो तो उसको मीठा पदार्थ खाने के निमित्त देना चाहिए ॥ ३३ ॥

कामदेव रस।

स्वभ्रं शुक्रं केशरं लोहचूर्णं जातीपत्रं सर्पफेनं लवङ्गम् ॥
एला सूक्ष्मं चीरकं कोलनागजातीजातं चीणका वा विशुक्तम् ३४
अर्धेःशोषं सप्तकर्षाद्देशक्षौद्रैर्मिश्रं मिश्रमाकल्पयुक्तम् ॥

क्षीणे वीर्ये रेतसां सागरोऽयं सायं भक्षोद्यो गुटी वल्लयुक्ताम् ३५
गच्छेन्नारीं साध्ययोगात्सहस्रं वृद्धो देहैर्याति तारुण्यभावम् ॥
रामावश्यं सर्वकाले कृतौ च प्रोक्तो वैद्यैः कामदेवो रसोऽयम् ३६

शुद्ध-अभ्रक, चाँदी, केशर, लोहचूर्ण, जावित्री, अफीम, लौंग, सफेद इलायची, क्षीरकाकोली, नागेश्वर, जायफल, कवाबचीनी ॥ ३४ ॥ समुद्रशोष इन सब द्रव्यों को सात कर्ष अर्थात् सात तोला प्रमाण लेवे और शहत, मिश्री, अकरकरा मिला कर खाय तो जिसका वीर्य क्षीण हो गया हो, वह बहुत वीर्य वाला हो जाता है यह गुटी छ रत्ती प्रमाण सन्ध्या समय खाय ॥ ३५ ॥ इसके सेवन से पुरुष हजार स्त्रियों से विहार करने में समर्थ हो जाता है, बूढे शरीर से युवा पुरुष के समान शक्ति वाला हो जाता है और सब काल में स्त्रियों को वश करने वाला होता है यह कामदेव रस प्राचीन वैद्यों ने कहा है ॥ ३६ ॥

अन्यच्च—

पलं गोक्षुरबीजानि द्विपलं कपिकच्छुजम् ॥
पलं नागदलामूलं पलमेकं शतावरी ॥३७॥
विदारीकन्दचूर्णन्तु पलद्वयमथो बला ॥
द्विपलं त्रपुसीबीजं वाजिगन्धा पलत्रयम् ॥३८॥
त्रिसुगन्धकणा धात्री लवंगं नागकेशरम् ॥
वंशी मांसी तालमूली गुडूची रक्तचन्दनम् ॥३९॥
एतानि कर्षमात्राणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥
बालशाल्मलिकाद्रावैर्भावयेच्चैकविंशतिः ॥४०॥
कुशकाशद्रवै रेवं शर्करासमयोजितम् ॥
नष्टशुक्ररुजं हन्ति मूत्रकृच्छ्राणि यानि च ॥४१॥
शतं गच्छेत्तु नारीणां हयतुल्यबलं तथा ॥
कामदेवमिदं नाम धन्वन्तरिविनिर्मितम् ॥४२॥

एक पल गोखरु के बीज और दो पल (८ तोला) कौंच के बीज, एक पल (४ तोला) गँगरेन की छाल, तथा एक पल शतावरि ॥ ३७ ॥ दो पल

विदारीकन्द का चूर्ण, दो पल वरियरा, दो पल ककरी के बीज, तीन पल असगन्ध ॥ ३८ ॥ सफेद इलायची, तज, तेजपात, पीपर, आंवला, लौंग, नागकेशर, वंशलोचन, जटामाँसी, स्याह मूशली, गुर्च, लालचन्दन ॥ ३९ ॥ यह सब औषध एक एक कर्ष (तोला तोला भर) लेके सबको पीस कर महीन चूरन करे और सेमल के कोमल पत्तों के रस की इक्कीस भावना देवे ॥ ४० ॥ फिर कुश, काश के रस की भी इक्कीस भावना देवे और बलानुसार मात्रा लेके बराबर शक्कर मिलाय देवे तो क्षीणवीर्य रोग और मूत्रकृच्छ्र रोग को यह रस नाश कर देता है ॥ ४१ ॥ इसके सेवन करने से पुरुष सौ स्त्रियों से विहार करने वाला हो जाता है तथा यह रस घोड़े के समान बलवान् करता है, यह कामदेव नामक रस है इसको धन्वन्तरि वैद्यराज जी ने निर्माण किया है ॥ ४२ ॥

त्रिपुरभैरव रस ।

वेदवेदगुणा पृथ्वी शुंठीमरिचटंकणम् ॥
चतुर्थो वत्सनागश्च रसास्त्रिपुरभैरवः ॥४३॥
भावना नागवल्ल्याश्च आर्द्रकस्य च भावना ॥
निम्बुकस्यापि दातव्या वारत्रयमनुक्रमात् ॥४४॥
सन्निपाते तथा वाते श्लेष्मरोगे महाज्वरे ॥
ग्रहे च मस्तकस्यापि पीडायामुदरस्य च ॥४५॥

चार भाग सोंठ, चार भाग मिर्च, तीन भाग सुहागा, एक भाग वत्सनाग, त्रिपुरभैरव रस बनाने को ॥ ४३ ॥ यह चारो द्रव्य लेकर पान, अदरख, नीबू इनके रस की क्रम से तीन भावना देवे ॥ ४४ ॥ यह त्रिपुरभैरव रस सन्निपात में तथा वातविकार में, कफ रोग में, महाज्वर में, मस्तक रोग में और उदर की पीड़ा में परम हितकारी है अर्थात् इन सब रोगों को दूर कर देता है ॥ ४५ ॥

कफकुंजर रस ।

नागं पारदसंयुतं समरिचं सद्वत्सनागं शुभं
देवालीरसभावना मुनिमिता कर्पूरकाकल्लयोः ॥
देयं वल्लमितं महौषधरसैः सन्नागवल्लीदलैः
श्लेष्मावातविकारजाठरपरे स्यात्सन्निपाते ज्वरे ॥४६॥

शीशा, पारा और मिर्च समेत मिला कर, वत्सनाग को गला कर चूना के पानी में डाले कपडे से सात वार पारा को छान कर ईंटा खोहा से खरल करे और शीशा को गला कर पारा में डाले फिर चार टंक (एक तोला भर) काली मिर्च और विष (तेलिया मीठा) एक टंक (चार माशा) लेकर उसमें मिलावे और अँगरा, कचूर, अकरकरा, सोंठ, पान इनके रस की भावना सात सात वार देवे तो कफकुंजर रस वन जाता है सो श्लेष्मविकार, वातविकार, उदरविकार, सन्निपात और ज्वर इन रोगों में हितकारी है अर्थात् इसके सेवन से यह सब रोग नाश हो जाते हैं ॥ ४६ ॥

हिंगुलं वत्सनागं च मरिचं टंकणं कणा ॥
जम्बीरस्य रसं दत्वा मर्द्यं यामचतुष्टयम् ॥४७॥
कासे श्वासे सन्निपाते ग्रहण्यां शूलमेहयोः ॥
अपस्मारेऽनिले च्छर्दौ रसश्चानन्दभैरवः ॥४८॥

हिंगुल (ईंगुर) वत्सनाग (वचनाग विष) काली मिर्च, सुहागा, पीपर, इन सबको जँभीरी के रस की भावना चार पहर तक देकर घोटे ॥ ४७ ॥ तो आनन्दभैरव रस वन जाता है यह रस खांसी, श्वास, सन्निपात, संग्रहणी, शूल और प्रमेह, मृगी, वातरोग, वमन इन सब रोगों को नाश करने वाला है ॥ ४८ ॥

महाज्वरांकुश रस ।

शुद्धं सूतं विषं गन्धं धूर्तबीजं त्रिभिः समम् ॥
चतुर्णां द्विगुणं व्योषं चूर्णं गुंजाद्वयं मतम् ॥४९॥
जम्बीरकस्य मज्जाया आर्द्रकस्य द्रवैर्युतम् ॥
महाज्वरांकुशो नाम अष्टज्वरनिवारकः ॥५०॥
एकाहिकं द्व्याहिकं च तार्तीयं च चतुर्थकम् ॥
विषमं च त्रिदोषोत्थं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥५१॥

शोधा हुआ पारा, विष, गन्धक, धतूरे के बीजों को तीनों के बराबर लेवे, फिर इन चारों से दूना त्रिकुटा (सोंठ मिर्च पीपर) लेवे और सबका बारीक चूर्ण पीस कर दो दो रत्ती प्रमाण की गोलियां ॥४९॥ जँभीरी के रस और अदरख के रस में बनावे यह महाज्वरांकुश नामक रस आठ प्रकार के ज्वरों

[illegible] नाश करने वाला है ॥५०॥ और इकतरा, दो दिन बाद आने वाला तथा तीन दिन बाद आने वाला (तिजारी) और चौथिया, एवं विषमज्वर और त्रिदोष (सन्निपातज्वर) इन रोगों को और इनसे उत्पन्न अन्य रोगों को अवश्य-मेव नाश कर देता है इसमें संदेह नहीं ॥५१॥

तथाच--

शुद्धं तालकमेतदर्धममलं शंखस्य चूर्णं क्षिपेत्
प्रक्षिप्याथ नवांशकेऽपि च शिखिग्रीवां पुनः पेषयेत् ॥
कौमारीरसमर्दितं गजपुटे पाच्यं च शीतं ततो
गृह्णीयादथ गुंजिकाज्वरहरं खंडेन संयोजयेत् ॥५२॥
एकाहं त्रितयं चतुर्थकमिदं वेलाज्वरं नाशयेत
शीतादिज्वरसर्वनाशनकरं भानुर्यथा शर्वरीम् ॥
पथ्यं दुग्धमथापि तन्दुलयुतं छागं च शीतं पयः
पेयं गव्यमिदं स्वभावजनितं पित्तं जयेद्रोगिणाम् ॥५३॥
ज्वराभिभूते षडहे व्यतीते विपक्वदोषे कृतलंघनादौ ॥
यो भेषजं वैद्यवरः प्रयुंक्ते निस्संशयं हन्त्यचिरात्स रोगान् ।५४।

पहले एक भाग हरताल लेवे उससे आधा भाग शंखचूर्ण लेकर उसमें मिला कर गोमूत्र में भिगोवे और नवां भाग शुद्ध नीला थोथा उसमें फिर घीग्वार के पाठा के रस की तीन भावना देके खरल करे और टिकिया बना कर दो सकोरों के संपुटे में रख तीन कपडमिट्टी कर गजपुट में आंच देवे जब स्वांग शीतल हो जाय तब उसे निकाल लेवे इसकी मात्रा एक रत्ती प्रमाण खांड के साथ खाने से ज्वर दूर हो जाता है ॥५२॥ एक दिन में तीन बार अथवा चार बार आने वाला ज्वर अथवा इकतरा, तिजारी, चौथिया ज्वर इस रस के सेवन से नष्ट हो जाता है। यह ज्वरांकुश रस शीतज्वर आदि सब ज्वरों को इस प्रकार नाश करने वाला है जैसे सूर्य रात्रि को नष्ट कर देता है। इस रस के सेवन करने पर दूध, चावल, बकरी का शीतल दुग्ध और गौ का दूध हित है रोगी के स्वभाव जनित पित्त विकार को यह रस जीत लेता है ॥५३॥ यदि ज्वर हो तो छः लंघन करे, लंघन बीत जाने पर दोष नहीं पचे तो लंघन करता रहे, उत्तम वैद्य दोष पच जाने पर औषधी देवे तो थोड़े ही समय में निस्सन्देह शीघ्र रोग का नाश हो जाता है ॥५४॥

पंचानन रस ।

शंभोः कंठनिवासिनं च मरिचं गन्धं रसेन्द्रो रविः
पक्षौ सागरलोचने शशिमुख भागोऽर्कसंख्याकृतं ॥
खल्वे तत्खलु मर्दितं रविजलैर्गुंजार्धमात्रं ददेत्
सिद्धोऽयं ज्वरहस्तिदर्पदलने पञ्चाननोऽयं रसः ॥ ५५ ॥
पथ्यं च देयं दधिभक्तयुक्तं सिन्धूत्थयुक्तं सितया समेतम् ॥
गन्धानुलेपं हिमतोयपानं दुग्धं च पेयं शुभदाडिमं च ॥५६॥

शिवकंठ वासी (विष) अर्थात् तेलिया मीठा दो भाग, काली मिर्च चार भाग, गन्धक दो भाग, पारा एक भाग, मदार का दूध बारह भाग इन सबको खरल में डालकर घोटे और दो रत्तीप्रमाण मात्रा देवे ज्वर-रूपी हाथी को भगाने के निमित्त यह पंचानन रस सिंह-रूप है ॥ ५५ ॥ इस पंचानन रस के सेवन करने में दही, भात, सेंधा नमक, मिश्री और सुगन्धित वस्तु का लेप ठंढा पानी, दूध, मीठा अनार यह सब पदार्थ हितकारी हैं यही पथ्य है ॥ ५६ ॥

उदय भास्कररस—आमवात दोष पर ।

पारदं गन्धकं दिव्यं व्योषं त्रिलवणानि च ॥
सितकन्दा च वृद्धैला रसकर्पूरमेव च ॥ ५७ ॥
समानि सर्वतुल्यं च शुद्धं जेपालकं क्षिपेत् ॥
बीजपूररसैर्भाव्यो रसो ह्युदयभास्करः ॥ ५८ ॥

तथा--

पारदं गन्धकं व्योषं द्वौ क्षारौ लवणानि च ॥
टंकणं चेति तुल्यानि जेपालं सकलैः समम् ॥५९॥
भावना बीजपूरस्य सूक्ष्मं चूर्णं विचूर्णयेत् ॥
सग्राह्यं रक्तिकायुग्मं वातं सामं विनाशयेत् ॥६०॥
गोदुग्धं केवलं पथ्यं देयमुष्ट्रीपयोऽथवा ॥
अन्नं च वर्जयेत्तावदामशोफं निवारयेत् ॥ ६१ ॥

पारा और शोधा हुआ गंधक, मिर्च, पीपर, सोंठ, तीनों नमक, मिश्री, लाल इलायची, रसकपूर ॥ ५७ ॥ इन सब द्रव्यों को बराबर लेके शुद्ध जमालगोटा मिलावे और बिजौरा नीबू के रस की भावना देवे यह उदयभास्कर रस है ॥ ५८ ॥ तथा पारा, शुद्ध गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपर, दोनों क्षार (सज्जी-खार जवाखार) तीनों नमक (सोंचर, सेंधा, कचिया) सुहागा इन सबको बराबर लेकर सबके बराबर शुद्ध जमालगोटा मिलावे ॥ ५९ ॥ फिर सबका चूर्ण कर बिजौरा नीबू के रस की भावना देवे इसकी मात्रा दो रत्ती प्रमाण लेवे यह रस वातविकार और आमदोष को नाश कर देता है ॥ ६० ॥ इसके सेवन में केवल गाय का दूध अथवा ऊँटनी का दूध पथ्य है यदि सूजन हो तो जब तक सूजन दूर नहीं हो तब तक अन्न नहीं खावे ॥ ६१ ॥

भूतांकुशरस वातविकार और खांसी पर।

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभागं शुद्धगन्धकम् ॥
भागत्रयं मृत ताम्रं मरिचं दशभागकम् ॥ ६२ ॥
मृताभ्रं च चतुर्भागं भागमेक विषं क्षिपेत् ॥
भूतांकुशस्य भागैकं सर्वमम्लेन मर्दयेत् ॥ ६३ ॥
यामं भूतांकुशो नाम माषैकं वातकासजित् ॥
अनुपानं लिहेत्क्षौद्रं बिभीतकफलं त्वचा ॥ ६४ ॥

शोधा हुआ पारा एक भाग, शोधा हुआ गंधक दो भाग, ताँबे की भस्म तीन भाग, काली मिर्च दश भाग ॥ ६२ ॥ अभ्रक की भस्म चार भाग, विष एक भाग, भूतांकुशरस एक भाग इन सबको लेकर इमली के रस में घोटे ॥ ६३ ॥ एक पहर तक घोटने से भूतांकुश नाम रस बन जाता है एक माशा भर इसके सेवन से यह वातविकार और खाँसी को जीत लेता है, इसका अनुपान यह कि शहत और बहेड़े के बक्कल के साथ इसका सेवन करे ॥ ६४ ॥

महातालेश्वर रस—कुष्ठरोग पर।

तालं ताप्यं शिलासूतं शुद्धं सैन्धवटंकणम् ॥
समांशं चूर्णयेत्खल्वे सूताद्द्विगुणगन्धकम् ॥ ६५ ॥
गन्धतुल्यं मृतं ताम्रं जम्बीरैर्दिनपंचकम् ॥
मर्द्यं स्वद्भिः पुटैः पाच्यं भूधरोदरसम्पुटे ॥ ६६ ॥

पुटे पुटे द्रवैर्मर्द्यं सर्वमेकत्र षट्पलम् ॥
द्विपलं मारितं ताम्रं लोहभस्म चतुःपलम् ॥ ६७ ॥
जम्बीराम्लेन तत्सर्वं दिनं मर्द्यं पुटेल्लघु ॥
त्रिंशदंशं विषं चास्य क्षिप्त्वा चूर्णं विमर्दयेत् ॥ ६८ ॥
माहिष्याज्येन संमिश्रं कर्षार्द्धं भक्षयेत्सदा ॥
मध्वाज्यैर्बाकुचीचूर्णं कर्षमात्रं लिहेदनु ॥
सर्वकुष्ठानि हन्त्याशु महातालेश्वरो रसः ॥ ६९ ॥

शुद्ध हरताल, सोनामाखी, मैनशिल, शुद्ध पारा, सैंधा नमक, सुहागा इन सबको बराबर लेके चूर्ण करे फिर खरल में पारा से दूना गन्धक ॥ ६५ ॥ गन्धक के बराबर तांबे की भस्म लेकर जँभीरी के रस में पाँच दिन पर्यन्त घोटे इस प्रकार पुट देकर भूधर यंत्र में रख कर पकावे ॥ ६६ ॥ ऐसे पुट पुट में जँभीरी का रस देवे अनन्तर सबको छ पल प्रमाण एकत्र करे और तांबे की भस्म दो पल, लोह भस्म चार पल ॥ ६७ ॥ इन सबको जँभीरी के रस में एक दिन तक घोटे और तीसवाँ भाग विष मिलाय चूर्ण करके घोटे ॥ ६८ ॥ यह दो टंक (८ माशा) प्रमाण म..का भैंस के घी के साथ अथवा शहत, घी, बावची का चूर्ण चार टंक प्रमाण लेके खाय। इस तालेश्वर रस के सेवन से सब प्रकार के कुष्ठ रोग शीघ्र नाश हो जाते हैं ॥ ६९ ॥

आनन्दभैरव रस—अतीसार पर ।

दरदं वत्सनागं च मरिचं टंकणं कणा ॥
चूर्णयेत्समभागेन रसो ह्यानन्दभैरवः ॥ ७० ॥
गुंजैका वा द्विगुंजा वा बलं ज्ञात्वा प्रयोजयेत् ॥
मधुना लेहयेच्चानु कुटजस्य फलत्वचः ॥ ७१ ॥
चूर्णितं कर्षमात्रं तु द्विदोषोत्थातिसारजित् ॥ ७२ ॥

शिंगरफ, वचनाग, काली मिर्च, सुहागा इनको बराबर लेके चूर्ण करे यह आनन्दभैरव रस है ॥ ७० ॥ एक रत्ती अथवा दो रत्ती प्रमाण मात्रा बल के अनुसार शहत के साथ चाटे, कुडे के फल का वक्कल लेकर ॥ ७१ ॥ चूर्ण करे एक कर्ष (तोला भर) देवे तो यह रस दोषों से उत्पन्न अतीसार रोग का नाश करता है ॥ ७२ ॥

तथा—

लवङ्गमहिफेनं च हिंगुलं शाल्मलीरसः ॥
सिता समा गुटीज्येष्ठा जलपीताऽतिसारजित् ॥ ७३ ॥
मध्याह्ने दापयेत्पथ्यं गवाज्यं तक्रमेव च ॥
पिपासायां जलं शीतं विजयां निशि दापयेत् ॥ ७४ ॥

लौंग, अफीम, शिंगरफ, सेमल अथवा मोचरस, मिश्री इन सबको बराबर लेकर इनकी गोली बनावे एक गोली खाकर ऊपर से जल पीवे तो अतीसार रोग दूर हो जाता है ॥ ७३ ॥ मध्याह्न समय में गाय का घी, दूध, मठा पथ्य देवे प्यास लगे तो ठंढा पानी पीवे; रात में भाँग पीवे ॥ ७४ ॥

कनकसुन्दर रस संग्रहणी पर।

हिंगुलं मरिचं गंधं पिप्पली टङ्कणं विषम् ॥
कनकस्य च बीजानि समांशं विजयाद्रवैः ॥ ७५ ॥
मर्दयेद्याममात्रेण चणकाभा वटी कृता ॥
भक्षिता ग्रहणीं हन्ति रसः कनकसुन्दरः ॥ ७६ ॥

शिंगरफ, मिर्च, गन्धक, पीपर, सुहागा, विष, धतूरे के बीज इनको बराबर लेके भाँग के रस से ॥ ७५ ॥ एक पहर भर घोटे अनन्तर चने बराबर गोलियाँ बनावे एक गोली एक बार खाय तो संग्रहणी रोग नाश हो जाता है यह कनक सुन्दर रस संग्रहणी रोग को दूर कर देता है ॥ ७६ ॥

क्रव्यादरस वात और उदर रोगों पर।

पलं रसस्य द्विपलं बलिःस्याच्छुल्कायसीचार्द्धपलप्रमाणम् ॥
संचूर्ण्य सर्वं द्रुतमग्नियोगादेरण्डपत्रेषु निवेशनीयम् ॥७७॥
पिष्ट्वाऽथ तां कज्जलिकां निदध्याल्लौहं च पात्रं वरपूतमस्मिन् ॥
जम्बीरजं पक्वरसं फलानि शतं तलेऽस्याग्निमथोऽल्पमात्रम् ॥७८॥

जीर्णे रसे भावितमेतदेतैः सुपक्वकोलोद्भववारिपूतैः ॥
सवेतसाम्लैःशतपत्रयोज्यं समं रजष्टंकणजं समृष्टम् ॥७८॥
बिडं तदर्द्धं मरिचं समं च ततस्सप्तवारं चणकाम्लतोयैः ॥
क्रव्यादनामा भवति प्रसिद्धो रसस्तु मन्थानकभैरवोक्तः ॥८०॥

पारा एक पल (४ तोला) गन्धक दो पल, ताँबेश्वर और लोहसार आधा आधा पल इन द्रव्यों को लेकर चूर्ण करे और अग्नि की आँच देवे, फिर अंडी के पत्तों में बसावे ॥ ७७ ॥ फिर पीस कर कजली करे और लोहे की कड़ाही में रक्खे और पकी हुई सौ जँभारियों का रस उसमें डाले और नीचे मन्द आँच देवे ॥७८॥ अजीर्ण में सुन्दर पके कोलफल के रस की भावना देवे और अम्लवेत के रस की भावना देवे, फिर वरावर कमलफूल, सुहागा का सुन्दर फूला डाले ॥ ७९ ॥ विड (सोंचर) नमक सुहागा से आधा हो, और मिर्च वरावर हो, सो डाल कर चनों के खार में सात वार घोटे यह क्रव्याद नामक प्रसिद्ध रस रसों में बहुत ही भैरव रूप कहा गया है ॥ ८० ॥

माषद्वयं सैन्धवतक्रपीतमेतस्य धन्वौ खलु भोजनान्ते ॥
गुरूणि मांसानि पयांसि पिष्टैः कृतानि खाद्यानि फलानि वेगात् ॥
मात्रातिरिक्तान्यतिसेवितानि यामद्वयाज्जारयति प्रसिद्धः ॥
निहन्त्यजीर्णान्यपि षट्प्रकाराण्यग्निं करोति क्रमसेवनेन ॥८२॥
कुर्याद्दीपनमुद्धतं च पवनं दुष्टामयो यक्ष्मणाम्
तुन्दस्थौल्यनिवर्हणे सुगहनं शूलार्तिनिर्मूलनम् ॥
गुल्मप्लीहविनाशने बहुरुजां विश्वासनः सन्ततं
सेव्यो ग्रन्थिमहोदरापहरणं क्रव्यादनामा रसः ॥८३॥

यह क्रव्याद रस दो माशा भर सेंधा नमक और गाय के मठा के साथ पीवे पश्चात् भोजन करे, गरिष्ठ अन्न, मांस, खोवा, दूध, पेठा के पदार्थ और फल आदि खाने से जो अजीर्ण हो जाय ॥ ८१ ॥ तो यह रस एक रत्ती भर खाय इसके खाने से दो पहर में अजीर्ण दूर हो जाता है ॥ यह रस छ प्रकार के अजीर्ण रोग को नाश करता है और क्रम से सेवन करने पर जठराग्नि को प्रवल करता है ॥ ८२ ॥ तथा यह रस दीपन है वातविकार को नाश करता है और कुष्ठ रोग, यक्ष्मा रोग, पेट का तोंद बढ़ जाना और शूल इन रोगों को दूर करता है यह रस

…न्माद नाम वाला है इसके निरन्तर सेवन करने से गाँठ रोग और उदर रोग का नाश होता है ॥ ८३ ॥

चन्द्रोदयरस—वाजीकरण ।

पलं मृदुस्वर्णदलं रसेन्द्रं पलाष्टकं गन्धकषोडशांशम् ॥
फलैस्तु कार्पासभवैः प्रसूनैः सर्वं विमर्द्याऽथ कुमारिकाभिः॥८४॥
तत्काचकुंभे निहितं सुगाढे मृत्कर्पटं तद्दिवसत्रये च ॥
पचेत् क्रमाग्नौ सिकताख्ययंत्रे ततो रजः पल्लवरागरम्यम्॥८५
निगृह्य चैतस्य पलं पलानि चत्वारि कर्पूररजस्तथैव ॥
जातीफलं शोषणमिन्द्रपुष्पं कस्तूरिकाया इह शाण एकः ॥८६॥

सोने के वर्क एक पल (४ तोला) शुद्ध पारा आठ पल, गन्धक सोलह पल, कपास के फूल एक पल इन द्रव्यों को लेकर घीग्वार के पाठा के रस में घोटे ॥ ८४ ॥ घोट कर काँच की शीशी में भरे और कपडमिट्टी करके तीन दिन तक क्रम से वालुका यंत्र में रख कर आग की आँच से पकावे जब वह पक कर लाल रंग हो जाय तब उतार लेवे ॥ ८५ ॥ और उसमें से एक पल (४ तोला) प्रमाण रस लेकर कपूर चार पल, तथा जायफल, समुद्रशोष, लौंग, कस्तूरी एक टंक (४ माशा) इन सबको लेकर मिलावे और काम में लावे ॥ ८६ ॥

चन्द्रोदय रस गुण ।

चन्द्रोदयऽयं कथितश्च माषं भक्ष्योहि वल्लीदलमध्यवर्ती ॥
मदोन्मदानां प्रमदाशतानां गर्वाधिकत्वं श्लथयत्यकाण्डे ॥८७॥
भृतं घनीभूतमतीव दुग्धं मृदूनि मांसानि च मण्डकानि ॥
लवान्नपिष्टानि भवन्ति पथ्यान्यानन्ददायीन्यपराणि चात्र८८
वलीपलितनाशनस्तनुभृतां वयस्तम्भनः
समस्तगदखण्डनः प्रचुररोगपंचाननः ॥
गृहेन रसराजको भवति यस्य चन्द्रोदयः
पंचशरदर्पितो मृगदृशां कथं वल्लभः ॥८९॥

यह चन्द्रोदय रस कहा है इसकी एक माशा भर मात्रा लेकर पान के साथ खाय तो वह मनुष्य सौ स्त्रियों के मान को मर्दन करता है ॥ ८७ ॥ इस रस को खाकर ऊपर से तुरन्त का दुहा हुआ गरम गरम दूध अथवा अवौटा दूध गाढ़ा गाढ़ा पीवे, मांस खाना हो तो कोमल मांस खाय, अथवा सुन्दर कनिक आटा की रोटी और भी आनन्ददायक पदार्थ भोजन करे ॥ ८८ ॥ यह चन्द्रोदय रस वृद्धापन को दूर करता है, देह को पुष्ट करता है, आयु को बढ़ाता है, रोगों का नाश करता है, हाथी रूप रोगों को सिंह के तुल्य है, यह रसों का राजा चन्द्रोदय रस जिस पुरुष के घर में नहीं है, वह पुरुष कामगर्वित मृगनयनी स्त्रियों को कैसे प्यारा हो सकता है, अर्थात् जिसके घर में यह रसराज होता है वह स्त्रियों का परम प्यारा होता है ॥ ८९ ॥

मृत्युंजय रस—सब ज्वरों पर ।

प्रवालमुक्ताफलवज्रतारसुवर्णताम्राभ्रकसारसीसाः॥
यथोत्तरावंगशिलाखुतालपलोन्मितैः सूतकसप्तभागाः९०
चतुश्चतुः शंखकपर्दिकानां सतक्रजम्बीरविमर्दितानाम् ॥
अहिफेनपिप्पल्यविषत्रयाणां पलं पलं दन्तिफलान्वितानाम् ९१
समस्तमेकीकृतमत्रचूर्णं दिनत्रयं चित्रकवारिपूर्णम् ॥
विशुष्कभृंगाररसकाकतुण्डीस्नुह्यर्कधूर्तामरदारुमुंडी ॥९२॥
किरातभल्लातनिकुंभकुंभा कुठेरवीराकरवीररम्भाः॥
बलात्रिवृन्नागबलाखुपर्णी कटुत्रिकं सैन्धवमद्रिकर्णी ॥९३॥
जवाऽमृता काण्डरुहा सलज्जा विषावृषार्ची च रुजः सगुञ्जाः॥
अमीभिरुच्चाभुजगार्तियुक्तैर्दृढे पुटे ताम्रमये विपक्वम् ॥९४॥
सुशीतमुद्धृत्य द्विरक्तिकाखु खंडे हि दद्याच्च बलानुसारम्॥
विनाशयेदाशु महोग्रदोषान् रसो हि मृत्युंजयनामधेयः ॥९५॥

मूंगा, मोती, हीरा, चाँदी, सोना, ताँबा, अभ्रक, सार, शीशा, वंग, मैनशिल, हरताल, इन सबको एक एक पल (४।४ तोला) प्रमाण लेवे, पारा सात भाग लेवे ॥ ९० ॥ शंख और कौड़ी चार चार पल लेवे सबको मठा और जँभीरी के रस में घोटे, अनन्तर अफीम, पीपर, तेलिया मीठा यह तीनों एक एक पल, जमालगोटा एक पल ॥ ९१ ॥ इन सबको इकट्ठा कर चूर्ण करे और

चीता के काढ़ा में घोट कर सुखा लेवे फिर भांग का रस, काकतुंडी रस, सेहुँड़, [illegible], धतूरा, देवदारु और गोरखमुंडी ॥ ९२ ॥ चिरायता, मिलावा, अमालगोटा, नागफुली, मकुतुकसी, कनेर, केला, सरेटी, निशोथ, गँगेरन, मूषपर्णी, त्रिकटु, (मिर्च, पीपर, सोंठ) सेंधानमक, विष्णुक्रांता ॥ ९३ ॥ जवासा, सुर्ख, कुटकी, लाजवंती, अडूसा, भँगरा वा मूशली, घुंघची इन सब औषधियों को अलग अलग लेकर मिलावे और दृढपुट तांबे के पात्र में रख कर पकावे ॥ ९४ ॥ पक जाने पर जब स्वांग शीतल हो जाय तब निकाल कर महीन पीस लेवे इसकी दो रत्ती प्रमाण!मात्रा बल के अनुसार रोगी को मिश्री के साथ देवे यह मृत्युंजय नाम रस बड़े बड़े कठिन दोषों को शीघ्र विनाश करता है ॥ ९५ ॥

इति रस क्रिया ।

अथ—आसव ।

प्रथम द्राक्षासव ।

द्राक्षा पलशतं ग्राह्यं सितायास्तच्चतुर्गुणम् ॥
कर्कन्धुमूलं तस्यार्द्धं मूलार्द्धं पुष्पधातुकी ॥ १ ॥
पूगीफलं लवंगं च जातीपुष्पं फलानि च ॥
चातुर्जातं त्रिकटुकं मस्तगी करहाटकम् ॥
आकल्लकरसं कुष्ठं पलानि दश चाहरेत् ॥
एभ्यश्चतुर्गुणं तोयं भाण्डे चैव विनिक्षिपेत् ॥ ३ ॥
स्थापयेद्भूमिमध्ये तु चतुर्दश दिनानि च ॥
ततो जातरसं शुद्धं क्षिपेत्कच्छपयंत्रके ॥ ४ ॥
मुद्रयित्वा च तस्याधो वह्निं प्रज्वालयेत्सुधीः ॥
तन्मध्ये निक्षिपेत्तत्र मृगनाभिं सकुंकुमम् ॥ ५ ॥

मुनक्का सौ पल (सवा छ सेर) और शक्कर अथवा मिश्री चौगुनी (पचीस सेर) बेर की जड़ उससे आधी पचास पल (तीन सेर आध पाव) जड़ से आधी पचीस पल धाई के फूल (१ सेर ६ छटाक) ॥ १ ॥ और सुपारी, लौंग, जावित्री जायफल, चातुर्जात (नागकेशर, इलायची, तज, तेजपात) त्रिकटु (मिर्च

पीपर सोंठ) मस्तगी ॥ २ ॥ अकरकरा, कूट ये दश दश पल (ढाई ढाई पाव) लेवे इन सब औषधियों से चौगुना पानी एक मिट्टी के मटके में औषधियों सहित डाले ॥ ३ ॥ और उस मटके को पृथ्वी में चौदह दिन पर्यन्त गाड देवे उपरान्त निकाल कर कपडे से छान लेवे फिर उस शुद्धरस को कच्छप यंत्र में चढावे ॥ ४॥ और मुद्रा कर के उसके नीचे अग्नि प्रज्वलित कर देवे फिर उसमें केशर और कस्तूरी डाले ॥ ५ ॥

एतत्सिद्धं क्षिपेद्धीमान्काचभाण्डे निधापयेत् ॥
त्रिदिनेषु व्यतीतेषु नत्पेयं पलसंख्यया ॥ ६ ॥
मध्याह्ने द्विपलं ग्राह्यं सन्ध्याकाले चतुः पलम् ॥
गरिष्ठं स्निग्धमाहारं भक्षयेदस्य सेवकः ॥ ७ ॥
वीर्याभिवृद्धिः प्रभवेन्नराणां रामा च वश्या भवतीह लोके ॥
त एव धन्या मनुजा नरेन्द्रा द्राक्षासवं ये किल सेवयन्ति॥८॥

जब यह सिद्धि हो जाय तब बुद्धिमान् वैद्य उसे कांच के पात्र में रख लेवे तीन दिन बीत जाने उपरान्त प्रातः समय एक पल (४ तोला) प्रमाण पान करे ॥ ६ ॥ और मध्यान्ह समय दो पल (८ तोला) पीवे, सायंकाल चार पल (पाव भर) पीवे, इस आसव का सेवन करने वाला गरिष्ट और चिकने पदार्थ भोजन करे ॥ ७ ॥ इसका सेवन करने से वीर्य बढता है, स्त्रियां वश में हो जाती हैं, वेही मनुष्य मनुष्यों में श्रेष्ठ हैं जो इस द्राक्षासव का निरन्तर सेवन करते हैं ॥८॥

द्राक्षारिष्ट ।

द्राक्षातुलार्द्धं द्विद्रोणे जलस्यापि पचेत्सुधीः॥
पादशेषैकपात्रे च पूतशीते विनिक्षिपेत् ॥९॥
गुडस्य द्वितुलां तत्र त्वगेलापत्रकेशरम् ॥
प्रियंगुर्मरिचं कृष्णा विडंगं चेति चूर्णयेत् ॥१०॥
पृथक्पलोन्मितैर्भागैस्ततो भाण्डे निधापयेत् ॥
समन्ततो हि दूषित्वा पचेज्जातरसं ततः ॥११॥
उरःक्षतं क्षयं हन्ति कासश्वासादिकामयान् ॥
द्राक्षारिष्टमिदं ज्ञेयं वैद्यवर्येण कथ्यते ॥१२॥

मुनक्का आधा तुला (पचास पल) अर्थात तीन सेर आधपाव को दो द्रोण (३२ सेर) जल में औटावे जब चौथाई जल रह जाय तव कपडे से छान कर रक्खे जब शीतल हो जाय ॥ ६ ॥ तब उसमें दो तुला (२०० पल) अर्थात् साढे बारह सेर गुड डाले और तज, लायची, तेजपात, केशर, मालकागनी, काली मिर्च, पीपर, वायविडंग इन सबका चूर्ण ॥ १० ॥ एक एक पल भर उसमें डाल एक हांडी में रख कर पकावे और हिलाता जाय जब सिद्ध हो जाय तब उतार कर काम में लावे ॥ ११ ॥ इस अरिष्ट के सेवन से यह हृदय का घाव, क्षयरोग, खाँसी, श्वास आदि रोगों को नाश कर देता है, इसको द्राक्षारिष्ट जानना। उत्तम वैद्यों ने इस अरिष्ट को वर्णन किया है ॥ १२ ॥

लोहासव।

लोहचूर्णं त्रिकटुकं त्रिफला च यवासकम् ॥
विडंगं चित्रकं मुस्ता चतुःसंख्यापलं पृथक् ॥१३॥
चूर्णीकृत्य ततः क्षौद्रं चतुःषष्टिपलं क्षिपेत् ॥
दद्याद्गुडतुलां तत्र जलद्रोणद्वयं ततः ॥१४॥
घृतभाण्डे विनिक्षिप्य निदध्यान्मासमात्रकम् ॥
लोहासवममुं मर्त्यः पिबेद्वह्निकरं परम् ॥१५॥
पाण्डुश्वयथुगुल्मानि जठराण्यर्शसां रुजम् ॥
कुष्ठं प्लीहामयं कण्डूं कासं श्वासं भगन्दरम् ॥
अरोचकं च ग्रहणीं हृद्रोगं च निवारयेत् ॥१६॥

लोहचूर्ण, त्रिकटु (मिर्च, पीपर, सोंठ) त्रिफला (हर्र, बहेरा, आंवला) जवासा, वायविडंग, चीता, नागरमोथा इन सब औषधियों को अलग अलग चार चार पल (पाव पाव भर) लेवे ॥ १३ ॥ और सबको कूट पीस चूर्ण करे फिर चौसठ पल (४ सेर) शहत और एक तुला (सवा छ सेर) गुड, तथा दो द्रोण (३२ सेर) जल उसमें डाले ॥ १४ ॥ अनन्तर घी के पात्र में भर सब औषधियाँ मिलाय एक महीने भर रख छोडे तो लोहासव सिद्ध होता है। यह पीने से जठराग्नि को प्रबल करता है ॥ १५ ॥ और पांडुरोग, सूजन, वायगोला, उदरपीडा, खूनीवादी बवासीर रोग, कुष्ठरोग, तापतिल्ली, आंव, खाज, खांसी, श्वास, भगन्दर, अरुचि, संग्रहणी और हृदय रोग इन सबको निवारण करता है अर्थात् ये सब रोग इसके सेवन से नष्ट हो जाते हैं ॥ १६ ॥

दशमूला सव ।

दशमूलं तुलार्द्धं च पौष्करं च तदर्धकम् ॥
हरीतकीनां प्रस्थार्द्धं धात्रीप्रस्थद्वयं तथा ॥ १७ ॥
चित्रकं पुष्करमितं चित्रकार्धं दुरालभा ॥
गुडूच्या वै शतपलं विशाला पलपंचकम् ॥ १८ ॥
खादिरस्य पलान्यष्टौ तदर्धं बीजकं तथा ॥
मंजिष्ठा मधुकं कुष्ठं कपित्थं देवदारु च ॥ १९ ॥
विडंगं चविकं लोध्रं भारंगी चाष्टवर्गकम् ॥
कृष्णाजाजीपिप्पली च क्रमुकं पद्मकं शटी ॥ २० ॥
प्रियंगुः सारिवा मांसी रेणुका नागकेशरम् ॥
त्रिवृता रजनी रास्ना मेषशृंगी पुनर्नवा ॥ २१ ॥
शतं चेन्द्रयवा मुस्ताद्विपलान् क्वाथयेज्जले ॥
चतुर्गुणे पादशेषे द्राक्षामष्टपलं क्षिपेत् ॥ २२ ॥
त्रिंशत्पलां तु धातुक्यां गुडं पलचतुःशतम् ॥
द्वात्रिंशत्पलक्षौद्रं च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २३ ॥
भाण्डे पुराणे स्निग्धे च मांसीमरिचधूपिते ॥
पृथक्द्विपलिकानेतान् पिप्पली चन्दनं जलम् ॥ २४ ॥
जातीफलं लवंगं च त्वगेलापत्रकेशरम् ॥
कर्षमात्रं च कस्तूरी दद्यात्पक्षं निधापयेत् ॥ २५ ॥
ततो राजरसं शुद्धं क्षिपेत्कच्छपयंत्रके ॥
कतकद्रुफलं चूर्णं क्षिपेन्निर्मलतां भवेत् ॥ २६ ॥

अरणी, अरलू, बेल, पाढ, खंभारी, सरिवन, पिठिवन, बड़ी कटैया, छोटी कटैया, गोखरु यह १० औषधी दशमूल हैं इनको ५० पल (३ सेर आधपाव) उससे आधा पचीस पल (१ सेर ६ छटाक) पुष्करमूल, और हर्र आधा प्रस्थ (आध

सेर) आंवला दो प्रस्थ (दो सेर) ॥ १७ ॥ चीता पुष्करमूल के बराबर (२५ पल) और चीता से आधा (१२॥ पल) जवासा, तथा गुर्च सौ पल (सवा छ सेर) इन्द्रायन पांच पल (सवा पाव) ॥ १८ ॥ खैरसार आठ पल (आध सेर) विजयसार चार पल (पाव भर) और मजीठ, मुलहठी, कूट, कैथा, देवदारु, ॥ १९ ॥ वायविडंग, कच्य, लोध, भारंगी, अष्टवर्ग (मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि) काला जीरा, पीपर, पठानी लोध, पद्माख, कचूर ॥ २० ॥ मालकागनी, श्यामलता, बालछड़, रेणुका, नागकेशर, निशोथ, हलदी, रासनि, मेढासिंगी, सांठ की जड ॥ २१ ॥ सौंफ, इन्द्रजौ, नागरमोथा यह औषधियां दो दो पल (आध आध पाव) लेवे और सबसे चौगुणे जल में काढा करे जब चौथाई रह जाय तब उसमें आठ पल (आध सेर) मुनक्का डाले ॥ २२ ॥ और धायके फूल तीस पल (१ सेर १४ छटाक) तथा गुड चार सौ पल (२५ सेर) और शहत बत्तीस पल (दो सेर) इन सबको इकट्ठा करके मिला देवे ॥ २३ ॥ फिर पुराने और चिकने मिट्टी के पात्र में बालछड और मिर्च दो दो पल (आध आध पाव) लेके धूनी देवे और पीपर, चन्दन, मोथा ॥ २४ ॥ जायफल, लौंग, तज, इलायची, पत्रज, नागकेशर यह चार चार टंक (तोला तोला भर) कस्तूरी चार टंक (तोला भर) डाले और पंद्रह दिन तक पृथ्वी में गाड देवे ॥ २५ ॥ फिर जब राजरस शुद्ध हो जाय तब कच्छप यंत्र द्वारा आसव खींच लेवे, निर्मली के फल का चूर्ण डालने से यह निर्मल हो जाता है ॥ २६ ॥

पक्षादूर्ध्वं पिबेद्यस्तु मात्रया च यथाबलम् ॥
धातुक्षयं जयत्येतत् कासं पंचविधं तथा ॥ २७ ॥
अर्शांसि षट्प्रकाराणि तथाष्टावुदराणि च ॥
प्रमेहं च महाव्याधिमरुचिं पांडुतां तथा ॥ २८ ॥
सर्वान् वातांस्तथा शूलं श्वासं छर्दिमसृग्दरम् ॥
अष्टादशैव कुष्ठानि शोफं शूलं भगन्दरम् ॥ २९ ॥
शर्कराद्यं मूत्रकृच्छ्रमश्मरीं च विनाशयेत् ॥
कृशस्य पुष्टिं कृत्वा च पुष्टस्य च महाबलम् ॥ ३० ॥
महावेगो महातेजा महावीर्ययुतो नरः ॥
कामपुष्टिं करोत्येष वंध्यानां पुत्रदो भवेत् ॥ ३१ ॥

एक पक्ष (पंद्रह दिन) के उपरान्त जो मनुष्य बलाबल के अनुसार मात्रा

लेकर पीता है तो यह आसव धातु की क्षीणता और पांच प्रकार की खांसी को दूर कर देता है ॥ २७ ॥ तथा छ प्रकार की बवासीर, आठ प्रकार के उदर रोग, प्रमेह , महारोग, अरुचि, पांडुरोग ॥ २८ ॥ सब वातरोग, तथा शूल, श्वास, वमन, प्रदररोग, अठारह प्रकार के कुष्ठरोग, सूजन, पीडा, भगन्दर ॥ २९ ॥ शर्करा आदि सुजाक, पथरी इन सब रोगों को नाश कर देता है, दुबले मनुष्य को पुष्ट करता है और पुष्ट मनुष्य को बलवान करता है ॥ ३० ॥ वह मनुष्य बडे वेग वाला, बडे तेज वाला, और बहुत वीर्य वाला हो जाता है । यह आसव कामदेव को पुष्ट करता है और बांझ स्त्री को पुत्र देता है ॥ ३१ ॥

कूष्मांडासव—

कूष्माण्डं च फलं पक्वं तस्मिन् छिद्रं तु कारयेत् ॥
छिद्रमध्ये गुडं देयं द्वितुलां च शनैः शनैः ॥ ३२ ॥
त्वचाबीजं च उत्कृष्य स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ॥
बदरीत्वक्पलान्यष्टौ तस्य क्वाथं प्रदापयेत् ॥ ३३ ॥
द्वौ कसेलौ च धातुक्या हवुषा च पलं पलम् ॥
त्रिफलाशृंगवेरं च शृंगी भार्ङ्गी च पुष्करम् ॥ ३४ ॥
तालमूली स्वयंगुप्ता कंकोलं वंशलोचनम् ॥
यष्टी मोचरसं मुस्तं ग्रन्थिकं चाष्टवर्गकम् ॥ ३५ ॥
चातुर्जातविडंगानि व्योषं चित्रककुंकुमम् ॥
जातीपत्रं लवंगं च करभं मालतीफलम् ॥ ३६ ॥
दशांश रक्तगन्धं च कट्फलं रेणुका शटी ॥
तिक्तकन्दं च निर्गुंडीमाटरूषं कुलंजनम् ॥ ३७ ॥
अजमोदाऽश्वगन्धा च चव्यं माजूफलं वरी ॥
सारं चूर्णं तेजबलं तालीसं श्यामपूगकम् ॥ ३८ ॥
एतेषां कर्षमात्रं च सूक्ष्मचूर्णं तु कारयेत् ॥
मूलभांडे क्षिपेत्सर्वं पलमेकं भजेन्नरः ॥ ३९ ॥

एक पका हुआ पेठा लेकर उसमें छेद करे उस छेद में धीरे धीरे दो तुला

(२०० पउ) अर्थात् साढे बारह सेर गुड भरे ॥ ६२ ॥ और बकल बीज अलग करके चिकने पात्र में धरे फिर झरबेरी की छाल आठ पल (आध सेर) ले उसका काढ़ा कर उसमें डाल देवे ॥ ३३ ॥ और कसेला दो पल, धाय के फूल दो पल, हाऊबेर एक पल, त्रिफला, सोंठ, ककरासिंगी, भारंगी, पुहकरमूल ॥ ३४ ॥ मूशली, गोखरू, कंकोल, वंशलोचन, मुलहठी, मोचरस, पिपलामूल, अष्टवर्ग ॥ ३५ ॥ चातुर्जात (इलायची, नागकेशर, तज, तेजपात,) वायविडंग, त्रिकटु, चीता, केशर, जावित्री, लौंग, अकरकरा, जायफल ॥ ३६ ॥ दसवाँ भाग लाल चन्दन, कायफल, रेणुका, कचूर, कुटकी, जिमीकन्द, सँभालू, अडूसा, कुलंजन ॥ ३७ ॥ अजमोद, असगन्ध, चव्य, माजूफल, शतावरी, सार, ऊन, तेजबल, तालीस, चिकनी सुपारी ॥ ३८ ॥ इन सब औषधियों को एक एक कर्ष (तोला तोला भर) लेके महीन पीस करके चूर्ण करे और एक हाँड़ी में सबको रख छोड़े फिर आसव सिद्ध होने पर मनुष्य एक पल (छटाक भर) सेवन करे ॥३९॥

कासं श्वासं च हृद्रोगं पांडुरोगं क्षतं क्षयम् ॥
गुल्मोदरं ग्रहण्यर्शो मूत्रकृच्छ्रं तथाश्मरीम् ॥ ४० ॥
प्रमेहशोफातीसारवातपित्तकफापहः ॥
कूष्माण्डासव इत्येष बलकृन्मलशोधनः ॥ ४१ ॥

खाँसी, श्वास, हृदयरोग, पांडुरोग, घाव, क्षयरोग, वायगोला, उदर विकार, संग्रहणी, बवासीर, सुजाक, पथरी ॥ ४० ॥ प्रमेह, शोथरोग, अतिसार (दस्त) वातपित्तकफ विकार इन रोगों को नाश करने वाला यह कूष्मांड आसव बल दान करने वाला और मल को शुद्ध करने वाला है ॥ ४१ ॥

जंबीर द्राव—उदर रोग पर।

शतं जम्बीररसकं रामठं च पलद्वयम् ॥
सैन्धवं च विडङ्गं च पृथक् दत्वा पलं पलम् ॥ ४२ ॥
त्र्यूषणं पलमेकैकं सौवर्चलचतुष्टयम् ॥
यवानिका पलं चेकं सर्षपं च चतुष्टयम् ॥ ४३ ॥
स्निग्धभाण्डे विनिक्षिप्य अश्वशालां निधापयेत् ॥
एकविंशद्दिनं यावत्ततः सर्वं समुद्धरेत् ॥ ४४ ॥

जँभीरी का रस सौ पल (सवा छ सेर) हींग दो पल (आधा पाव) और सेंधा नमक, वायविडंग यह अलग अलग एक एक पल (छटांक छटांक भर) ॥ ४२ ॥ सोंठ, मिर्च, पीपर एक एक पल और सोंचर नमक चार पल (पाव भर) अजवायन एक पल, सरसों चार पल ॥ ४३ ॥ इन सबको एक चिकने पात्र में रक्खे और घोड़शाला में गाड़ देवे, इक्कीस दिन तक गाड़ा रहने दे, उपरान्त निकाल लेवे ॥ ४४ ॥

सुचन्द्रे सुदिने लोके पूजयित्वा भिषग्गुरून् ॥
यकृत्प्लीहामगुल्मं च विद्रध्यष्ठीलिकादयः ॥ ४५ ॥
वातगुल्मतीसारं शूलं पार्श्वहृदामयान् ॥
नाभिशूलं विबन्धं च आध्मानं च गुदोदरम् ॥ ४६ ॥
नश्यन्ति तस्य शीघ्रेण वातश्लेष्मामयाश्च ये ॥
जीर्यन्ते तस्य कोष्ठे तु जम्बीरीद्रवसेवनात् ॥ ४७ ॥

जब उत्तम चन्द्रमा और शुभ दिन हो तब वैद्य और गुरु जनों का पूजन करके इस जम्भीरी द्रव का सेवन करे यह द्रव्य सेवन करने से यकृत्, पिलही, आँव, वायगोला, विद्रधि और अष्ठीलिका आदि ॥ ४५ ॥ तथा वातगुल्म (वायु की गाँठ) अतीसार, शूल, कुक्षिपीड़ा, हृदयरोग, नाभिशूल, दस्त बँध जाना, अफरा, गुदा संबंधी रोग और उदररोग ॥ ४६ ॥ उस मनुष्य के इतने रोग शीघ्र नाश हो जाते हैं, तथा जो वात और कफ जनित रोग हैं वे भी दूर हो जाते हैं। इस जँभीरी द्रव के सेवन से कोष्ठगत अजीर्ण रोग नष्ट हो जाता है ॥ ४७ ॥

अथ लेपप्रकार—प्रथम व्रण पर लेप ।

शिरीषयष्टी नतचन्दनैला मांसीहरिद्राद्वय कुष्ठवालैः ॥
लेपो दशांगः सघृतप्रलेपाद्विसर्पकण्डूव्रणदाहहन्ता ॥ १ ॥

अन्यच्च-

कृष्णाजाजी ब्रह्मदण्डी मरिचं रामपिप्पली ॥
स्फोटिकायां हितो लेपः पाने वा तन्दुलाम्भसा ॥ २ ॥

सिरस की छाल, मुलहठी, तगर, लाल चन्दन, इलायची, बालछड़, हल्दी, दारुहल्दी, कूट, सुगन्धवाला अथवा नेत्रवाला इन औषधियों को लेकर घी में मिलावे। इन दस औषधियों का यह दशांग लेप बना कर लेप करे यह लेप विसर्प, खुजली, घाव और जलन को नाश करने वाला है ॥ १ ॥ दूसरा लेप यह है कि काला जीरा, इन्द्रायण, स्याह मिर्च, छोटी पीपर इन औषधियों का लेप फोड़ा फुंसी के निमित्त हितकारी है अथवा चावलों के पानी के साथ इसको पीवे तो भी फोड़ा आदि को हितकारी है ॥ २ ॥

सूजन पर लेप ।

पुनर्नवादारुशुण्ठीसिद्धार्थं शिग्रुमेव च ॥
पिष्ट्वा चैवारनालेन प्रलेपः सर्वशोफजित् ॥ ३ ॥
बीजपूरजटाहिंस्रादेवदारुमहौषधैः ॥
रास्नाग्निमंथालेपोऽयं वातशोथविनाशनः ॥ ४ ॥

साँठ की जड़, देवदारु, सोंठ, सरसों, सहिजन इन सबको पीस कर काँजी के साथ लेप करने से सब प्रकार की सूजन जाती रहती है ॥ ३ ॥ बिजौरा की जड़, वायविडंग, कटैया, देवदारु, सोंठ, रासन, अरणी इन औषधियों का लेप वादी की सूजन को नाश करने वाला है ॥ ४ ॥

तथा च—

मधुकं चन्दनं दूर्वा नलमूलं च पद्मकम् ॥
उशीरं वालकं पद्मं पित्तशोफप्रलेपनम् ॥ ५ ॥
कृष्णापुराणपिण्याकं शिग्रुत्वक् च शतावरी ॥
मूत्रे पिष्ट्वा सुखोष्णोऽयं प्रलेपः श्लेष्मशोफहा ॥ ६ ॥
अजादुग्धतिलैर्लेपो नवनीतेन संयुतः ॥
शोथमारुष्करं हन्ति लेपश्च कृष्णमृद्भवः ॥ ७ ॥

मुलहठी, चन्दन, दूब, नलमूल, (नरकुल वृक्ष की जड़) पद्माख, खस, नेत्रवाला, कमलगट्टा अथवा कमल के फूल इन सबका लेप पित्त की सूजन में हितकारी है ॥ ५ ॥ तथा पीपर, पुरानी खल, सहिजन की छाल, शतावरी इन को गोमूत्र में पीस कुछ गरम लेप करे यह कफ की सूजन को दूर करता है ॥ ६ ॥ और बकरी का दूध और तिल का लेप मक्खन मिला कर लगाने से यह लेप भिलावे की सूजन को दूर करता है ॥ ७ ॥

शिरपीडा पर लेप।

कुष्ठमेरण्डतैलेन लिप्तं कांजिकपेषितम् ॥
शिरोर्तिवातजान् हन्यात् पुष्पं वा मुचुकुन्दजम् ॥८॥
देवदारु नतं कुष्ठं नलदं विश्वभेषजम् ॥
सकांजिकः स्नेहयुक्तो लेपो वातशिरोर्तिनुत् ॥ ९ ॥
धात्रीकसेरुह्रीबेरपद्मपद्मकचन्दनैः ॥
दूर्वोशीरनलानां च मूलैः कुर्यात्प्रलेपनम् ॥ १० ॥
शिरोर्तिं पित्तजां हन्यात् रक्तपित्तरुजस्तथा ॥
हरेणुनतशैलेयमुस्तैलागरुदारुभिः ॥ ११ ॥
मांसी रास्ना सचुक्रश्च लेपः श्लेष्मशिरोर्तिनुत् ॥
मरिचं कुष्ठमधुकवचाकृष्णोत्पलैस्तथा ॥ १२ ॥
लेपः सकांजिकस्नेहः सूर्यावर्तार्द्धभेदयोः ॥
शुंठीचन्दनमेरण्डजटालेपः शिरोर्तिनुत् ॥
राजिकाभिः सर्षपैश्च शुण्ठ्याथ मरिचैरथ ॥ १३ ॥

कूट और अंडी के तेल को काँजी के साथ पीस कर लेप करे तो वातजनित शिरपीड़ा दूर हो जाती है, अथवा मुचुकुन्द के फूल का लेप शिरपीड़ा को दूर करता है ॥ ८ ॥ और देवदारु, तगर, कूट, बालछड़, सोंठ इन औषधियों को काँजी और तेल में मिला कर लेप करे तो वात से उत्पन्न शिरपीड़ा नाश हो जाती है ॥ ९ ॥ एवं आँवला, कसेरू, हाऊवेर, कमल, पद्माख, चन्दन, दूब, खस, बालछड़, नीम की जड़ इनका लेप करे ॥ १० ॥ तो पित्त से उत्पन्न शिरपीड़ा दूर हो जाती है और रक्तपित्त रोग नाश हो जाता है। तथा सँभालू, तगर, पाषाण भेद, इलायची, अगरु, देवदारु ॥ ११ ॥ बालछड़, रासनि, अंडा की जड़ इनके लेप से कफ दोष से उत्पन्न शिर पीड़ा दूर हो जाती है। तथा काली मिर्च, कूट, मुलहठी, वच, पीपर तथा कमल ॥ १२ ॥ इन द्रव्यों को पीस कर काँजी और तेल में लेप करे तो सूर्यावर्त और आधा शीशी की पीड़ा दूर हो जाती है। तथा सोंठ, चन्दन, अंडा की जड़ इनके लेप से शिरपीड़ा नष्ट हो जाती है एवं राई, सरसा, सोंठ, काली मिर्च के लेप से भी शिर की पीड़ा दूर हो जाती है ॥ १३ ॥

कर्णपीडा पर लेप ।

कुष्टं शुंठी वचा दारुशताह्वाहिंगुसैन्धवम् ॥
वस्तीमूत्रश्रृतं तैलं सर्वकर्णामयापहम् ॥ १४ ॥

कूट, सोंठ, बच, दारुहलदी, सौंफ, हींग, सेंधा इन औषधियों को पीस कर बछिया के मूत्र के साथ कान में डालने से सब प्रकार के कान के रोग नाश हो जाते हैं ॥ १४ ॥

उदरपीडा पर लेप ।

एलीयकं हरिद्रा च स्फटिका नवसादरम् ॥
टंकणं धेनुमूत्रेण कोष्णं जठरलेपनम् ॥ १५ ॥

एलुआ और हलदी, फटकरी, नौसादर, सुहागा इनको लेके गाय के मूत्र में पीस कर लेप करने से उदर की पीड़ा शान्त हो जाती है ॥ १५ ॥

शूल पर लेप ।

मदनस्य फलं तिक्तां पिष्ट्वा कांजिकवारिणा ॥
कोष्णं कुर्यान्नाभिलेपं शूलशान्तिर्भवेत्ततः ॥ १६ ॥
पुष्करं शावरं शृंगं कुष्ठं विश्वौषधं तथा ॥
उष्णोदकेन संपिष्य: लेपः शूलविनाशकृत् ॥ १७ ॥

मैनफल, कुटकी इनको काँजी के पानी से पीस कर गरम करके कुछ गरम तोंदी पर लेप करे तो तोंदी की पीड़ा शान्त हो जाती है ॥ १६ ॥ पुहकर-मूल, सावरसिंगी, कूट, सोंठ इनको गरम पानी से पीस कर लेप करे यह लेप शूल को नाश करता है ॥ १७ ॥

गृहधूमं कपिल्लं च टंकणं मरिचं निशा ॥
घृते घृष्ट्वा प्रलेपोऽयं सर्वव्रणनिवृत्तये ॥ १८ ॥
तैलेन वा घृतेनैव पिष्ट्वा चूर्णं प्रलेपयेत् ॥
धात्रीफलानां रक्षा वा व्रणे लेप्या घृतेन सा ॥ १९ ॥

अपक्वो यदि वा पक्वो निम्बः सर्वव्रणे हितः ॥
अपक्वं पाचयेन्निम्बः पक्वं चापि विशोधयेत् ॥ २० ॥

घर में का धुवाँ, कबीला, सुहागा, काली मिर्च, हलदी इन सबको घी में घिस कर लेप बनावे। यह लेप सब प्रकार के व्रण (फोड़ा फुंसियों) को दूर कर देता है ॥ १८ ॥ तेल के साथ अथवा घी के साथ पीस कर लेप करे अथवा आँवले की राख घी में मिला कर व्रण (फोड़ा) पर लेप करे तो फोड़ा अच्छा हो जाता है ॥ १९ ॥ फोड़ा कच्चा हो अथवा पक्का हो सब प्रकार के फोड़ा फुंसियों के लिए नीम हितकारी है कच्चे फोडे को नीम पकाता है और पके को साफ करके अच्छा कर देता है ॥ २० ॥

गण्डमाला पर लेप।

सर्षपान् शिग्रुबीजानि शणबीजातसीयवान् ॥
मूलकस्य च बीजानि तक्रेणाम्लेन पेषयेत् ॥ २१ ॥
गण्डमालार्बुदं गण्डं लेपेनानेन शाम्यति ॥
कटुतैलान्विते लेपात्सर्पकञ्चुकभस्मभिः ॥ २२ ॥
श्यः शाम्यति गण्डस्य प्रकोपात्स्फुटति ध्रुवम् ॥
शाणमूलकशिग्रूणां फलानि तिलसर्षपाः ॥ २३ ॥
रामठः किण्वमलसीं प्रलेपात्पाचनः स्मृतः ॥
दन्तीचित्रकमूलत्वक्स्नुह्यर्कपयसा गुडैः ॥ २४ ॥
भल्लातकास्थिकासीससैन्धवैर्दारुणः स्मृतः ॥
कपोतकंकगृध्राणां मललेपेन दारुणः ॥ २५ ॥

सरसों, सहिजन के बीज, सन के बीज, अलसी, मूली के बीज इन सबको खट्टे मठे में पीस कर लेप बनावे ॥ २१ ॥ इस लेप से गंडमाला और अर्बुद रोग दूर हो जाता है, कडुए तेल सहित साँप की कैंचुली की राख के लेप से ॥ २२ ॥ गण्डमाला फूट कर अच्छा हो जाता है, एवं सन के बीज, मूली के बीज, सहिजन का फल, तिल, सरसों ॥ २३ ॥ हींग, सुराबीज, अलसी इन तीनों औषधियों का लेप बना कर लेप करने से गंडमाला पक जाता है ऐसा कहा है, दन्ती (जमालगोटा) चीता की जड़ और वक्कल, थूहर का दूध, मदार का दूध,

शनु ॥ २४ ॥ मिलावा की मींगी, कसीस, सेंधा नमक इनके लेप से भी गण्ड-माला रोग नाश हो जाता है, कबूतर और सफेद रंग के गीध की बीट के लेप से भी गण्डमाला रोग जाता रहता है ॥ २५ ॥

दूर्वाभयासैन्धवैश्च चक्रमर्द कुठेरका ॥
निशातक्रयुतो लेपो कण्डूदद्रुविनाशनः ॥ २६ ॥
चक्रमर्दतिलसर्षपकुष्टं बावची स रजनीद्वयतक्रम् ॥
हन्ति विचर्चिकमण्डलदद्रुवर्षशतान्यपि नश्यति कण्डूः ॥२७॥
पलाशपर्पटं घृष्ट्वा लेप्यं निम्बुरसेन वा ॥
गुंजादालीचित्रकं च प्रपुन्नाटजटाऽथवा ॥ २८ ॥
प्रपुन्नाटस्य बीजानि धात्रीसर्जरसो निशा ॥
लेपः सर्षपतैलेन घृष्ट्वा दद्रुविनाशनः ॥ २९ ॥

दूब, हर्र, सेंधा, पँवार, थूहर, हलदी इनको पीस मठा में लेप बनावे यह लेप खुजली और दाद को नष्ट करने वाला है ॥ २६ ॥ पँवार, तिल, सरसों, कूट, बावची, हलदी, दारुहलदी इनको पीस मठा मिलाय लेप बनावे तो इस लेप से विचर्चिका, चकत्ता, दाद और सौ वर्ष तक का खाज दूर हो जाता है ॥ २७ ॥ एवं ढाक के बीज और पित्तपापड़ा को नीबू के रस में घिस कर लेप बनावे, अथवा घुघुची, देवदारु, चीता और पवाँर के बीज इनको पीस कर लेप बनावे और लेप करे तो दाद जाता रहता है ॥ २८ ॥ तथा पँवार के बीज, आँवला का रस, सज्जी, हलदी इन सबको सरसों के तेल के साथ घिस कर लेप करने से दाद नष्ट हो जाता है ॥ २९ ॥

कुष्ठ (कोढ) पर लेप।

दार्वीमूलकबीजानि तालकं सुरदारु च ॥
तांबूलपत्रं सर्वाणि कार्षिकाणि पृथक् पृथक् ॥ ३० ॥
शंखचूर्णं शाणमात्रं सर्वाण्येकत्र कारयेत् ॥
लेपोऽयं वारिणा पिष्टः सिध्मानां नाशनं परम् ॥३१॥
धात्रीसर्जरसाश्चैव यवक्षारश्च चूर्णितः ॥
सौवीरेण प्रलेपोऽयं प्रयोज्यः सिध्मनाशनम् ॥३२॥

सगन्धकयवक्षारश्चूर्णं पिष्टं निहन्ति ताम् ॥
अपामार्गरसात्पिष्ट मूलिकाबीजलेपतः ॥
सर्वाङ्गसम्भवं सिध्मं नाशयत्यपि वेगतः ॥३३॥

दारुहलदी, मूली के बीज, हरताल और देवदारु, पान इन सब ओपधियों को अलग अलग एक एक कर्ष (तोला तोला भर) लेवे ॥ ३० ॥ और शंख का चूर्ण एक टंक (चार माशा) इन सब औषधियों को एकत्र करे और पानी में पीस कर लेप करे यह लेप सिध्म (सेहुवाँ मिले हुए कोढ़) रोग का नाश करने वाला है ॥ ३१ ॥ एवं आँवला, सज्जी, पारा, जवाखार इनके चूर्ण को काँजी में मिला कर लेप करने से सिध्म कोढ़ जाता रहता है ॥ ३२ ॥ तथा गन्धक, जवाखार के चूर्ण को काँजी से पीस कर लेप करने से सफेद दाग नष्ट हो जाते हैं, तथा ओंगा के रस के साथ मूली के बीज को पीस कर लेप करने से सब अँगों में उत्पन्न सिध्म कोढ़ शीघ्र नष्ट हो जाता है ॥ ३३ ॥

मुखछाया (झाईं) पर लेप ॥

रक्तचन्दनमंजिष्ठा लोध्रकुष्ठप्रियंगवम् ॥
वटांकुरा हरिद्रे द्वे व्यंगहा मुखकान्तिदः ॥३४॥
कुष्टतिलजीरकद्वय सिद्धार्थनिशायुगैः समः पयसा ॥
लेपो वदनसुधाकरव्यंगकलंकं विनाशयति ॥३५॥
वटस्य पांडुपत्राणि मालतीरक्तचन्दनम् ॥
कुष्ठं कालीयकं लोध्रमेभिर्लेपो विधीयते ॥३६॥
तारुण्यपिडिकाव्यंगनीलिकादिविनाशनम् ॥३७॥

लाल चन्दन, मजीठ, लोध, कूट, मालकागनी, वट वृक्ष के अंकुर, हलदी, दारुहलदी इन औषधियों का लेप मुख की व्यंगता को हरता है और कांति को बढ़ाता है ॥ ३४ ॥ तथा कूट, तिल, दोनों सफेद स्याह जीरे, सरसों, हलदी, दारुहलदी इन सबको बराबर लेवे और दूध के साथ मिला कर मुँह पर लेप करे तो यह लेप मुँह पर के छाया समान स्याह दागों को दूर करता है ॥ ३५ ॥ वट वृक्ष के पीले पत्तों, चमेली, लाल चन्दन, कूट, काला अगरू, लोध इन द्रव्यों का लेप बना कर लेप करे ॥ ३६ ॥ तो तरुण अवस्था के मुहाँसे, मुख की झाईं, स्याह दाग आदि सब दूर हो जाते हैं ॥ ३७ ॥

नासिका से रुधिर गिरने पर लेप ।

आलमकं घृते भ्रष्टं पिष्टं कांजिकवारिभिः ॥
जयेन्मूर्द्धप्रलेपेन रक्तं नासिकया स्रुतम् ॥ ३८ ॥

आँवलों को घी में भून कर काँजी के पानी में पीस कर लेप बनावे यह लेप मस्तक पर करने से नाक से रुधिर गिरना बन्द हो जाता है॥ ३८ ॥

नेत्रपीडा पर लेप ।

पथ्यागैरिकसिन्धूत्थदार्वीतार्क्ष्यसमांशकैः ॥
जलपिष्टैर्बहिर्लेपः सर्वनेत्रामयापहः ॥ ३९ ॥
हरीतकीसैन्धवमक्षशैलैः सगैरिकास्वच्छजलेन पिष्टैः ॥
बहिः प्रलेपं नयनस्य कुर्यात् सर्वाक्षिरोगोपशमार्थमेतत् ॥४०॥

हर्र, गेरू, सेंधा, दारुहल्दी, रसौत इनको समान भाग लेके जल के साथ पीसे और आँखों के पलकों पर लेप करे यह लेप सब प्रकार के नेत्ररोग नाश करता है ॥ ३९ ॥ तथा हर्र, सेंधा, बहेड़ा, मैनशिल, गेरू इन सबको निर्मल जल के साथ पीस कर आँखों के बाहर और पलकों पर लेप करे तो सब प्रकार के नेत्र रोग नाश हो जाते हैं ॥ ४० ॥

केशकल्प ।

अयोरजो भृंगराजस्त्रिफला कृष्णमृत्तिका ॥
स्थितमिक्षुरसे मासं लेपनात्पलितं जयेत् ॥ ४१ ॥
त्रिफलानालिकापत्रं लोहं भृंगरसः समम् ॥
अजामूत्रेण सपिष्टं लेपात्कृष्णीकरं स्मृतम् ॥ ४२ ॥

लोह चूर्ण, भँगरा, हर्र, बहेड़ा, आँवला, स्याह मिट्टी इन सबको लेके लोहे के पात्र में रख गन्ना का रस उसमें डाल कर एक महीना पर्यन्त रख छोड़े फिर उसका लेप बनाय लेप करे तो बाल नहीं गिरते हैं ॥ ४१ ॥ तथा त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आँवला) नील के पत्ते, लोह चूर्ण, भँगरा का रस इनको समान भाग लेकर बकरी के मूत्र में पीस कर लेप करे तो बाल काले हो जाते हैं ॥ ४२ ॥

अन्यच्च—

त्रिफला लोहचूर्णन्तु दाडिमं त्वग्विषं तथा ॥
प्रत्येकं पंचपलिकं चूर्णं कुर्याद्विचक्षणः ॥ ४३ ॥
भृंगराजरसस्यापि प्रस्थषट्कं प्रदापयेत् ॥
क्षिप्त्वा लोहमये पात्रे भूमिमध्ये निधापयेत् ॥ ४४ ॥
मासमेकं ततः कुर्याच्छागदुग्धेन लेपनम् ॥
कुर्याच्छिरसि रात्रौ च सवेष्ट्यैरण्डपत्रकैः ॥ ४५ ॥
स्वपेत्प्रातस्ततः कुर्यात् स्नानं तेन प्रजायते ॥
पलितस्य विनाशश्च त्रिभिर्लेपैर्न संशयः ॥ ४६ ॥

त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आँवला) लोह चूर्ण, अनार की छाल तथा विष (तेलिया मीठा) यह प्रत्येक पाँच पाँच पल (सवा सवा पाव) लेकर बुद्धिमान् वैद्य चूर्ण करे ॥ ४३ ॥ फिर भँगरा का रस छ प्रस्थ (छ सेर) लोहे के पात्र में डाल उसमें यह चूर्ण मिलाय बंद करके पृथिवी में गाड़ देवे ॥ ४४ ॥ एक महीना के उपरान्त निकाल कर बकरी के दूध के साथ रात में शिर के केशों पर लेप करे और बालों पर अंडा के पत्ता लपेटे ॥ ४५ ॥ ओर सो जावे फिर सवेरे उठ कर स्नान करे ऐसे तीन बार लेप करने से निस्सन्देह सफेद बाल काले हो जाते हैं ॥ ४६ ॥

लोहचूर्णं ताम्रचूर्णं तुत्थं माजूफलं तथा ॥
धात्रीभृंगरसं नीलीं महिदी सर्वमेलितम् ॥ ४७ ॥
लोहपात्रे तु लोहस्य वटकेन विघर्षयेत् ॥
शार्षकूर्चादिपलिते लेपनात्केशरंजनम् ॥ ४८ ॥

लोह चूर्ण, ताँबे का चूर्ण, नीला थोथा, माजूफल, आँवला, भँगरा का रस, नील की पत्ती, मेंहदी इन सब द्रव्यों को एक में मिलावे ॥ ४७ ॥ और लोहे के पात्र में लोहे के मूसले से घिसे जब बारीक हो जाय तब कूची से लेप करे इस लेप से सफेद बाल काले हो जाते हैं ॥ ४८ ॥

काकिण्याः पत्रमूलं सहचरसहितं केतकीनां च कन्दं
छायाशुष्कं च भृंगं त्रिफलरसयुतं तैलमध्ये निधाय ॥

निक्षिप्तं लोहभाण्डे क्षितितलनिहितं मासमेकं च यावत्
केशाः काशप्रकाशा भ्रमरकुलनिभा मासमेकं भवन्ति ॥४९॥

कौआ गोड़ी के पत्ते और जड़, पियाबाँसा और केतकी जड़ इनको छाया में सुखा कर भँगरा और त्रिफला के रस समेत तेल में मिलाय लोहे के पात्र में एक महीना तक पृथिवी में गाड़ देवे महीना के उपरान्त निकाल कर केशों पर मले तो केश एक महीना में भौंरा के तुल्य काले हो जाते हैं ॥ ४९ ॥

शंखचूर्णस्य भागौ द्वौ हरतालैकभागकम् ॥
मनःशिलार्द्धभागा स्यात्सर्जिका चैकभागका ॥ ५० ॥
लेपोऽयं वारिपिष्टस्तु केशानुत्पाट्य दीयते ॥
अनया लेपयुक्त्या च सप्तवेलं प्रयुक्तया ॥
केशस्थानं निर्मलं स्यात्क्षपणस्य शिरो यथा ॥ ५१ ॥

शंख चूर्ण दो भाग, हरताल एक भाग, मैनशिल आधा भाग, सज्जी एक भाग ॥ ५० ॥ इन सबको लेके पानी से पीसे और केशों पर लेप करे यह लेप बालों को उखाड़ता है सात बार लेप को लगावे तो केशों का स्थान निर्मल हो जाता है अर्थात् बाल उखड़ कर ऐसा साफ हो जाता जैसा कि क्षपणक (बौद्ध मत के संन्यासी) का शिर घुटा हुआ चिकना होता है ॥ ५१ ॥

अग्निदग्ध पर लेप ।

अग्निदग्धे तुगाक्षीरीप्लक्षचन्दनगैरिकैः ॥
सामृतैः सर्पिषा स्निग्धैरालेपं कारयेद्बुधः ॥ ५२ ॥
यवान्दग्ध्वा मषी कार्या तिलतैलेन संयुता ॥
अयं सर्वाग्निदग्धेषु प्रलेपो व्रणलेपनः ॥ ५३ ॥
निम्बपत्राणि सुरसा कुष्ठं धात्रीफलानि च ॥
ईषद्दग्धे यथालाभे लेपनं भिषगुत्तमम् ॥ ५४ ॥
कुष्ठं मधुकयष्टी च चन्दनैरण्डपत्रकैः ॥
मध्ये दग्धे हितो लेपो दुग्धेन परिपेषितैः ॥ ५५ ॥

यदि अग्नि से दग्ध हो जाय तो तवाखीर, पकरिया, चन्दन, गेरू, गुर्च, घी इनका चिकना लेप बुद्धिमान् वैद्य बतलावे इस लेप से अग्नि करके जला हुआ अच्छा हो जाता है ॥ ५२ ॥ जवों को जला कर कोयला करे और तिल के तेल में मिला कर लेप करे इस लेप से अग्नि से जल जाने पर जो फफोले अथवा घाव हो जाते हैं वे सब अच्छे हो जाते हैं ॥ ५३ ॥ तथा नीम के पत्ते, तुलसीदल, कूट और आँवला इनका लेप उत्तम वैद्य बनावे यह लेप थोड़े जले पर लगाने से दग्ध स्थान अच्छा हो जाता है ॥ ५४ ॥ कूट, महुआ, मुलहठी, चन्दन, अंडा के पत्ता इन औषधियों का लेप दूध में मिला कर करे तो अग्नि से मध्यम जला हुआ अच्छा हो जाता है ॥ ५५ ॥

हस्तपाददाह पर लेप।

बदरीपल्लवलेपः श्रीखंडारिष्ठफेन संयुक्तः ॥
दातव्यः पदलेपः शाम्यति रुग्दाहकं तस्य ॥ ५६ ॥

बेरी के पत्तों को लेकर पीसे और हाथ पावों पर लेप करे अथवा चन्दन और नीम की छाल का लेप बना कर पावों पर लेप करे तो हाथ पांव का रोग और जलन उस मनुष्य की शांति हो जाती है ॥ ५६ ॥

आंतों की वृद्धि पर लेप।

लाक्षाकांचनकाबीजं शुंठीदारुसगैरिकम् ॥
कुन्दरूगुन्दकांजीकैर्लेप्यमंत्रविवर्धने ॥ ५७ ॥

लाख, कचनार के बीज, सोंठ, देवदारु, गेरू, कुंदरू का गोंद इन सब का कांजी में मिला कर गरम करे यह लेप करने से आँतों का बढ़ना बन्द हो जाता है ॥ ५७ ॥

अंतर्गलनाशक लेप।

एरंडबीजं निर्गुण्डी निशा लाक्षा च पुष्करम् ॥
आरनालेन संपिष्य उष्णं पिंडीकरण्डहृत् ॥५८॥
रामठं सैन्धवं कुष्ठं जीरकं गोमयान्वितम् ॥
लेपस्तैलेन वा सम्यगन्तर्गुण्डविनाशनः ॥५९॥

अंडी की मींगी, सँभालू, हलदी, लाख, पुहकरमूल इन औषधियों को कांजी में घीसे और गरम करके लेप करे तो नल बढ़ जाते हैं ॥ ५८ ॥ तथा हींग, सेंधा नमक, कूट, जीरा इनको गोबर और तेल में पीस कर लेप करने से अन्त्रवृद्धि रोग दूर हो जाता है ॥ ५९ ॥

ववासीर पर लेप ।

शिरीषबीजकुष्ठार्कक्षीरपिप्पलिसैन्धवाः ॥
लांगलीमूलगोमूत्रैरर्शोघ्नं हन्ति चित्रकैः ॥६०॥

सिरस के वीज, कूट, मदार का दूध, पीपर, सेंधा, कलिहारी की जड़ और चीता इनको गोमूत्र में पीस कर लेप करने से ववासीर रोग नाश हो जाता है ॥ ६० ॥

भगन्दर पर लेप ।

कासीसं सैन्धवैरण्डं तैलयुक्तं विमर्दितम् ॥
भगन्दरं प्रलेपेन नाशयेन्नात्र संशयः ॥६१॥

कसीस, सेंधा इनको अंडी के तेल में पीस कर मले तो निस्सन्देह भगन्दर रोग नाश हो जाता है ॥ ६१ ॥

कुष्ठरोग पर लेप ।

गृहधूमं पंचलवणं क्षारद्वयचक्रमर्दसलिले च ॥
व्योषविषवह्निबृहतीरात्रिद्वयकुष्टकम्पिल्लैः ॥ ६२ ॥
उग्रशिलासर्षपसूतकसिन्दूरतुत्थकासीसैः ॥
गोमूत्रे संपिष्टे स्नुह्यर्कदुग्धान्वितैर्लेपः ॥ ६३ ॥
कुष्ठमपहन्त्यशेषं समुत्थितं मडलं समुल्लिखति ॥
नाशयति सप्त वारान् चिरमपि संवर्णयेच्चित्रम् ॥ ६४ ॥

घर का धुआँ, पाँचों नमक, दोनों खार अर्थात् सज्जीखार, जवाखार, पवार के वीज इनको जल में पीस कर लेप करे और सोंठ, मिर्च, पीपर, तेलिया मीठा, चीता, कटैया, हलदी, दारुहलदी, कूट, कबीला इन सब औषधियों का

लेप बना कर लगावे ॥ ६२॥ एवं वच, मैनशिल, सरसों, पारा, सेंदुर, नीला थोथा, कसीस इन द्रव्यों को गाय के मूत्र में पीस कर थूहर अथवा मदार के दूध में मिला कर लेप करे॥ ६३॥ तो समस्त कुष्ट रोग और चकत्ता नष्ट हो जाते हैं सात बार लेप करने से बहुत समय का कुष्ठ रोग नाश हो जाता है ॥६४॥

तथाच—

शिलालकोग्ररसताप्यगन्धकं कम्पिल्लतुत्थोषणसर्जिटंकणम्॥
कासीसकुष्टं नवनीतसंयुतं स्रवत्सु कुष्ठेष्वधिकं प्रशस्तम् ॥

मैनशिल, हरताल, वच, पारा, गंधक, कबीला, नीला थोथा, काली मिर्च, सज्जी, सुहागा, कसीस, कूट इन द्रव्यों को पीस कर मक्खन के साथ लेप बनावे यह लेप बहते हुए कुष्ठ रोग में बहुत हितकारी है, अर्थात् बहता हुआ कोढ़ इस लेप से अच्छा हो जाता है ॥ ६५ ॥

श्वेतकुष्ठ पर लेप।

गुंजा वचाग्निकं कुष्टं बाकुची कांजिकान्वितम् ॥
सुपिष्टं चूर्णमेतेषां प्रलेपः श्वेतलक्ष्महृत् ॥६६।

घुंघुची, वच, चीता, कूट, बावची इनको काँजी के साथ पीस कर लेप करे तो सफेद कोढ़ के दाग दूर हो जाते हैं ॥ ६६ ॥

पादस्फुटित पर लेप।

कनकभुजगवल्लीमालतीपत्रदूर्वा
रसगुदकुनटीभिर्मर्दितस्तैललिप्तः ॥
अपनयति रसेन्द्रः कुष्ठकडूविचर्ची
स्फुटितचरणरन्ध्रं श्यामलत्वं त्वचायाः ॥६७॥

धतूरे के बीज, पान, चमेली के पत्ता, दूब, पारा, कूट, मैनशिल, गन्धक इन सबको पीस कर घोटे फिर तेल में मिला कर लेप करे यह रसराज कुष्ठरोग, खुजली, बेवाई, पाँव का फूटना, पाँव में छेद हो जाना और खाल काली हो जाना इन सब रोगों को दूर करता है ॥ ६७ ॥

मस्सा पर लेप।

चूर्णं सर्जिकया घृष्टं मसालेप्यं जलेन वा ॥
चूर्णं नौसादरं चोकं तुत्थकं स्वर्णगैरिकम् ॥ ६८ ॥

चूना और सज्जी को पानी में घिस कर मसा पर लेप करे तो मसा दूर हो जाता है और नौसादर, चोक, नीला थोथा, लाल गेरु इनका चूर्ण पानी में पीस लेप करने से भी मसा दूर हो जाता है ॥ ६८ ॥

चोट पर लेप।

सर्जिका च हरिद्रा च प्रहारे लेपनं हितम् ॥
टंकणं सर्पिषा लेपः कालमेषीजलेन वा ॥ ६९ ॥

सज्जी और हलदी को पीस कर चोट पर लेप करे तो चोट अच्छी हो जाती है, सुहागा को घी में मिला कर लेप करे, अथवा मंजीठ को पानी में घिस कर लेप करने से चोट अच्छी हो जाती है ॥ ६९ ॥

गांठ पर लेप।

मरिचं पुष्करं कुष्टं हरिद्रा सैन्धवं वचा ॥
सर्वग्रन्थौ हितो लेपः खटिकालवणेन च ॥ ७० ॥

काली मिर्च, पुहकरमूल, कूट, हलदी, सेंधा नमक, वच इनको पीस लेप बना कर लेप करने से सब अंगों की गांठ अच्छी हो जाती है यही लेप खरिया और नमक के साथ घिस कर लेप करने से गांठ जाती रहती है ॥ ७० ॥

फोड़ा पर लेप।

कृष्णाजाजी ब्रह्मदण्डी मरिचं रामपिप्पली ॥
स्फोटिकायां हितो लेपः पानं वा तन्दुलाम्भसा ॥ ७१ ॥

जीरा स्याह, ब्रम्हदण्डी, काली मिर्च, सफेद कटैया, पीपर इनका लेप फोड़ा पर लगाने से फोड़ा अच्छा हो जाता है अथवा पूर्वोक्त द्रव्यों को चावलों के पानी के साथ पीने से भी फोड़ा अच्छा हो जाता है ॥ ७१ ॥

वातरक्त पर लेप ।

दूर्वा मूर्वा शटी शुंठी धान्यकं मधुयष्टिका ॥
सुपिष्टं शीततोयेन रक्तवाते प्रलेपनम् ॥ ७२ ॥

दूब, मूर्वा (मुरहरी) कचूर, सोंठ, धनिया, मुलहठी इनको ठंढे पानी में पीस कर लेप करने से रक्तवात अथवा वातरक्त विकार दूर हो जाता है ॥ ७२॥

स्फुटपाद पर लेप ।

ललनास्तनदुग्धेन सिक्तं गुडघृतं मधु ॥
गैरिका स्फुटपादोऽपि जायते पंकजोपमः ॥ ७३ ॥

स्त्री के कुच का दूध, गुड, घी, शहत, गेरु इनका लेप बना कर फटे हुए पांवों पर लेप करने से पांव अच्छे होकर कमल के समान हो जाते हैं ॥ ७३ ॥

योनिसंकोचन लेप ।

कुष्टं च धातुकी जंगी सौराष्ट्री फुल्लकं तथा ॥
माजूफलं हौहबेरं लोध्रं दाडिमत्वक् तथा ॥ ७४ ॥
कादम्बर्या भगे लेपो गाढीकरणमुक्तमम् ॥

कूट और धाय के फूल, हर्र जंगी, फटकरी का फूल, माजूफल, हाउबेर, लोध्र , अनार की बकली ॥ ७४ ॥ इन सबको मदिरा में पीस कर लेप करने से योनि सिकुड कर कड़ी हो जाती है ॥

लिंगवर्धन लेप ।

मरिचं सैन्धवं कृष्णा तगरं बृहतीफलम् ॥ ७५ ॥
अपामार्गस्तिलाः कुष्टं यवा माषाश्च सर्षपाः ॥
अश्वगन्धा च तच्चूर्णं मधुना सह योजयेत् ॥ ७६ ॥
अस्य सन्ततलेपेन मर्दनाच्च प्रजायते ॥
लिङ्गवृद्धिःस्तनोत्सेधः संहतिर्भजकर्णयोः ॥ ७७ ॥

बृहतीफलसिद्धार्थकव्याधिवचातगरतुरगगन्धाभिः ॥
एभिः प्रलेपितं स्यात् पुरुषवराङ्गं हयस्यैव ॥ ७८ ॥

काली मिर्च, सैंधा नमक, पीपर, तगर, कटाई का फल ॥ ७५ ॥ चिर्चिरा, तिल, कूट, जौ, उडद, सरसों, असगन्ध इन औषधियों का चूर्ण शहद में मिलावे ॥ ७६ ॥ और निरन्तर इसके लेप से और इसके मलने से लिंग बढता(१) है और स्तन भी बढते हैं तथा भुजा, कान आदि अंगों पर मलने से अंग सुडौल हो जाते हैं ॥ ७७ ॥ एवं कटैया का फल, सरसों, कूट, वच, तगर, असगन्ध इन द्रव्यों का लेप बनावे इस लेप से पुरुष का लिंग बढ कर घोड़े के लिंगतुल्य हो जाता है ॥ ७८ ॥

इति लेप विधि ।

अथ मल्लम प्रकार ।

अथ व्रणनाशक मल्लम (मलहम)

तप्ते घृते क्षिपेत्तुत्थमुत्तार्य मदनं क्षिपेत् ॥
सर्वस्मिन् गलिते तस्मिन् चूर्णमेषां विनिक्षिपेत् ॥ १ ॥
कुंकुमं मुरदाशंखं सिंदूरं हिंगुलं तथा ॥
क्षिप्त्वा ततो जलं भूरि हस्तेन परिमर्दयेत् ॥ २ ॥
दूरीकृत्य जलं सर्वं सिद्धभाण्डे निधापयेत् ॥
दग्धव्रणे दग्धमेदे चन्द्रिकायां सदा हितम् ॥ ३ ॥

घी को तपा कर उसमें नीला थोथा डाल कर आँच पर से उतार लेवे और मोम डाले जब सब गल जाय तब उसमें इन औषधियों का चूर्ण डाल देवे ॥ १ ॥ केशर, मुर्दाशंख, सेंदुर, शिंगरफ फिर बहुतसा पानी उसमें मिला कर हाथ से मथे ॥ २ ॥ अनन्तर सब पानी निकाल कर फेंक देवे और मलहम को अच्छे पात्र में रख छोड़े, अग्नि से जले हुए फफोलों पर और गरमी के चकत्ता आदि पर यह मलहम लगावे यह मलहम सदैव हित करने वाला है ॥ ३ ॥

---

१ जबतक अंग बढ़ते हैं तब ही तक यह भी बढ़ सकता है अधिक आयु होने पर नहीं बढता है

तथा—

तप्ते घृते क्षिपेत्तुत्थमुत्तार्य च क्षिपेदिमान् ॥
कंपिल्लं मुरदाशृंगं खदिरं रंगपत्रिका ॥
क्षिप्त्वा जलं मथित्वा च तत्सर्वव्रणविरोहणम् ॥ ४ ॥

तपाये हुये घी में नीला थोथा पीस कर डाले और आंच पर से उतार कर यह औषधियां उसमें डाले, कबीला, मुर्दाशंख, खैर, रांगे के पत्र इनको डाल कर पानी मिलावे और मथे फिर पानी को फेंक कर मलहम को अच्छे पात्र में रख छोड़े इस मलहम को लगाने से सब प्रकार के व्रण (फोड़ा अथवा घाव) अच्छे हो जाते हैं ॥ ४ ॥

अथवा—

तप्ते घृते क्षिपेद्रालमुत्तार्य च जलं क्षिपेत् ॥
मथित्वा निर्जलं कृत्वा व्रणादौ तत्प्रयोजयेत् ॥ ५ ॥
मदनं मस्तगी तुत्थं रालसिन्दूरटंकणम् ॥
गुग्गुलुं मुरदाशृंगं वेरजं रंगपत्रिका ॥ ६ ॥
कंपिल्लं कुंकुमं क्वाथं माजूमदनकैफलम् ॥
मरिचं हिंगुलं जंगी एला चेति समाः समाः ॥ ७ ॥
लोहपात्रे घृते तप्ते यथायोग्यामिमां क्षिपेत् ॥
प्रक्षिप्य च जलं पश्चात् मथित्वा जलमुत्सृजेत् ॥ ८ ॥
तत्स्थापयेच्छुभे भाण्डे व्रणादौ विनियोजयेत् ॥
नासूरमण्डलं दुष्टव्रणशोधनरोपणम् ॥ ९ ॥

तपाये हुए घी में राल डाल देवे फिर उतार कर इतना मथे कि उसमें पानी नहीं रहे वह मल्लम फोड़ा फुंसी पर लगाने से घाव अच्छा हो जाता है ॥ ५ ॥ मोम, मस्तगी, नीला थोथा, राल, सेंदुर, सुहागा, गूगल, मुरदाशंख, वेर की मींगी, रांगे के पत्र ॥ ६ ॥ कबीला, केशर, माजूफल, मैनफल का काढ़ा, काली मिर्च, शिंगरफ, हर्रजंगी, इलायची इनको बराबर बराबर लेकर ॥ ७ ॥ लोहे के तसले में घी को तपाय इन औषधियों को यथायोग्य डाले फिर जल मिला कर भली

भांति मथे मथ जाने पर जल को फेंक देवे ॥ ८ ॥ और मल्लम को निर्मल पात्र में रख छोडे उस मल्लम को व्रण आदि पर लगावे, यह मल्लम नासूर, चकत्ता और दुष्ट फोड़े, घाव इन सबको शोधन करने वाला है, इसके लगाने से यह सब अच्छे हो जाते हैं ॥ ९ ॥

तथाच—

विषं तुत्थं तथा गुंजा सिन्दूरं नवसादरम् ॥
नरमूत्रेण संघृष्य कृत्वा रुधिरमोक्षणम् ॥ १० ॥

तथा—

विषं च सूतं नवसादरं च मयूरतुत्थं किल हंसवल्लीम् ॥
शल्ये च नष्टे शतवर्षपक्वे वातारिगद्यं मुनयो वदन्ति ॥

विष (तेलिया मीठा) नीला थोथा, घुंघुची, सेंदुर, नौसादर इन सबको मनुष्य के मूत्र में घिसे और व्रण का रुधिर निकाल कर उस पर लगावे तो घाव अच्छा हो जाता है ॥ १० ॥ तथा विष, पारा, नौसादर, अजमोद, नीला थोथा, हंसपदी इन औषधियों को पीस कर लेप बनावे यह लेप संधियों की पीडा, सौ वर्ष तक के पके हुए फोड़े और घाव पर लगाने से ये सब अच्छे हो जाते हैं ऐसा वातारिगद्य मुनि कहते हैं ॥ ११ ॥

विषनाशक मल्लम।

सिन्दूरं विषपारदं सुगणिका चोकं विषं सर्जिका
क्षारं त्र्यूषणसंचलं सलवणं पद्मार्णवाग्रे निशे ॥
एरण्डं स्वरगन्धकं हिरमजा रक्तावली अग्निका
नेपालं नवसादरं क्षुपरकं भागैः समं पेषयेत् ॥१२॥
गोमूत्रेण गुडेन चार्कपयसा स्नुह्याश्च धूमो गृहात्
एतन्नामरसेन सिंहसहितः सारंगराजो गदः ॥ १३ ॥

सेंदुर, विष, पारा, सुहागा, चूक, निशोथ, सज्जीखार, मिर्च, पीपर, सोंठ, पांचो नमक, कमल के पत्ते, हलदी, दारुहलदी, अंडी, कपूर, गन्धक, हिरमिजी, मजीठ, चीता, वच, नौसादर, फटकरी इन सब औषधियों को बराबर बराबर

लेवे ॥ १२॥ और गाय का मूत्र, गुड, मंदार का दूध, थूहर का दूध, घर का धुआं इनमें मिला कर लेप बनावे इस लेप से सब विष रोग दूर हो जाते हैं यह शारंगराज ने कहा है ॥ १३ ॥

सर्पविषनाशक मल्लम ।

शंभोः कंठनिवासिनं मनशिला नौसादरं नीलकं
साजी चौककपूरसावणरसं धूमं च मात्राद्वयम् ॥
नेपालं विषगन्धकं च लशुनं शिल्या च मूत्रं नरै-
रित्येतद्विषनाशनं हि मुनिभिः कालाहिमुक्ते स्मृतम् ॥१४॥

शिवजी कंठ में निवास करने वाला विष (तेलिया मीठा) मैनशिल, नौसादर, नीला थोथा, सज्जी, चूक, कपूर, सावणरस घर का धुआं दो भाग और जमालगोटा, निशोथ, गन्धक, लहसन इन औषधियों को मनुष्य के मूत्र में पीस कर लगाने और मलने से सांप का विष शान्त हो जाता है, यह मुनियों ने कहा है ॥ १५ ॥

रुधिर स्राव ।

शरत्काले वसन्ते च कुर्याद्रक्तस्रुतिं नरः ॥
तुंबी शृंगी जलौकाभिः शिरामोक्षकैस्तथा ॥ १५ ॥
आषाढ आर्द्रा शरदीह चित्रा वसन्तके मीनगते च भानौ ॥
वमिर्विरेको रुधिरस्रुतिश्च तदा नराणां सुखदा भवन्ति ॥१६॥

शरद्ऋतु और वसन्तऋतु के समय में मनुष्य तुंबी, सिंगी, जोंक, तथा फस्त से रुधिर निकलवावे ॥ ७५ ॥ आषाढ के महीने में आर्द्रा नक्षत्र के सूर्य में, शरद्ऋतु में चित्रा नक्षत्र के सूर्य हों, वसन्त ऋतु में मीन के सूर्य हों तब वमन, विरेचन (जुलाब लेना) रुधिर निकलवाना यह मनुष्यों को सुख देने वाले होते हैं ॥ १६ ॥

दशांगुलं हरेत् शृंगी तुम्बी च द्वादशाङ्गुलम् ।
जलौका हस्तमात्रं तु शिरा सर्वाङ्गशोधिनी ॥१७॥
क्षुरश्चाङ्गुलमात्रन्तु गृह्णाति रुधिरं बलात् ॥

शोफे दाहेऽङ्गपाके च रक्तवर्णेऽसृजः स्रुतिः ॥१८॥
वातरक्ते तथा कुष्ठे सपीडे दुर्जयेऽनिले ॥
पाण्डुरोगे श्लीपदे च विषदुष्टे च शोणिते ॥१९॥
ग्रन्थ्यर्बुदापचीक्षुद्रारोगरक्ताधिमादिषु ॥
विदारीस्तनरोगेषु गात्राणां स्वरगौरवम् ॥२०॥
रक्ताभिष्यन्दरौद्रायां पूतिघ्राणास्यदेहके ॥
यकृत्प्लीहविसर्पेषु विद्रधौ पिटिकोद्गमे ॥२१॥
कर्णौष्ठघ्राणवक्त्राणां पाके दाहे शिरोरुजि ॥
उपदंशे रक्तपित्ते रक्तस्रावः प्रशस्यते ॥२२॥

सिंगी दश अंगुल प्रमाण रुधिर निकालती है और तोंबी बारह अंगुल तक का रुधिर निकालती है, जोंक एक हाथभर तक का और फस्त सब अंग का रुधिर शोधन करती है ॥१७॥ छुरा एक अंगुल मात्र का रुधिर बल से खींचता है अर्थात् नश्तर लगाने पर बलपूर्वक दबाने से एक अंगुल तक का रुधिर निकल जाता है, सूजन हो, जलन हो, अंग पक गया हो, शरीर लाल हो गया हो तो इन रोगों में रुधिर निकलवावे ॥ १८ ॥ तथा वातरक्त हो, कोढ़ हो, दारुण वात पीड़ा हो, पांडुरोग हो, श्लीपद हो, विषरोग हो तो इन रोगों करके दूषित रुधिर को अवश्य निकलवाना चाहिए ॥ १९ ॥ एवं ग्रन्थिरोग हो, अर्बुद हो, अपची, क्षुद्रारोग, रक्तव्रण, स्तनरोग और स्वरभंग ॥ २० ॥ रुधिरविकार, कान के रोग, नासिकारोग, यकृत्, पिलही, विसर्प, विद्रधि, फुंसी, फोड़ा ॥ २१ ॥ कान, होठ, नाक, मुँह इनके पकने में, जलन में, शिर रोग में, उपदंश (गरमी) रक्तपित्त इन सब रोगों में रुधिर निकलवाना अच्छा होता है ॥ २२ ॥

न कुर्वीत शिरामोक्षं कृशस्यातिव्यवायिनः ॥
क्लीबस्य भीरोर्गर्भिण्याः सूतिकापांडुरोगिणाम् ॥२३॥
व्यायाममैथुनक्रोधशीतस्थानप्रवातकान् ॥
एकाशनं दिवानिद्रा क्षाराम्लकटुभोजनम् ॥२४॥
अभिजल्पं जलं भूरि त्यजेदाबलदर्शनात् ॥

जो मनुष्य दुबला हो, बहुत मैथुन करने वाला हो, नपुंसक हो, डर गया

हो, गर्भवती स्त्री, प्रसूता स्त्री और पांडुरोगी इनके रुधिर को नहीं निकालना ॥ २३ ॥ और कसरत करने वाला, मैथुन करने वाला, क्रोधी, शीतवात विकार वाला इनका रुधिर भी नहीं निकालना, जिसका रुधिर निकाला गया हो वह जब तक शरीर में बल नहीं आवे तब तक एक बार भोजन, दिन में सोना, खारा, खट्टा और कडुआ भोजन ॥ २४ ॥ बहुत बोलना, बहुत जल पीना इन सबको त्याग कर देवे अर्थात् दो बार भोजन न करे, रात में सोवे, स्वादु भोजन न करे, कम बोले और कमती जल पीवे ॥

अतिप्रवृत्ते रक्ते च यवगोधूमचूर्णकैः ॥२५॥
सर्पकांचलिकैर्वापि क्षौमवस्त्रस्य भस्मना ॥
मुखे व्रणस्य बद्ध्वा च शीतैश्चोपचरेद्व्रणम् ॥२६॥

जो रुधिर बहुत बहता हो तो जौ और गेहूं का चूर्ण ॥ २५ ॥ साँप की कैंचुली और रेशमी कपड़े की भस्म इन सबको पीस कर जहाँ से रुधिर बहता हो उस घाव में भर देवे और ऊपर से कपड़ा बाँध देवे और शीतल पदार्थ सेवन करे तो रुधिर बहना बन्द हो जाता है ॥ २६ ॥

नस्य (नास लेनेकी) विधि ।

उत्तानशायिनं किंचित्प्रलंबशिरसं नरम् ॥
आशीर्णहस्तपादं च वस्त्राच्छादितलोचनम् ॥२७॥
समुन्नमितनासाग्रं वैद्यो नस्येन योजयेत् ॥
कोष्णमच्छिन्नधारं च हेमताराादिशुक्तिभिः ॥२८॥
नस्येष्वासिच्यमानेषु शिरो नैव प्रकम्पयेत् ॥
न कुप्येत प्रभाषेत नोच्छिकेन्न हसेत्तथा ॥२९॥
उपाविश्याथ निष्ठीवेद्घ्राणं वक्त्रगतं द्रवम् ॥
वामदक्षिणपार्श्वाभ्यां निष्ठीवेत्सम्मुखे न हि ॥३०॥

नास लेने वाला मनुष्य कुछ उताना सोवे, शिर को लंबा कर लेवे, हाथ पाँव फैला देवे, कपड़ा से नेत्र ढांक लेवे ॥ २७ ॥ नासिका के अग्र भाग को ऊँचा करके वैद्य नास देवे जल को गरम करके जल की धारा देवे धारा टूटै नहीं, सोने चाँदी आदि की सीपी में भस्म को रख कर नास देवे ॥ २८ ॥ जिसको नास

लिया जाय यह मनुष्य उस समय शिर न हिलावे, न क्रोध करे, न बात करे, न छींके, न हँसे ॥ २९ ॥ फिर जब उठे तब छींक लेवे और थूके, नाक और मुख से पानी गिरे तो बाईं दाहिनी ओर थूके, सामने नहीं थूके यही नास लेने की विधि है ॥ ३० ॥

नस्य (नास लेने की) औषधि।

नस्यं स्याद्गुडशुंठीभ्यां विकारे वातके हितम् ॥
शर्कराघृतयष्टी च पित्तके नस्यमेव च ॥३१॥
श्लेष्मके सुरसा वासा रसं सुविहितं च तत् ॥
विडंगं हिंगु मगधा कृमिदोषे हितं मतम् ॥३२॥

वात विकार में गुड़ सोंठ की नास हितकारी है, पित्त विकार में मिश्री, घी और मुलहठी की नास हितकारी है ॥ ३१ कफ विकार में तुलसी और अडूसा के रस की नास हितकारी है और कृमि रोग में वायविडंग, हींग और पीपर की नास हितकारी है ॥ ३२ ॥

रक्तजेऽसृग्विरेकन्तु शिरोरोगमुपक्रमः ॥
शर्करा कुंकुमं नस्यं घृतभ्रष्टं शिरोर्तिनुत् ॥३३॥
समुद्रफलनस्येन क्षीकन्यासंभवेन वा ॥
षड्बिन्दुतैलनस्येन यान्ति रोगाः कपालजाः ॥३४॥
सैन्धवं श्वेतमरिचं सर्षपाः कुष्टमेव च ॥
बस्तमूत्रेण पिष्टा च नस्यं तन्द्रानिवारणम् ॥३५॥

रक्तजनित रोग और रक्तदोष से उत्पन्न शिररोग में शक्कर अथवा मिश्री और केशर को घी में भून कर उसका नास लेने से शिर की पीड़ा शान्त हो जाती है ॥ ३३ ॥ समुद्रफल अथवा नकछिकनी एवं षड्बिन्दु तैल के नास से कपाल (खोपड़ी) के सब रोग दूर हो जाते हैं ॥ ३४ ॥ सेंधा नमक, सफेद मिर्च, सरसों, कूट इनको बकरी के मूत्र से पीस कर नास लेवे तो तन्द्रा (अति निद्रा) रोग दूर हो जाता है ॥ ३५ ॥

दूर्वारसो दाडिमपुष्पजो वा घ्राणप्रवृत्तेऽसृजि नस्यमुक्तम् ॥

स्तन्येन वाऽलक्तरसेन वापि विण्मक्षिकाणां विनिहंति हिक्काम्॥३६॥

नस्यं दाडिमपुष्पोत्थं रसो दूर्वाम्भसस्तथा ॥
आम्रास्थिमिलिता दूर्वा नासिकाच्युतरक्तजित् ॥३७॥

दूब का रस, अथवा अनार का रस इनका नास लेने से नकसीर बन्द हो जाती है अर्थात् नाक से खून बहना बन्द हो जाता है और स्त्री का दूध, महावर का रस, मक्खी की बीठ इनके नास से हिचकी बन्द हो जाती है ॥ ३६ ॥ अनार के फूल का रस, तथा दूब का रस, दूब के रस में मिली हुई आम की गुठली इनका नास लेने से नाक से खून बहना बन्द हो जाता है ॥ ३७ ॥

नासिका से जल पान ।

द्विघटिघननिशायां प्रातरुत्थाय नित्यं
पिबति खलु नरो यो घ्राणरन्ध्रेण वारि ॥
स भवति मतिपूर्णश्चक्षुषा तार्क्ष्यतुल्यो
वलिपलितविहीनः सर्वरोगैर्विमुक्तः ॥३८॥

जो मनुष्य दो घड़ी रात रहे तब उठ कर नाक के छेद से जल पीता है वह बुद्धिमान् और गरुड़ जी के समान दिव्य नेत्रों वाला और बुढ़ापा तथा सब रोगों से विमुक्त हो जाता है ॥ ३८ ॥

अपस्मार आदि रोगों में नस्य ।

अपस्मारे तथोन्मादे शिरोरोगे च पीनसे ॥
अचैतन्येऽक्षिनासादिरोगे नस्यं दिवा हितम् ॥३९॥

मृगी, उन्माद, शिर रोग, पीनस, मूर्च्छा, नेत्र रोग, नासिका रोग इनमें दिन के समय नास देना हितकारी जानना ॥ ३९ ॥

नस्य विधि ।

एकान्तरं द्व्यन्तरं वा नस्यं दद्याद्विचक्षणः ॥
त्र्यहं पञ्चाहमथवा सप्ताहं वायुयंत्रितः ॥४०॥

बुद्धिमान् वैद्य एक दिन के अन्तर से अथवा दो दिन के अन्तर से नास देवे अथवा तीन दिन के अन्तर से वा पाँच दिन अथवा सात दिन के अन्तर से वायु के अनुसार युक्ति सहित नास देवे ॥ ४० ॥

इति नस्य विधि।

अथ विरेचन विधि।

प्रावृट्काले वसन्ते च शरत्काले च देहिनाम् ॥
वमनं रेचनं चैव कारयेत्कुशलो भिषक् ॥१॥
त्रिदिनं पाचनं पूर्वं गृहीत्वा घृतभोजनम् ॥
स्नेहनं स्वेदनं कृत्वा दद्यात्सम्यग्विरेचनम् ॥२॥

वर्षाकाल, वसन्त और शरद् ऋतु में चतुर वैद्य मनुष्यों को वमन और विरेचन करावे अर्थात् कै करावे और जुलाब देवे ॥ १॥ जुलाब से पहले तीन दिन मुंजिश देवे और घी सहित मूँग की खिचड़ी आदि हलका भोजन करावे. और तेल की मालिश से पसीना निकाल कर भली भाँति जुलाब (दस्तावर औषधि) देवे ॥ २ ॥

दोषाः कदाचित्कुप्यन्ति जिता लंघनपाचनैः ॥
ये तु संशोधनैः शुद्धास्तेषां न पुनरुद्भवः ॥३॥
पीत्वा विरेचनं शीतं जलैः संसिच्य चक्षुषी ॥
सुगन्धं किंचिदाघ्राय ताम्बूलं शीलयेन्नरः ॥४॥
निवातस्थो निवेगाँश्च धारयेन्न स्वपेत्तथा ॥
शीताम्बु न स्पृशेत्क्वापि कोष्णं नीरं पिबेन्मुहुः ॥५॥

वे दोष कभी कभी कुपित हो जाते हैं जो लंघन और पाचन से जीते गये थे परंतु जो वमन और विरेचन से शुद्ध हो जाते हैं अर्थात् शान्त हो जाते हैं फिर वे कभी प्रगट नहीं होते हैं ॥ ३ ॥ मनुष्य विरेचन (दस्त) लेकर ठंढे पानी से आँखों को धोवे फिर कोई अतर आदि सुगंधित पदार्थ को सूँघे और पान खाय ॥ ४ ॥ वायु रहित स्थान में बैठे, परिश्रम का काम नहीं करे, सोवे नहीं, ठंढे पानी को नहीं छुवे, जो प्यास लगे तो गरम पानी पीवे ॥ ५ ॥

इच्छाभेदी च नाराचश्छुरीकारो रसोऽथवा ॥
पूज्यपादगुटी शीतं रेचत्युदयभास्करः । ६॥
अभयामोदकं पश्चात्करमालादिपंचकम् ॥
दन्तीविशालास्नुक्दुग्धखण्डेन त्रिवृता तथा ॥७॥
दुग्धेनैरंडतैलेन अथ दुग्धेन नागरम् ॥
उष्ट्रीपयोऽथ कम्पिल्लं घोडाचोली गुटी तथा ॥८॥
मात्रोत्कृष्टा विरेकस्य त्रिंशद्वेगैः स्मृताऽथवा ॥
वेगैर्विंशतिभिर्मध्या हीनोक्ता दशवेगकैः ॥९॥

इच्छाभेदी रस, नाराच रस, पूज्यपाद गुटी, उदय भास्कर रस इनको शीतल जल के साथ देने से विरेचन (जुलाव) होता है ॥ ३६ ॥ अभयादि मोदक अमलतास पंचक, जमालगोटा, इन्द्रायन, सेंहुड़ का दूध, मिश्री सहित निशोथ ॥ ७ ॥ दूध, अंडी का तेल अथवा केवल दूध के साथ सोंठ, ऊँटनी का दूध, कबीला तथा घोड़ाचोली गोली इनको विरेचन (जुलाव) में देवे ॥ ८ ॥ तीस दस्त जुलाव से हो तो उत्तम जुलाव और बीस दस्तों से मध्यम जुलाव तथा दश दस्तों से हलका जुलाव हुआ जानना यह श्रेष्ठ वैद्यों का कथन है ॥ ६ ॥

विरेकस्यातियोगेन मूर्च्छाभ्रंशो गुदस्य च ॥
शूलं कफोऽतिच्छर्दिः स्याद्रक्तं वापि विरच्यते ॥ १० ॥
तदा शीताम्बुना हस्तपादौ प्रक्षालयेन्मुहुः ॥
शालिभिः षष्टिकैर्दुग्धैर्मधुरैश्चापि भोजयेत् ॥ ११ ॥
पित्ते विरेचनं युंज्यादामोद्भूते तथा गदे ॥
उदरे च तथाध्माने कोष्ठशुद्धौ विशेषतः ॥ १२ ॥
कुष्ठार्शःकृमिवीसर्पवाताऽसृग्पांडुरोगिणः ॥
कफकासविषार्ताश्च विरेच्याः स्युर्भिषग्वरैः ॥ १३ ॥

विरेचन (जुलाव) के अत्यन्त योग से मूर्च्छा (बेहोशी) भ्रंश (वार वार गिर पड़ना) गुदा में पीड़ा होना, कफ, वमन, गुदा से दस्त में रुधिर आना यह रोग प्रगट हो जाते हैं ॥ १० ॥ इनकी शान्ति के निमित्त ठंढे पानी से हाथ

पाँव धोवे, साठी के चावलों का भात दूध के साथ खाय, मसूर की दाल खाय ॥ ११ ॥ जो पित्त विकार में विरेचन (जुलाव) देवे तो आँव, उदर पीड़ा, अफरा, कोढ़ इनकी विशेष करके शुद्धि करे ॥ १२ ॥ कुष्ठरोग, बवासीर, कृमिरोग, विसर्प, वातरक्त, पांडुरोग, कफ, खाँसी, विष की पीड़ा उत्तम वैद्यों को इतने रोग वालों को विरेचन (जुलाब देना) उचित है ॥ १३ ॥

बालवृद्धावतिस्निग्धः क्षतक्षीणो भयान्वितः ॥
श्रान्तस्तृषार्तः स्थूलश्च गर्भिणी च नवज्वरी ॥ १४ ॥
नवप्रसूता नारी च मन्दाग्निश्च मदात्ययी ॥
शल्यार्दितश्च रूक्षश्च न विरेच्या विजानता ॥ १५ ॥

बालक, वृद्ध, बहुत कोमल, हीनबली, भयातुर, थका हुआ, प्यास से व्याकुल, मोटा शरीर, गर्भिणी स्त्री, नये ज्वर वाला ॥ १४ ॥ नवीन प्रसूता नारी, (जच्चा) मन्दाग्नि वाला, बहुत मदिरा पीने वाला, जिसके हाड़ों में पीड़ा हो, दुबला देह वाला, रूखा भोजन करने वाला इनको ज्ञानी वैद्य जुलाव नहीं देवे ॥१५॥

वमन विधि ।

कासे श्वासे कफव्याप्ते हृद्रोगे विषपीडिते ॥
गलशुण्ड्यां भ्रमे कुष्ठे वमनं कारयेद्भिषक् । १६ ॥

वैद्यजन खाँसी, श्वाँस, कफ रोगी, हृदय रोग, विष से पीड़ित, कंठ में फंदा, भ्रम, कोढ़ इन रोगों में वमन (कै) करावे ॥ १६ ॥

पीत्वा यवागूमाकंठं क्षीरतक्रदधीनि वा ॥
भुक्त्वा च श्लेष्मलं भोज्यं स्निग्धः स्विन्नस्ततो वमेत् ॥ १७ ॥

कंठ तक लपसी, दूध, मठा, दही अथवा कफ कारी चिकने पदार्थ भोजन करके वमन करे ॥ १७ ॥

वमनेषु च सर्वेषु सैन्धवं मधुना हितम् ॥
कृष्णाराठफलं सिन्धु कफे कोष्णजलैः पिबेत् ॥ १८ ॥

शहत के साथ सेंधा नमक सब प्रकार के वमन कराने में हितकारी है, और कफ के विकार में पीपर, मैनफल, सेंधा नमक गरम जल के साथ पीवे ॥ १८ ॥

पटोलवासानिम्बैश्च पित्ते शीतजलं पिबेत् ॥
सश्लेष्मवातपीडायां सक्षीरं मदनं पिबेत् ॥ १९ ॥
अजीर्णे कोष्णपानीयं सिन्धुं पीत्वा वमेत्सुधीः ॥
कंठमेरण्डनालेन स्पृशन्तं वमयेद्भिषक् ॥ २० ॥
पिप्पलीन्द्रयवासिन्धुस्तथा मदनकं फलम् ॥
कवोष्णमधुना लाढं वमयेत्कफरोगिणम् ॥ २१ ॥

परवर के पत्ता, अडूसा, नीम के पत्ता इन द्रव्यों को शीतल जल के साथ पित्त विकार में पीवे और कफ वात पीड़ा में मैनफल को दूध के साथ पीवे ॥१९॥ अजीर्ण में सेंधा नमक को गरम जल के साथ पीस कर बुद्धिमान् जन वमन अंडा की पतली लकड़ी को कंठ में डाल कर वैद्य वमन करावे ॥ २० ॥ तथा पीपर, इन्द्र जौ, सेंधा, मैनफल कफ रोग वाला इन औषधियों को शहत के साथ चाट कर गरम जल पीवे तो वमन होता है ॥ २१ ॥

अम्लतक्रं सलवणं तथा मदनकं फलम् ॥
तुत्थं कार्पासमज्जा वा श्वानविड् विषवामने ॥ २२ ॥
अतिमात्रे भवेद्धिक्का कंठपीडा विसंज्ञिता ॥
शाम्यत्यनेन तृष्णायाः पीडाश्छर्दिसमुद्भवाः ॥ २३ ॥
धात्र्यंजनाश्सोशोरलाजाचन्दनवारिभिः ॥
मन्थं कृत्वा पाययेच्च सघृतं क्षौद्रशर्करम् ॥ २४ ॥

खट्टा मठा, सेंधा नमक, मैनफल, नीला थोथा, विनौर अथवा कुत्ता की बीठ यह विष खाने वाले को वमन कराने में हितकारी है ॥ २२ ॥ बहुत वमन कराने से हिचकी, कंठ पीड़ा और बेहोशी ये रोग हो जाते हैं अथवा इससे कंठ पीड़ा छर्दि रोग उत्पन्न हो जाय तो उसकी शांति के निमित्त ॥ २३ ॥ आँवला, निशोथ, खस, लाई इनको चन्दन के जल के साथ मथ कर पिलावे और घी शहत मिश्री देवे ॥ २४ ॥

स्वेद (पसीना) निकालना।

स्वेदश्चतुर्विधः प्रोक्तस्तापोष्मौ स्वेदसंज्ञितौ ॥
उपनाहो द्रवः स्वेदः सर्वे वातार्तिहारिणः ॥ २५ ॥
तेषु तापाभिधः स्वेदो वालुकावस्त्रपाणिभिः ॥
कपालं कंटकांगारैर्यथायोग्यं प्रयुज्यते ॥ २६ ॥

पसीना चार प्रकार का कहा है, ताप, ऊष्मा, उपनाह, द्रव ये सब वात विकार से उत्पन्न पीड़ा को दूर करने वाले हैं ॥ १ ॥ इनमें ताप स्वेद यह है कि कपड़े में वालू बाँध कर पोटली बनावे उसे गरम करके सेंके अथवा कपड़े में अंगार धर कर उनसे यथा उचित सहता सहता सेंके ॥ २ ॥

ऊष्मा स्वेदः प्रयोक्तव्यो लोहपिंडेष्टिकादिभिः ॥
प्रतप्तैरम्लसिक्तैश्च कार्यो नक्तकवेष्टितः ॥२७॥
खर्परभृष्टं पटस्थितं कांजिकसिक्तो हि वालुकास्वेदः ॥
शमयति वातकफामयमस्तकशूलाङ्गभङ्गादीन् ॥२८॥

ऊष्मा स्वेद यह है कि लोहे का गोला अथवा ईंटा को गरम कर मठा में बुझाय वस्त्र लपेट कर सेंके ॥ २७ ॥ खपरे पर भूनी हुई वालू को कपड़े में बाँध कर गरम करे फिर उसे काँजी में बुझावे तब सेंके तो यह स्वेद वात कफ विकार, मस्तक पीड़ा और अंगभंग आदि रोगों को दूर कर देता है ॥ २८ ॥

फलस्वेदं घटीस्वेदं वालुकास्वेदमेव च ॥
कारयेद्धस्तपादेषु तथा शिरसि युक्तितः ॥२९॥
अग्नितप्तेष्टिकास्तिक्ता कांजिकेन पुनः पुनः ॥
सवस्त्रजा तया स्वेदो रुजं जयति वातजाम् ॥३०॥

ईंट, पत्थर, खपड़ा, वालू इनसे हाँथ पाँव और शिर में युक्ति से स्वेद करावे अर्थात् पसीना निकलवावे ॥ २९ ॥ एवं ईंट वा वालू तपाय काँजी में बुझा कर वस्त्र में बाँध बारंबार सेंके इससे उत्पन्न स्वेद वातविकार से उत्पन्न हुए सब रोगों को दूर कर देता है ॥ ३० ॥

पुरुषायाममात्रं वा भूमिमुत्कीर्य खादिरैः ॥
काष्ठैर्दग्ध्वा तथाभ्युक्ष्य क्षारधान्याम्लवारिभिः ॥३१॥
वातघ्नपत्रैराच्छाद्य शयानं स्वेदयेन्नरः ॥
एवं जलादिभिः खिन्ने शयानं स्वेदमाचरेत् ॥३२॥

भूमि में मनुष्य के बराबर लंबा गढ़ा खोद कर उसमें खर की लकड़ी जलावे अनन्तर दूध, काँजी अथवा धानों के पानी के संग अंगारों को बुझावे ॥ ३१ ॥ और उसका सेंक लेकर अंडे के पत्तों को नीचे ऊपर लगाय पसीना निकलवावे इस प्रकार पानी आदि के ताप से पसीना निकलवा कर शयन करावे अथवा ऐसे पसीना निकाल कर रोगी मनुष्य सोवे ॥ ३२ ॥

कटाहे कोष्ठके वापि सूपविष्टो विगाहयेत् ॥
नाभेः षडङ्गुले यावन्मग्नः क्वाथस्य धारया ॥ ३३ ॥
कोष्ठयोः स्कन्धयोः सिक्तस्तिष्ठेत्स्निग्धतनुर्नरः ॥
एवं तैलेन दुग्धेन सर्पिषा स्वेदयेन्नरम् ॥ ३४ ॥

कड़ाहा अथवा किसी बड़े पात्र में मनुष्य को बिठा कर पसीना निकलवावे तोंदी के छ अंगुल नीचे जब तक काढ़ा की धारा रहे तब तक पसीना निकलवावे और उस काढ़ा की धारा से ॥ ३३ ॥ कोठा और दोनों कंधों को सेंके ऐसे ही उसमें रहे, इसी प्रकार तेल दूध और घी से मनुष्य को स्वेदन कर्म से युक्त करे ॥ ३४ ॥

बंधेरखा (बंधन)

तप्तभस्म नृमूत्रेणात्युष्णा गर्दभविद् तथा ॥
उष्णं सर्षपपिण्याकं तैलं कोष्णं च गाढमृत् ॥३५॥
स्निग्धोष्णान्यर्कपत्राणि मधुकं वटपत्रकैः ॥
स्वेदयित्वा च बध्नीयादुदराध्मानशान्तये ॥ ३६ ॥

मनुष्य के मूत्र में गरम राख मिला कर बाँधे तथा गदहा की लीद बहुत गरम करके बाँधे, अथवा सरसों की खली गरम करके बाँधे अथवा तेल निकालने के कोल्हू के नीचे जहाँ बैल चलता है वहाँ की भूमि की मिट्टी गरम करके बाँधे

॥ ३५ ॥ अथवा मदार के चिकने पत्ता गरम करके वा महुआ अथवा वर्गद के पत्ता गरम करके बाँधे पसीना निकलवावे उपरान्त इस प्रकार बाँधे तो पेट का अफरा रोग शान्त हो जाता है ॥ ३६ ॥

वाष्प (वफ़ारा)

अपामार्ग च निर्गुण्डी मुंडी पत्रजनागरम् ॥
ग्रन्थिकं निम्बपत्राणि जलेनोत्कालयेद्दृढम् ॥ ३७ ॥
तद्भाण्डं निश्चलं धृत्वा वस्त्रेणाच्छादयेद्वपुः ॥
गृह्णाति नम्रस्तद्वाष्पं शिरःपीडां निवारयेत् ॥ ३८ ॥

लट जीरा, सँभालू, गोरखमुंडी, पत्रज, सोंठ, पिपलामूल, नीम के पत्ता इन औषधियों को जल में उबाले ॥ ३७ ॥ अनंतर उस पात्र को वहीं निश्चल रख कर और अपनी देह को कपड़े से ढक कर उसकी भाप से मस्तक को सेंके इस प्रकार वफारा लेने से शिर की पीड़ा शान्त हो जाती है ॥ ३८ ॥

उद्धूलन (उबटन)

पिप्पली कट्फलं शृंगी वचा कुष्ठं यवानिका ॥
पुष्करं नागरं तिक्ता ग्रन्थिकं सुरदारु च ॥ ३९ ॥
मुद्गपिष्टं माषपिष्टं पुराणा वसुवेष्टिका ॥
तुम्ब्याश्चूर्णं वत्सनागं शिरीषस्यापि भस्म च ॥ ४० ॥

पीपर, कायफल, ककड़ासिंगी, वच, कूट, अजवायन, पुहकरमूल, सोंठ, कुटकी, पिपलामूल, देवदारु ॥ ३९ ॥ मूँग का आटा, उड़द का आटा, पुरानी भूमि का चूना, तोंबी का चूरन, वच्छनाग, सिरस की राख ॥ ४० ॥

त्रिचतुर्वा दृढे वस्त्रे गालनीयं पुनः पुनः ॥
तच्चूर्णं मर्दयेद्गात्रे शीतांगत्वं निवर्तयेत् ॥ ४१ ॥
कृष्णा सुपर्वविपटी सह नागरेण
तिक्ता च दीपकयुता अनुलेपनं स्यात् ॥

चूर्णं प्रशस्तमितिजारयते शरीरे
स्वेदं च शीतलतनुत्वमिदं निहन्ति ॥ ४२ ॥

इन सब औषधियों को कूट पीस कर तीन वार अथवा चार गाढ़े वस्त्र में रख कर वार वार छाने उस चूर्ण को देह में मल कर लगाने अर्थात् मालिश करने से शीतांग सन्निपात दूर हो जाता है ॥ ४१ ॥ तथा पीपर, देवदारु, सोंठ, कुटकी, अजमोद इन सबको कूट पीस छान कर शरीर में मालिश करे तो यह चूर्ण देह में गरमी लाता है पसीना निकालता है और देह की शीतलता को दूर करता है ॥ ४२ ॥

एकं बृहत्याः फलपिप्पलीकं शुंठीयुतं चूर्णमिति प्रशस्तम् ॥
प्रध्मापयेद् घ्राणपुटेऽतिसंज्ञां करोति चेष्टां विनिहन्ति मूर्च्छाम् ४३
एलीयकं वचा तिक्ता मुस्ता कट्फलजो रसः ॥
उद्धूलयेत्त्रिदोषोत्थे स्वेदाभिष्यन्दजे ज्वरे ॥ ४४ ॥

कटाई का एक फल, पीपर, सोंठ इनको कूट पीस चूर्ण करे उस चूर्ण को कागज की फूंकनी में भर कर नाक में सूँघने से यह चूर्ण चैतन्यता लाता है और चेष्टा को सुधारता एवं मूर्च्छा (बेहोशी) को दूर करता है ॥ ४३ ॥ तथा एलुआ, वच, कुटकी, नागरमोथा, कायफल इन औषधियों के रस का उबटन सन्निपात ज्वर वाले को और स्वेदाभिष्यन्द जनित ज्वर वाले को हितकारी है ॥४४॥

शिरोपरि टोपबंधन ।

कालोञ्जी पुष्करं कुष्ठमजगन्धा वचा विषम् ॥
यवानी खुरसाणन्तु सर्वं सूक्ष्मं प्रपेषयेत् ॥ ४५ ॥
गोधूमचूर्णरचिते रोटके निहिते तथा ॥
प्रतप्तं मस्तके बद्धं सन्निपाताङ्गशीतहृत् ॥ ४६ ॥

कलौंजी, पुहकरमूल, कूट, असगन्ध, वच, एलुआ, खुरासानी अजवायन इन सब औषधियों को महीन पीसे ॥ ४५ ॥ फिर गेहूं के आटा की रोटी बना कर उसमें उस चूर्ण को रख कर गरम करे और मस्तक पर बाँधे तो शीतांग सन्निपात दूर हो जाता है ॥ ४६ ॥

नेत्ररोग पर पिंडी।

पिंडिका कवलीं प्रोक्ता बद्धा वस्त्रस्य पट्टकैः ॥
नेत्राभिष्यन्दयोग्या सा व्रणेष्वपि निबद्ध्यते ॥ ४७ ॥
एरंडमूलपत्रत्वङ्निर्मिता वातनाशिनी ॥
पित्ताभिष्यन्दनाशाय धात्री पिंडी सुखावहा ॥ ४८ ॥

पिंडिका को कवली भी कहते हैं वह कपड़े की पट्टी से बाँधी जाती है, और वह नेत्राभिष्यन्द के योग्य होती है तथा व्रण (फोड़ा व घाव) पर भी बाँधी जाती है ॥ ४७ ॥ तथा अंडा की जड़, तेजपात, तज इनकी बनी हुई पिंडी पित्तविकार को नाश कर इस रोग को सुख देने वाली होती है ॥ ४८ ॥

पिंडी निम्बदलोद्भूता वातपित्तप्रणाशिनी ॥
त्रिफला पिंडिका प्रोक्ता नाशिनी श्लेष्मपित्तयोः ॥४९
शुंठी निम्बदलैः पिंडी सुखोष्णा स्वल्पसैन्धवा ॥
धार्या चक्षुषि संयोगाच्छोथकंडूव्यथापहा ॥ ५० ॥

नीम के पत्तों की पिंडी वातपित्तविकार को नाश करने वाली होती है त्रिफला की पिंडी कफपित्तविकार को नाश करने वाली होती है ॥ ४९ ॥ सोंठ, नीम के पत्ता और सेंधा नमक की पिंडी कुछ गरम करके बाँधे तो नेत्रों की सूजन, खुजली और पीड़ा दूर हो जाती है ॥ ५० ॥

कुल्ली—

दाहतृष्णाप्रशमनं मधुगंडूषधारणम् ॥
विषे क्षाराग्निदग्धे च सर्पिर्धार्यं पयोऽथवा ॥ ५१ ॥
तैलसैन्धवगंडूषो दन्तचाले प्रशस्यते ॥
शोफे मुखस्य वैरस्यं गंडूषात्कांजिकं जयेत् ॥ ५२ ॥

शहत के कुल्ला जलन और प्यास को शांत करने वाले होते हैं विष क्षार व अग्नि से दग्ध होने पर मुख में घी अथवा दूध रखे तो मुख अच्छा हो जाता है ॥ ५१ ॥ तेल में सेंधानमक मिलाय कुल्ली करने से दांतों का हिलना बंद हो जाता है कांजी से कुल्ली करने पर सूजन और मुख की विरसता दूर हो जाती है ॥ ५२ ॥

तथा सहचरीकाथगंडूषो मुखपाकहृत् ॥
जातीफलामृता द्राक्षा पाठा दार्वी फलत्रिकम् ॥
पद्मकं समधुकाथगंडूषो मुखपाकहृत् ॥ ५३ ॥

तथा सुनहरी पियावांसा के काढा के कुल्ला मुंह के छालों को दूर करते हैं और जायफल, गुर्च, मुनक्का, पाढ, दारूहलदी, त्रिफला, पद्माख इन औषधियों का काढा बनाय उसमें शहत मिला कर कुल्ला करे तो मुँह के छाला दूर हो जाते हैं ॥ ५३ ॥

अपराजिता धूप ।

कार्पासास्थिमयूरपिच्छबृहतीनिर्माल्यपिंडीतकं
त्वग्वंशा वृषदंशविद् तुषवचा केशाहिनिर्मोचकैः ॥
नागेन्द्रद्विजशृंगहिंगुमरिचैस्तुल्यस्तु धूपः कृतः
स्वेदोन्मादपिशाचराक्षससुरावेशज्वरघ्नः परः ॥५४॥
गृहेषु धूपनं दत्तं सर्वबालग्रहान् जयेत् ॥
पिशाचान् राक्षसान् क्षिप्त्वा सर्वज्वरं हरं भवेत् ॥५५॥
नृपशशिरविवर्ण विश्वकन्दर्पिणी च
मलयजगिरिलोहं विग्रहं बिल्वकं च ॥
नखजलघनकेशास्तत्प्रमाणं च पूर्वं
कमलजकृतधूपः सर्वभूतान्निहन्ति ॥ ५६ ॥

बिनौर, मोरपंख, कठाई, शिवजी का निर्माल्य, तगर, तज, वंशलोचन, बिलाव की बीठ, धान की भुसी, वच, मनुष्य के बाल, काले नाग की कैंचुली, हाथी के दांत, गाय का सींग, हींग, लाल मिर्च, इन सबको समान भाग लेकर धूप बनावे यह धूप पसीना, उन्माद, पिशाच, राक्षस और किसी देवता का आवेश और ज्वर इन सबको दूर करता है ॥ ५४ ॥ इनकी धूप घर में देने से सब बाल ग्रह शांत हो जाता है और पिशाच राक्षस इनको निकाल कर सब ज्वरों को यह धूप शान्त कर देती है ॥ ५५ ॥ तथा कपूर सोलह भाग, केशर बारह भाग, कस्तूरी, चन्दन सात भाग, शिलाजीत, अगरू, वेल की गिरी, नख,

नेत्रवाला, मोथा, केश ये सब एक भाग लेकर धूप बनावे यह ब्रह्मा जी की बनाई हुई अपराजिता धूप सब प्रकार के भूतों की बाधा को शान्त कर देती है ॥ ५६ ॥

तक्र (मठा) सेवन ।

यथा सुराणाममृतं प्रधानं तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः ॥
न तक्रदग्धाः प्रभवन्ति रोगा न तक्रसेवी व्यथते कदाचित्॥

जिस प्रकार देवताओं को अमृत मुख्य है इसी प्रकार भूमि पर मनुष्यों को मठा मुख्य वस्तु कहा है मठा पीने से जो रोग नष्ट हो जाते हैं वे फिर कभी नहीं होते हैं मठा पीने वाला कभी व्यथित नहीं होता अर्थात् जो नित्य मठा सेवन करता है वह कभी क्लेश नहीं पाता है ॥ ५७ ॥

शशिकुन्दहिमोज्ज्वलशंखनिभं परिपक्वकपित्थसुगंधिरसम् ॥
युवतीकरनिर्मलनिर्मथितं पिब मानवसर्वरुजापहरम् ॥ ५८॥
शीतकालेऽग्निमान्द्ये च कफोच्छेदे तथामये ॥
बद्धकोष्ठे च दुष्टेऽग्नौ अर्शोगुल्मेऽथवामये ॥ ५६ ॥
शस्तं भुक्ते च तक्रं स्यादमीषां सर्वदा हितम् ॥
सर्वकाले प्रशस्तं तु अजाजीलवणान्वितम् ॥ ६० ॥

चन्द्रमा, कुन्द पुष्प, वर्फ, शंख इनके तुल्य उज्ज्वल स्त्री के हाथ से मथा हुआ मठा लेकर पके कैथ के सुगन्धि रस को मिला कर हे मनुष्य ! तू पान कर ले क्योंकि मठा सब रोगों को दूर करता है ॥ ५८ ॥ सर्दी के समय में और मंदाग्नि रोग में तथा कफ जनित विकार में, बद्धकोष्ठ (कोठा के बँध जाने) में, जठराग्नि के विगड़ जाने में बवासीर अथवा गुल्म रोग में ॥ ५६ ॥ इन सब रोगों में मठा का पीना सदैव हितकारी है, जीरा और नमक मिला कर मठा का पीना सब समय में श्रेष्ठ है ॥ ६० ॥

इति तक्रगुणान् ज्ञात्वा न दद्याद्यस्य तं शृणु ॥
क्षये शोषे तथा क्षीणे नोष्णकाले शरत्सु च ॥ ६१ ॥
न मूर्च्छाभ्रमतृष्णासु तथा पैत्तिकरोगके ॥
न शस्तं तक्रपानं च करोति विषमान् गदान् ॥६२॥

इस प्रकार मठा के गुण समझ कर रोगी को देवे और जिसको मठा नहीं देना चाहिए उसको सुनो क्षय रोग में, सूजन , क्षीणता में, प्यास में, गरमी के समय में, सरदी के समय में ॥ ६१ ॥ मूर्च्छा रोग में, भ्रम में, प्यास में, तथा पित्त विकार में मठा पीना अच्छा नहीं पीने से वह मठा विषम रोगों को प्रगट कर देता है ॥ ६२ ॥

ग्रहणीरोगिणां तक्रं संग्राहि लघु दीपनम् ॥
सेवनीयं सदा गव्यं त्रिदोषशमनं हितम् ॥ ६३ ॥
शनैः शनैर्हरेदन्नं तक्रं तु परिवर्धयेत् ॥
तक्रमेव यथाहारो भवेदन्नविवर्जितः ॥ ६४ ॥
श्रमो न कुर्याद्बहुशो न कुर्याद्बहु भाषणम् ॥
न कुर्यान्मैथुनं तक्रपाने क्रोधं विवर्जयेत् ॥ ६५ ॥
एवं यः सेवते तक्रं ग्रहणी तस्य नश्यति ॥
शीघ्रमेव न सन्देहः श्रीर्यथा द्यूतकारिणः ॥ ६६ ॥

जिसको संग्रहणी रोग हो उसे मठा संग्राहि, हलका और जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला है गाय का मठा सदैव सेवन करे क्योंकि वह तीनों दोषों को दूर करने वाला और हितकारी होता है ॥ ६३ ॥ अन्न को धीरे धीरे छोड़ कर मठा को बढ़ाना चाहिए अन्न को छोड़ कर मठा का ही आहार करे ॥ ६४ ॥ मठा के सेवन में बहुत मिहनत नहीं करे और न बहुत बात करे, स्त्री प्रसंग नहीं करे और क्रोध भी नहीं करे ॥ ६५ ॥ इस रीति से जो मठा सेवन करता है उसका संग्रहणी रोग शीघ्र ही नाश हो जाता है इसमें कुछ संशय नहीं जैसे जुआँ खेलने वाले की संपदा शीघ्र नाश हो जाती है वैसे ही संग्रहणी रोग शीघ्र दूर हो जाता है ॥ ६६ ॥

औंधा ।

षोडशपलमयः कीलं लवणं च पलद्वयम् ॥
त्रिकटु त्रिफला भृंगा त्वक्लवंगं च पत्रिका ॥ ६७ ॥
प्रत्येकमर्द्धपलिकान् क्षिपेत्तक्रं पलत्रयम् ॥
उष्णं जलं शतपलं क्षिप्त्वा भूमौ निधापयेत् ॥ ६८ ॥

दिनानि सप्तदश वा स्थितं निष्कासयेत्ततः ॥
पलार्द्धन्तु पिबेन्नित्यं श्वासपांडुक्षयं जयेत् ॥ ६९ ॥

सोलह पल (सेर भर) लोह कील, दो पल नमक और तीन पल सोंठ, मिर्च, पीपर तथा भांग, तज, लौंग, तमालपत्र ॥ ६७ ॥ यह आधा आधा पल (दो दो तोला) लेकर तीन पल मठा इनमें डाले फिर सौ पल (सवा छ सेर) गरम पानी डाल मिट्टी के पात्र (घड़ा) में भर कर भूमि में गाड़ देवे ॥ ६८ ॥ सात दिन अथवा दश दिन उपरान्त निकाल लेवे फिर उसमें से आधा पल (दो तोला) प्रतिदिन पीवे यह औंधा श्वास (दमा) पांडु (पीलिया) और क्षय रोग को जीत लेता है, अर्थात् इसके पीने से इतने रोग नाश हो जाते हैं ॥ ६९ ॥

हिम (गुर्च आदि का अठपहरी शीतल जल)

अमृताया हिमः पेयो वासायाश्च हिमस्तथा ॥
प्रातः सशर्करः पेयो हितो धान्याकसम्भवः ॥ ७० ॥
अन्तर्दाहं तथा तृष्णां जयेत्स्रोतोविशोधनः ॥
धान्याकं धातृवासानां द्राक्षापर्पटयोर्हिमः ॥ ७१ ॥
रक्तपित्तं ज्वरं दाहं तृष्णां शोषं निवारयेत् ॥ ७२ ॥

जो औषधि सवेरे भिगोई जाय और आठ पहर भीग कर प्रातःकाल छान कर पी जावे उसे हिम कहते हैं। अमृता (गुर्च) का हिम और वासा (अडूसा) का हिम, धनिया का हिम प्रातः समय शक्कर अथवा मिश्री डाल कर पीवे ॥ ७० ॥ इसके पीने से अन्तर्दाह (भीतरी जलन) तथा प्यास का नाश हो जाता है यह हिम स्रोत (वीर्य) को शुद्ध करता है, एवं धनिया, आँवला, अडूसा, मुनका, पित्तपापड़ा इनका हिम ॥ ७१ ॥ रक्तपित्त, ज्वर, जलन, प्यास और सूजन को निवारण करता है ॥ ७२ ॥

पलार्द्धमजमोदाया अष्टयामोषितं जलं ॥
वर्तयित्वा पिबेत्प्रातर्हन्ति दाहं सवातकम् ॥ ७३ ॥
पीतो मरिचचूर्णेन तुलसीपत्रजो रसः ॥
द्रोणपुष्पीरसो वापि निहंति विषमज्वरान् ॥ ७४ ॥

आधा पल (२ तोला) अजमोदा को पानी में आठ पहर भिगो कर प्रातःकाल छान कर पीने से वातयुक्त दाह का नाश होता है ॥ ७३ ॥ एवं काली मिर्च का चूर्ण द्रोणपुष्पी के रस के साथ पीने से विषमज्वर आदि ज्वरों का नाश होता है ॥ ७४ ॥

त्रिफलाया रसः क्षौद्रयुक्तो दार्वीरसोऽथवा ॥
निंबस्य वा गुडूच्या वा पीतो जयति कामलाम् ॥७५॥
अमृतायाः रसः क्षौद्रयुक्तः सर्वप्रमेहजित् ॥
वासकस्वरसः पेयो मधुना रक्तपित्तजित् ॥ ७६ ॥

आँवला, हर्र, बहेड़ा अथवा दारुहल्दी का रस शहत मिला कर पीवे, अथवा नीम वा गुर्च का रस शहत मिलाय पीवे तो कामला रोग दूर हो जाता है ॥ ७५ ॥ गुर्च का रस शहत डाल कर पीने से प्रमेहरोग जाता रहता है, अडूसा का रस शहत मिला कर पीने से रक्तपित्त रोग दूर हो जाता है ॥ ७६ ॥

मधुरा ज्वर लक्षण ।

ज्वरो दाहो भ्रमो मोहो ह्यतिसारो वमिस्तृषा ॥
अनिद्रा च मुखं रक्तं तालु जिह्वा च शुष्यति ॥ ७७
ग्रीवामध्ये च दृश्यन्ते स्फोटका सर्षपोपमाः ॥
एतच्चिह्नं भवेद्यस्य स मधूरक उच्यते ॥ ७८ ॥

ज्वर, जलन, भ्रम, मूर्च्छा, दस्त, वमन, प्यास, नींद नहीं आना, मुख लाल हो जाना, तालु और जीभ सूखना ॥ ७७ ॥ गर्दन पर सरसों के समान फुंसी देख पड़े ये चिह्न जिसके हों तो उसे मधुरा ज्वर कहना चाहिए ॥ ७८ ॥

मधुरा ज्वर शांतियत्न ।

सहस्रवेधि पाषाणं कपालं कच्छपस्य च ॥
वृद्धैला तुलसीपत्रं नालिकेरास्थिनूतनम् ॥ ७९ ॥
दाणा खसखसाख्यश्च गोमयस्य रसेन च ॥
घृष्ट्वा पानाय दातव्यं मधूरकप्रशान्तये ॥ ८० ॥

हींग, शिलाजीत, कछुआ की खोपड़ी, लाल इन्द्रायणी, तुलसीदल, नय नारियल का अस्थि॥ ७६ ॥ खस खस के दाना इन सबको लेकर गोबर के रस में घिसे और मधुरा ज्वर वाले को देवे तो ज्वर शान्त हो जाता है अर्थात् मधुरा ज्वर की शांति के निमित्त यह हितकारी है ॥ ८० ॥

मधुरा ज्वर मंत्र ।

ॐ नमो अंजनी पूत ब्रह्मचारी वाच अविचल स्वामिन उकाज सारी वाचांत्वः मगधदेशराय वडस्थां नकिति हां मुसली कन्दा ब्रह्मणतिणो मधुरो कियो ॥ ८१ ॥

अंजनीपुत्र महावीर जी की पूजा करके पूजा का फूल मस्तक पर धर कर माला १०८ संख्यक मंत्र जपे सात दिन में मंत्र सिद्ध हो जाता है, मधुर आहार करे, जितेन्द्रिय रहे, गूगल और अगर की धूप श्री हनुमान जी को देवे, लाल फूल चढ़ावे, चने की दाल का भोग लगावे, रोगी को हनुमान जी का प्रसाद खिलावे, तो मधुरा ज्वर शान्त हो जाता है ॥ ८१ ॥

मधुपिप्पली योग ॥

मधुना पिप्पलीचूर्णं लिहेत्कासज्वरापहम् ॥
हिक्काकासहरं कण्ठ्यं प्लीहघ्नं वातनाशनम् ॥ ८२ ॥
कासे श्वासे तथा शोषे मन्दाग्नौ विषमज्वरे ॥
प्रमेहे मूत्रकृच्छ्रे च सेव्या तु मधुपिप्पली ॥ ८३ ॥

शहत मिला कर पीपर का चूर्ण चाटने से खांसी और ज्वर का नाश हो जाता है, हिचकी और श्वास को यह चटनी दूर कर देती है, तिल्ली और वात-विकार का नाश हो जाता है ॥ ८२ ॥ खाँसी, श्वास तथा सूजन, मन्दाग्नि, विषम ज्वर, प्रमेह, सुज़ाक इन रोगों में शहत और पीपर का चूर्ण सेवन करना चाहिये ॥ ८३ ॥

वर्धमान पिप्पली ॥

त्रिवृद्ध्या पंचवृद्ध्या वा सप्तवृद्ध्याऽथवा कणाः ॥
पिबेत्पिष्ट्वा दशदिनं तांस्तथैव प्रकर्षयेत ॥ ८४ ॥

एकविंशद्दिनैः सिद्धं पिप्पलीवर्द्धमानकम् ॥
अनेन पांडुवातासृक्कासश्वासाऽरुचिज्वराः ॥ ८५ ॥

तीन पीपर, वा पाँच पीपर अथवा सात पीपर प्रतिदिन बढ़ावे इस प्रकार क्रम से दश दिन तक बढ़ावे फिर उसी क्रम से प्रतिदिन उतनी ही पीपर घटावे ॥ ८४ ॥ ऐसे इक्कीस दिन यह वर्द्धमान पीपर पीवे इसके पीनेसे पाँडु, वातरक्त, खांसी, श्वास, अरुचि और ज्वर ये सब रोग दूर हो जातेहैं ॥८५॥

द्राखहरीतकी योग ॥

अपहरति रक्तपित्तं कंडूगुल्मं च पैत्तिकं हन्ति ॥
जीर्णज्वरं प्रशमयति मृद्वीकासंयुता पथ्या ॥ ८६ ॥
द्राक्षानि योज्या द्विगुणा शिवायास्तत्कुट्टयित्वा गुटिका विधेया ॥
ग्राह्या द्विकर्षप्रमिता प्रभाते मलग्रहेऽरोचकबद्धकोष्टे ॥ ८७ ॥

दाख सहित हर्र का योग सेवन करने से रक्तपित्त को हरता है, खुजली, वायगोला और पित्तजनित रोग को दूर करता है और जीर्णज्वर को शान्त करता है ॥ ८६ ॥ ॥ दाख दो भाग हर्र एक भाग अर्थात् हर्र से दूनी किसमिस लेकर दोनों को कूट कर गोलियां बना लेवे प्रातःकाल दो कर्ष (दो तोला) सेवन करे तो मलबंध, अरुचि और बद्धकोष्ठ रोग शान्त हो जाता है ॥ ८७ ॥

हरीतकी योग ॥

ग्रीष्मे तुल्यगुडां च सैन्धवयुता मेघागमाडम्बरे
साद्धं शर्करया शरद्यमलया शुंठ्या तुषारागमे ॥
पिप्पल्या शिशिरे वसन्तसमये क्षौद्रेण संयोजिताम्
राजन् भक्ष हरीतकीमिव गदा नश्यन्तु ते शत्रवः ॥८८॥

हे राजन् ! तुम हर्र खाओ जो इस प्रकार की ग्रीष्म ऋतु में बराबर गुड़ के साथ, वर्षा काल में सैंधानमक के साथ, शरद ऋतु में शक्कर और आंवलों के साथ, हेमंत ऋतु में सोंठ के साथ, शिशिर ऋतु में पीपर के साथ, वसंत ऋतु में शहत के साथ सेवन करो तो शत्रु के समान तुम्हारे सब रोग दूर हो जावें ॥ ८८ ॥

हरीतकी निरुक्ति ।

हरस्य भवने जाता हरिता च स्वभावतः ॥
हरते सर्वरोगाँश्च तेन ख्याता हरीतकी ॥ ८९ ॥

महादेव जी के भवन (कैलास) में प्रगट हुई और स्वाभाविक हरे रंग की है, सब रोगों को दूर लेती है इससे इस हर्र का हरीतकी नाम विख्यात है ॥ ८९ ॥

कटुकी योग ।

सशर्करामक्षमात्रं कटुकामुष्णवारिणा ॥
पीत्वा ज्वरं जयेज्जन्तुः कफपित्तसमुद्भवम् ॥ ९० ॥

एक अक्ष (तोलाभर) कुटका, तोला भर मिश्री सहित चूर्ण कर दोनों को मिलाय गरम पानी के साथ पाने से यह योग ज्वर को जीत लेता है, और कफ पित्त से उत्पन्न रोग दूर कर देता है ॥ ९० ॥

अजमोद ।

एक एव कुबेराख्यो हन्ति दोषं शतत्रयम् ॥
किं पुनस्त्रिभिरायुक्तः शुंठीसैन्धवरामठैः ॥ ९१ ॥
एक एव कुबेराख्यः पक्वो घृतगुडेन च ॥
कुर्यादिन्द्रियचैतन्यं हन्ति वातोदराणि च ॥ ९२ ॥

केवल अजमोद ही तीन सौ दोषों को हर लेता है और सोंठ सेंधा, हींग इन तीनों से युक्त हो तो फिर कहना ही क्या है ॥ ९१ ॥ तथा अकेला अजमोद ही घी गुड के साथ पका कर खाने से इन्द्रियों को चैतन्य करता है और पेट के वादीपन को दूर कर देता है ॥ ९२ ॥

शुंठी योग ।

गुडार्द्रकं वा गुडनागरं वा गुडाभया वा गुडपिप्पली वा ॥
कर्षाभिवृद्ध्या त्रिफलाप्रमाणं खादेन्नरः पक्षमथापि मासम् ॥

शोफप्रतिश्यायगरादिरोगान् सश्वासकासारुचिपीनसादीन् ॥
जीर्णज्वरार्शोग्रहणीविकारान् हन्यात्तथान्यत्कफवातरोगान् ९४

गुड, अदरख अथवा गुड सोंठ, वा गुड हर्र अथवा गुड पीपर, एक कर्ष (तोला भर) की वृद्धि से अर्थात् प्रतिदिन तोला तोला भर बढ़ा कर त्रिफला के प्रमाण एक पक्ष (१५ दिन) अथवा महिना भर मनुष्य खाय ॥ ९३ ॥ तो यह योग सूजन, प्रतिश्याय (श्लेष्मा अर्थात् जुकाम) और विष आदि रोग, श्वास (दमा) खाँसी, अरुचि तथा पीनस आदि, जीर्णज्वर, बवासीर, संग्रहणी इन रोगों को तथा कफवात रोगों को हरता है ॥ ९४ ॥

त्रिफला योग ।

एका हरीतकी योज्या द्वौ च योज्यौ बिभीतकौ ॥
चत्वार्यामलकान्येवं त्रिफलैषा प्रकीर्तिता ॥ ९५ ॥
त्रिफला मेहशोथघ्नी नाशयेद्विषमज्वरान् ॥
दीपनी पित्तश्लेष्मघ्नी कुष्टहंत्री रसायनी ॥
सर्पिर्मधुभ्यां खादेच्च नेत्ररोगविनाशिनी ॥ ९६ ॥

१ हर्र, २ बहेड़े, ४ आंवला ये मिला कर त्रिफला कही है ॥ ९५ ॥ त्रिफला प्रमेह और सूजन को दूर करने वाली, विषमज्वर को नाश करने वाली, जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाली, पित्त और कफकृत रोगों को दूर करने वाली, कुष्टरोग को हरनेवाली और रसायन है घी और शहत के साथ त्रिफला खाने से नेत्ररोग को विनाश करती है ॥ ९६ ॥

दशामृत हरीतकी ।

द्वौ भागौ च हरीतक्यश्चतुर्भागा बिभीतकाः ॥
अष्टौ चामलकीनां तु सिता चामलकी समा ॥ ९७ ॥
यष्टीकं पिप्पली चैव त्वक्क्षीरी चैकभागिका ॥
चूर्णयन्मधुसर्पिर्भ्यां रात्रौ खादेच्च यत्नतः ॥ ९८ ॥
तीमिरे पुष्करे काचे पटले चार्बुदेऽपि च ॥
नेत्ररोगेषु सर्वेषु दशामृतहरीतकी ॥ ९९ ॥

हर्र दो भाग, बहेड़े चार भाग, आँवला आठ भाग, आँवलों के बराबर मिश्री ॥ ९७ ॥ मुलहठी, पीपर, वंशलोचन एक एक भाग इन सबको लेकर कूट पीस चूर्ण बनावे और यत्नपूर्वक शहद और घी के साथ रात्रि समय खाय ॥ ९८ ॥ यह दशामृत हरीतकी तिमिर, फुली, काच, पटल इन नेत्र रोगों में और अर्बुदरोग तथा सब प्रकार के नेत्र रोगों में हितकारी है ॥ ९९ ॥

असगन्ध योग ।

अश्वगन्धादिभागः स्यान्नागरं चैकभागिकम् ॥
घृतभागाश्च चत्वारः खण्डं षड्भागसम्मतम् ॥१००॥
पुष्टिदं सन्धिवातघ्नं शीतलालोचितं नृणाम् ॥
कर्षं विचूर्णिता विश्वा द्विकर्षः खण्ड एव च ॥ १०१ ॥
घृतेन गुटिका ग्राह्या उदरार्तिनिवारणे ॥ १०२ ॥

असगन्ध एक भाग, सोंठ एक भाग, घी चार भाग, मिश्री छ भाग ॥१००॥ इनको लेकर चूर्ण बनाय बल के अनुसार प्रतिदिन शरद ऋतु में खाय तो यह योग मनुष्यों को पुष्टि देता है, सन्धियों की बादी को दूर करता है एवं सोंठ का चूर्ण एक कर्ष (तोला भर) मिश्री दो तोला बारीक पीसे ॥ १०१ ॥ और घी में मिला कर गोली बनावे और उदर विकार के निवारणार्थ यह गोली खाय ॥१०२॥

चोपचीनी ।

चोपचीनीं समुत्काल्य त्रिशाणं पिबतः सदा ॥
सर्ववातव्यथा यान्ति पथ्यानिर्वातसेविनः ॥ १०३ ॥

चोपचीनी तीन टंक (१२ माशा) भर लेकर औटावे और पीवे तो निरन्तर इसके पीने से सब प्रकार की वातव्यथायें दूर हो जाती हैं परन्तु पथ्य से रहे और वायु रहित स्थान में रहे ॥ १०३ ॥

गडाई हुई हलदी ।

भागद्वयं हरिद्राया विश्वायाश्चैकभागकः ॥
गुन्द्रोर्धांशो घृतभ्रष्टः खण्डा भागचतुर्मिता ॥१०४॥

घृतेनालोड्य तत्सर्वं धान्यराशौ विमध्यगम् ॥
चतुर्दशदिनं स्थाप्यं गुप्तं यत्नेन भक्षयेत् ॥ १०५ ॥
आम्लक्षारादिकं वर्ज्यं माघमासे त्विदं हितम् ॥
रक्तार्तिवातभग्नेषु शुभं चक्षुःप्रसादनम् ॥ १०६ ॥

दो भाग हलदी, एक भाग सोंठ, आधा भाग घी में भुना हुआ गोंद और चार भाग ॥ १०४ ॥ इनको घी में मसलकर धान की राशि में चौदह दिन पर्यन्त गाड़ देवे फिर निकाल कर यत्न से खाय ॥ १०५ ॥ खटाई और खारे पदार्थ आदि त्याग देवे माघ मास में यह हितकारी है, रक्तविकार और वातविकार में इसका सेवन अच्छा है, नेत्रों को यह हलदी निर्मल करके सुख देने वाली है ॥ १०६ ॥

जमाया हुआ जीरा ।

जीरकं भागमेकं स्यात्खण्डस्तद्द्विगुणः स्मृतः ॥
चतुर्गुणं घृतं तप्तं सर्वं सम्मील्य चोद्धरेत् ॥१०७॥
गोधूमपुंजमध्ये च चतुर्दश दिनं स्थितम् ॥
माघमासकृतं चैतद्भक्षितं चक्षुषोर्हितम् ॥१०८॥

जीरा एक भाग, उससे दूनी दो भाग मिश्री, तपाया हुआ घी चौगुना (चार भाग) लेके सबको मिला कर स्वच्छ पात्र में धरे ॥ १०७ ॥ और उसे बन्द कर गेहुओं की राशि में चौदह दिन तक गाड़ देवे फिर निकाल कर माघ मास में इसको खाय यह जीरा नेत्रों को हितकारी है ॥ १०८ ॥

घृत पान ।

शुद्धं गव्यं घृतं तप्तं मरिचैर्वा कणान्वितम् ॥
रसायनं सदा पेयं घृतपानं प्रशस्यते ॥१०९॥
रूक्षक्षतविषार्तानां वातपित्तविकारिणाम् ॥
हीनमेधास्मृतीनां च घृतपानं प्रशस्यते ॥११०॥

गाय के सुन्दर नवीन घी को तपा कर काली मिर्च अथवा पीपर मिला कर पीवे यह रसायन है इस घी का पीना सदैव हितकारी है ॥ १०९ ॥ दुबले

शरीर वाले, घाव वाले, विष पीड़ित और वात पित्त विकार वाले, बुद्धि हीन और स्मरण शक्ति से रहित मनुष्यों को घी का पीना अच्छा है ॥ ११० ॥

निम्ब पान।

रसो निम्बस्य मंजर्याः पीतश्चैत्रे हितावहः ॥
हन्ति रक्तविकारांश्च वातं पित्तं कफं तथा ॥१११॥

चैत के महीना में नीम की नवीन कोंपल का रस पीना हितकारी है, यह रुधिरविकार और वात पित्त तथा कफजनित रोगों को नाश कर देता है ॥ १११ ॥

खण्ड (मिश्री) पान।

द्वे पले शुद्धखण्डस्य गालयित्वा जले पिबेत् ॥
अंगसादं प्रशमयेद्रुधिरस्य विकारजम् ॥११२॥
कपित्थं च शताह्वा च धान्यकं खण्डसंयुतम् ॥
अथवा शर्करायुक्तं ग्रीष्मकाले सुखावहम् ॥११३॥

अच्छी मिश्री दो पल (आध पाव) लेके जल में घोल कर पीवे तो रुधिर विकार से उत्पन्न अंगसाद (शरीर का जकड़ना) दूर होता है ॥ ११२ ॥ और कैथा, सौंफ, धनिया इनको पीस कर इनमें मिश्री अथवा शक्कर मिला कर पीना ग्रीष्म काल (गरमी के समय) में सुख देने वाला है ॥ ११३ ॥

सामान्य चिकित्सा।

एरण्डतैलाण्डरुजप्रवृद्धौ सगोपयस्कं हितमेतदुक्तम् ॥
सराजवृक्षाऽमृतवल्लिवासा क्वाथं हितं मारुतशोणितेषु ॥११४॥

अंडी का तेल गाय के दूध के साथ पीना अंड वृद्धि रोग में हितकारी है, यह प्राचीन वैद्यों ने कहा है एवं अमिलतास, आँवला, गुर्च, अडूसा इनका काढ़ा वात और रुधिरविकार में हितकारी है ॥ ११४ ॥

मूत्रेण वा दुग्धसमन्वितं वा सर्वोदरेषु श्वयथौ च शस्तम् ॥
पक्वाशयस्थे पवने प्रयोज्यमेरण्डतैलेन विरेचनार्थम् ॥११५॥

उन्मादिनामुन्मदमानसानामपस्मृतौ भूतहतात्मनां हि ॥
ब्राह्मीरसः स्यात्सवचः सकुष्ठः सशंखपुष्पः सधुत्तूरचूर्णः ११६
अक्ष्यामयेषु त्रिफला गुडूची वातासृजे गोमथिता ग्रहण्याम् ॥
कुष्ठे सुसेव्यं खदिरस्य सारं सर्वेषु रोगेषु शिलाह्वयं च ॥११७॥

गोमूत्र के संग अंडी का तेल पीवे अथवा गाय के दूध के संग अंडी का तेल पीवे तो सब प्रकार के उदर रोगों में और सूजन में तेल पीना अच्छा है, पाचन स्थान में स्थित वातविकार में दस्त होने के निमित्त अंडी का तेल पिलाना चाहिए ॥ ११५ ॥ पागलपन, हौलदिल, मृगी, भूत से पीड़ित इन रोगों में ब्राह्मी का रस, वच, कूट, शंखाहुली और धतूरे के बीज का चूरन देवे ॥ ११६ ॥ नेत्रों के विकार में त्रिफला, वातरक्त में गुर्च, संग्रहणी में मठा, कुष्ठरोग में खैरसार, और सब रोगों में शिलाजीत सेवन करना चाहिये ॥ ११७ ॥

दम्भ (दागना)

धनुर्वाते मृगीवाते उन्मादे चित्तविभ्रमे ॥
निश्चैतन्ये सन्निपाते दम्भस्तत्र प्रदापयेत् ॥ ११८ ॥
भ्रुवा शंखे च पादेषु कृकाटीमूलरन्ध्रयोः॥
नेत्ररोगे ह्यपस्मारे भ्रुवो शंखो च दम्भयेत् ॥ ११९ ॥
कामले पांडुरोगे च कृकाट्यां च प्रकोष्ठके ॥
औदरेषु च सर्वेषु दम्भयेदुदरोपरि ॥
हृदये यस्य पीडा स्याद्दम्भयेद्हृदयोपरि ॥ १२० ॥

धनुर्वात, मृगी, उन्माद, चित्तभ्रम, सन्निपात इतने रोग होने पर दाग देवे ॥ ११८ ॥ दोनों भौंह, कनपटी, पाँव, ठोडी, मत्था गुदा इन अंगों में दागना चाहिए सो इस प्रकार दागे कि नेत्रों के रोग में और मृगी रोग में दोना भौंह पर दागे और कनपटी पर दागे ॥ ११९ ॥ कामला और पांडु रोग में ठोडी और उदर पर दागे और सब प्रकार के उदर रोगों में उदर (पेट) पर दागे तथा जिसके हृदय में पीड़ा हो उसके हृदय पर दागे ॥ १२० ॥

विष चिकित्सा ॥

शिरीषपुष्पं सकरंजबीजं काश्मीरजं कुष्टमनःशिले च ॥

टीकाकार प्रार्थना ।

भूमिनागनिधीन्दुचब्दे आश्विनस्यासिते दले ॥
त्रयोदश्यां भृगोर्वारे टीका सम्पूर्णतामगात् ॥ १ ॥
टीका विलिखिता चेयं श्रीसीतारामशर्मणा ॥
अकुत्राप्यशुद्धं चेत्क्षन्तव्यं विबुधैर्नरैः ॥ २ ॥

विक्रमीय संवत् १९८१ आश्विन कृष्णपक्ष त्रयोदशी शुक्रवार के दिन यह भाषाटीका सम्पूर्ण हुई ॥ १ ॥ यह भाषाटीका श्री सीताराम शर्मा 'लक्ष्मीपुर निवासी' ने लिखी इसमें कही भी यदि अशुद्धता रह गई हो तो पंडित जनों को क्षमा करनी उचित है, ' दूसरी आवृत्ति में वह अशुद्धता ठीक कर दी जायगी' यह हमारी प्रार्थना है ॥ २ ॥

इति योगचिन्तामणिः समाप्तः ॥

शुभमिति ॥